पारिस्थितिक विमर्श

Course Code: M23HD01DE

Discipline Specific Elective Course
Postgraduate Programme in
Hindi Language and Literature
Self Learning Material

SGOU

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University for Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

Vision

To increase access of potential learners of all categories to higher education, research and training, and ensure equity through delivery of high quality processes and outcomes fostering inclusive educational empowerment for social advancement.

Mission

To be benchmarked as a model for conservation and dissemination of knowledge and skill on blended and virtual mode in education, training and research for normal, continuing, and adult learners.

Pathway

Access and Quality define Equity.

पारिस्थितिक विमर्श

Course Code: M23HD01DE

Semester-III

Discipline Specific Elective Course
MA Hindi Language and Literature
Self Learning Material

(with Model Question Paper Sets)

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University for Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

पारिस्थितिक विमर्श

Course Code: M23HD01DE
Semester- III
Discipline Specific Elective Course
MA Hindi Language and Literature
for PG Programmes

Academic Committee

Dr. Jayachandran R.
Dr. Pramod Kovvaprath
Dr. P.G. Sasikala
Dr. Jayakrishnan J.
Dr. R. Sethunath
Dr. Vijayakumar B.
Dr. B. Ashok

Development of Content

Dr Sandhya Menon

Review and Edit

Dr. Anagha A.S.

Linguistics

Dr. Reshma P.P.

Scrutiny

Dr. Sudha T.
Dr. Indu G. Das
Dr. Krishna Preethy A.R.
Christina Sherin Rose K.J.

Design Control

Azeem Babu T.A.

Cover Design

Jobin J.

Co-ordination

Director, MDDC :
Dr. I.G. Shibi
Asst. Director, MDDC :
Dr. Sajeevkumar G.
Coordinator, Development:
Dr. Anfal M.
Coordinator, Distribution:
Dr. Sanitha K.K.

Scan this QR Code for reading the SLM on a digital device.

Edition:
January 2025

Copyright:
© Sreenarayanaguru Open

ISBN 978-81-985080-2-7

All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from Sreenarayanaguru Open University. Printed and published on behalf of Sreenarayanaguru Open University by Registrar, SGOU, Kollam.

www.sgou.ac.m

Visit and Subscribe our Social Media Platforms

MESSAGE FROM VICE CHANCELLOR

Dear learner,

I extend my heartfelt greetings and profound enthusiasm as I warmly welcome you to Sreenarayanaguru Open University. Established in September 2020 as a state-led endeavour to promote higher education through open and distance learning modes, our institution was shaped by the guiding principle that access and quality are the cornerstones of equity. We have firmly resolved to uphold the highest standards of education, setting the benchmark and charting the course.

The courses offered by the Sreenarayanaguru Open University aim to strike a quality balance, ensuring students are equipped for both personal growth and professional excellence. The University embraces the widely acclaimed "blended format," a practical framework that harmoniously integrates Self-Learning Materials, Classroom Counseling, and Virtual modes, fostering a dynamic and enriching experience for both learners and instructors.

The university aims to offer you an engaging and thought-provoking educational journey. Major universities across the country typically employ a format that serves as the foundation for the PG programme in Hindi Language and Literature. Given Hindi's status as a widely spoken language throughout India, its pedagogy necessitates a particular focus on language skills and comprehension. To address this, the University has implemented an integrated curriculum that bridges linguistic and literary elements. The learner's priorities determine the endorsed proportion of these elements. Both the Self Learning Materials and virtual modules are designed to fulfil these requirements.

Rest assured, the university's student support services will be at your disposal throughout your academic journey, readily available to address any concerns or grievances you may encounter. We encourage you to reach out to us freely regarding any matter about your academic programme. It is our sincere wish that you achieve the utmost success.

Regards,
Dr. Jagathy Raj V. P.

01-05-2025

Contents

BLOCK 01 पारिस्थितिक विमर्श..... 01

इकाई 1: पारिस्थितिकवाद, पारिस्थितिक सौंदर्यशास्त्र एक विवेचन, हरित क्रांति, इको क्रिटिसिज़्म - परिभाषा..... 02

इकाई 2: द्वितीय विश्व युद्ध और पारिस्थितिक बोध का उदय, भारत में पारिस्थितिक आन्दोलन की पृष्ठभूमि..... 13

इकाई 3: पारिस्थितिक समस्याएँ - प्रदूषण - प्रदूषण के विभिन्न प्रकार, कारण और निवारण - जल, जंगल ज़मीन से जुड़ी संवेदनाएँ..... 22

इकाई 4: भारत के प्रमुख पारिस्थितिक आन्दोलन..... 34

BLOCK 02 पारिस्थितिक दर्शन की विभिन्न शाखाएँ..... 50

इकाई 1: पारिस्थितिक दर्शन..... 51

इकाई 2: गहन पारिस्थितिवाद (Deep Ecology)..... 58

इकाई 3: पारिस्थितिक साम्यवाद (Eco Marxism)..... 64

इकाई 4: पारिस्थितिक स्त्रीवाद - (Eco Feminism).....71

BLOCK 03 साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन..... 80

इकाई 1: साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन का उद्भव एवं विकास..... 81

इकाई 2: वीरेंद्र जैन और उनका उपन्यास 'डूब'..... 97

इकाई 3: समकालीन हिन्दी उपन्यास और पारिस्थितिकीय संकट-रोहिणी अग्रवाल (लेख) 108

इकाई 4: समकालीन हिंदी कहानियों में पारिस्थितिकी का स्वरूप एवं प्रमुख कहानीकार 136

BLOCK 04 समकालीन हिन्दी कविता में पारिस्थितिक बोध..... 156

इकाई 1 समकालीन हिंदी कविता और पर्यावरण चिंतन..... 157

इकाई 2 गंगा को प्यार - अरुण कमल..... 169

इकाई 3 पानी की प्रार्थना - केदारनाथ सिंह..... 177

इकाई 4 प्यासा कुआँ - ज्ञानेन्द्रपति..... 185

इकाई 5: उतनी दूर मत ब्याहना बाबा! - निर्मला पुतुल..... 191

इकाई 6: विस्थापन - स्वप्निल श्रीवास्तव..... 201

इकाई 7: धरती - नागार्जुन..... 207

MODEL QUESTION PAPER SETS..... 215

BLOCK 01

पारिस्थितिक विमर्श

Block Content

Unit 1 : पारिस्थितिकवाद, पारिस्थितिक सौंदर्यशास्त्र एक विवेचन, हरित क्रांति इको क्रिटिसिज़्म- परिभाषा

Unit 2 : द्वितीय विश्व युद्ध और पारिस्थितिक बोध का उदय, भारत में पारिस्थितिक आन्दोलन की पृष्ठभूमि

Unit 3 : पारिस्थितिक समस्याएँ-प्रदूषण-प्रदूषण के विभिन्न प्रकार, कारण और निवारण-जल, जंगल ज़मीन से जुड़ी संवेदनाएँ

Unit 4 : भारत में हरित क्रांति भारत के प्रमुख पारिस्थितिक आन्दोलन-चिपको आंदोलन, मूकघाटी आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, प्लाचिमडा आंदोलन, बिशनोई आंदोलन, तेहरी डाम आंदोलन

इकाई 1

पारिस्थितिकवाद, पारिस्थितिक सौंदर्यशास्त्र एक विवेचन, हरित क्रांति, इको क्रिटिसिज़्म - परिभाषा

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- पारिस्थितिकवाद से परिचय होता है
- पारिस्थितिक सौंदर्यशास्त्र के बारे में जानता है
- इको क्रिटिसिज़्म की अवधारणा समझता है
- साहित्य में पारिस्थितिकी-आलोचना के बारे में जानता है

Background / पृष्ठभूमि

पर्यावरण का अध्ययन मानव सभ्यता के साथ जुड़ा हुआ है। जिस समाज ने अपने पर्यावरण को ठीक ढंग से समझ कर उसके सहयोग से प्रगति का मार्ग बनाने का प्रयास किया वह सभ्यता की दौड़ में आगे निकल गया। पर्यावरण का सही बोध ना होने के कारण अनेक सभ्यताएँ हमेशा के लिए नष्ट हो गईं। कहा जाता है कि बाढ़ की विभीषिका से हड़प्पा कालीन सभ्यता को सबसे अधिक नुकसान पहुँचा था। इसी प्रकार बेबीलॉन, सिंधु नदी घाटी सभ्यताओं को बाढ़ से सबसे अधिक हानि पहुँची थी। सभ्यता के विकास के साथ पर्यावरण का ज्ञान बदलता गया और आज मनुष्य प्रकृति विजय की भावना से प्रेरित होने लगा है। पर्यावरण की अवमानना से उत्पन्न कठिनाइयों के कारण भी इसे समझने की आवश्यकता बढ़ती गई। आज विश्व के लगभग सभी देश अपने पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ाने में व्यस्त हैं। भारत में हज़ारों साल पूर्व पर्यावरण के प्रति जन-जन में जागरूकता को बनाए रखने के लिए पर्यावरण के तत्वों को देवी-देवता का रूप दिया गया था। जैसे जीवों में ईश्वर का निवास होता है- तरु देवो भव, वरुण देवता, अग्नि देवता, वायु देवता, धरती माता आदि। यह पर्यावरण प्रेम की परिकल्पना ही थी। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण का अध्ययन भूगोल में दो रूपों में किया जाता है। पहला पर्यावरण के तत्वों को वर्गीकृत करके स्थलमंडल, जल मंडल, वायुमंडल, और जैव मंडल के रूप में अध्ययन किया जाता है। दूसरा पक्ष पर्यावरण एवं मनुष्य के अंतर संबंधों के विश्लेषण से संबंधित है। यह पर्यावरण के अध्ययन का गुणात्मक पक्ष है। पर्यावरण और मानव सहित अन्य जीवों का अध्ययन पारिस्थितिकी के अंतर्गत किया जाने लगा है। आज पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में अनेक शाखाओं के विज्ञानी अपने अध्ययन के विस्तार में जुटे हैं। आज प्राकृतिक प्रकोप और पर्यावरण अवमानना की समस्याएँ अधिक विकराल रूप धारण करने लगीं हैं जिसके कारण पर्यावरण अध्ययन की महत्ता बढ़ गई है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

पारिस्थितिकवाद, पारिस्थितिक सौंदर्यशास्त्र, इको क्रिटिसिज़्म, पारिस्थितिकी तंत्र, जैव वैविध्यता, विभीषिका

Discussion / चर्चा

- जैव-विविधता इस ग्रह को जीवन से भरपूर और अद्वितीय बनाती है

यह धरती हमारे सौरमंडल का सबसे सुंदर और अद्वितीय ग्रह है। इसे विशिष्ट बनाती है इसकी पर्यावरणीय संरचना, यहाँ की अनुकूल जलवायु और अद्भुत जैव-जगत। यहाँ का जैव-जगत इतना विविध है कि इसमें वनस्पतियों के लाखों प्रकार, मत्स्यों की अनगिनत प्रजातियाँ, स्तनधारी जीवों की विविधता, पक्षियों की असंख्य प्रजातियाँ और कीट-पतंगों तथा तितलियों की अनगिनत किस्में शामिल हैं। वास्तव में, जैव-विविधता किसी भी पारिस्थितिकी तंत्र या पूरे ग्रह पर जीवन के रूपों की विविधता का परिणाम होती है, जो इस ग्रह को जीवन से भरपूर और अद्वितीय बनाती है।

- जीवों और उनके पर्यावरण के बीच संबंधों के अध्ययन को पारिस्थितिकी कहते हैं

प्रत्येक जीव न केवल अपने पर्यावरण से प्रभावित होता है, बल्कि अपने कार्यों और गतिविधियों से उसे प्रभावित भी करता है। हमारी धरती पर विभिन्न प्रकार के जीव-जंतु मौजूद हैं। हर जीव अपने रूप, गुण और व्यवहार में एक-दूसरे से अलग है, फिर भी पर्यावरण सभी को ऊर्जा प्रदान करके और पदार्थों के आदान-प्रदान के ज़रिए एक-दूसरे से जोड़ता है। हर जीव का अपने पर्यावरण के भौतिक और जैविक घटकों के साथ एक विशेष संबंध होता है। इसे सरल शब्दों में समझें, तो जीवों और उनके पर्यावरण के बीच संबंधों के अध्ययन को पारिस्थितिकी कहा जाता है।

- पारिस्थितिकी शब्द का पहला प्रयोग एरनेस्ट हैकल ने 1869 में किया

पारिस्थितिकी शब्द का पहली बार एरनेस्ट हैकल ने वर्ष 1869 में प्रयोग किया था। पारिस्थितिकी वह अध्ययन है जो हमें समझने में सहायता करता है कि विभिन्न जीव किसी पर्यावरण के किस तरह से सहभागी हैं तथा एक दूसरे के साथ भी उनका किस प्रकार का संयोजन है। इस तरह इन इकाइयों के मध्य लगातार पदार्थ तथा ऊर्जा का विनिमय होता रहता है। वह अपने पर्यावरण के जैविक और भौतिक ही नहीं अजैविक घटकों के साथ भी किस तरह की निर्भरता रखते हैं- इन सभी इकाइयों का सम्मिश्रण ही पारिस्थितिक तंत्र है। पारिस्थितिक तंत्र अर्थात इकोसिस्टम को कई अन्य नाम से भी जाना जाता है। अब सर्वमान्य शब्द पारिस्थितिक तंत्र अर्थात इकोसिस्टम ही है। स्पष्ट है कि प्रत्येक जीव किसी दूसरे जीव से किसी न किसी तरह जुड़ा हुआ है। प्रत्येक जीव अपने भोजन और रहने की आवश्यकताओं को देखते हुए अन्य जीव के निकट अथवा संयोजन प्राप्त करते हैं और एक तरह का संरचनात्मक तंत्र निर्मित करते हैं। लेकिन आज की सच्चाई यह है कि अनावश्यक मानवीय हस्तक्षेप आज के समय में पर्यावरण तथा पारिस्थितिक तंत्र के लिए ख़तरा बनते जा रहे हैं।

मनुष्य और प्रकृति के बीच आत्मीयता है। लेकिन आधुनिकता के प्रवेश से प्रकृति और मनुष्य के बीच की यह आत्मीयता टूटने लगी है। मनुष्य प्रकृति से बहुत दूर जाने लगा। विकास की ओर अग्रसर होने वाला मनुष्य प्रकृति पर प्रहार करने और आक्रमण करने लगा। इसमें कोई संदेह नहीं की औद्योगीकरण से विकास संभव है, पर इसके नाम पर वनों का नाश करना, पेड़ों को काटना, जानवरों को मारना, बड़े-बड़े कारखाने का निर्माण करना, उससे कई प्रकार के प्रदूषण उत्पन्न करना, नदियों को विषलिप्त करना, अनुचित शोषण से उनका सूख जाना, वायु को प्रदूषित करना, भौम संतुलन को बिगाड़ना आदि सचमुच विकास नहीं बल्कि मनुष्य का अपने लिए मकबरा तैयार करना है। इससे मानव जीवन बहुत ही ख़तरनाक स्थिति का सामना करने जा रहा है। साहित्यकार सहज ही सूक्ष्म दृष्टा होते हैं वह इन प्रतिकूल अवस्थाओं को जल्दी ही भाँप लेते हैं और अपनी सृजनात्मकता के ज़रिए उसका प्रतिरोध ज़ाहिर करते हैं। साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता उसका प्रतिरोध है, अर्थात् रचनाकार की जागरूकता। यह जागरूकता, जो प्रकृति और मनुष्य के प्रति होती है, साहित्य की पारिस्थितिकी का आधार बनती है।

- सचमुच विकास के नाम पर मनुष्य अपने लिए मकबरा तैयार कर रहे हैं।

1.1 पारिस्थितिक सौंदर्यशास्त्र

शांतिसार शीतल प्रसार यह छाया धन्य!
प्रीति सा पसारे इसे कैसी हरी काया है।
हे नर ! तू प्यारा इस तरु का स्वरूप देख,
देख फिर घोर रूप तू ने जो कमाया है। (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल-कविता क्या है)

कला मनुष्य के अचेतन पर गहरा प्रभाव डालती है, और यह अचेतन मनुष्य के चेतन को प्रज्वलित बनाए रखता है। इसलिए, पर्यावरण संरक्षण के लिए किए जा रहे भौतिक प्रयासों के समान ही साहित्य के माध्यम से प्रतिबिंबित पारिस्थितिक संवेदनाएँ और उनका अध्ययन भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यह मनुष्य मन की पुनर्सृष्टि के लिए बहुत सहायक सिद्ध होते हैं। आधुनिकता औद्योगिक संस्कृति का सौंदर्य शास्त्र है। आधुनिकता ने साहित्य से ज़िंदगी की समग्रता को अलग कर दिया। पश्चिमी नवोत्थान, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास और नूतन आर्थिक नीतियों से कई प्रकार की हानियाँ भी हुईं। इनमें से सबसे प्रमुख हैं प्रकृति से हमारा अलगाव।

- आधुनिकता औद्योगिक संस्कृति का सौंदर्य शास्त्र

औद्योगिक उपजों की निर्मिति के लिए मनुष्य प्रकृति का शोषण करने लगा। अनुष्ठान, मिथक, चित्रकला, मूर्ति कला, दृश्य कला, लोक कथा, लोकगीत आदि से संश्लिष्ट संस्कृति प्रकृति जन्य है। मनुष्य और आधुनिक औद्योगिक संस्कार प्रकृति माँ को तहस-नहस करते हुए विकास प्राप्त करने लगा। इस प्रकार प्रकृति और संस्कृति एक द्वैत अवस्था में आ गईं। मनुष्य और प्रकृति के बीच का संबंध अटूट है।

- मनुष्य और प्रकृति का अटूट संबंध

सचमुच, मनुष्य स्वयं प्रकृति का ही अभिन्न हिस्सा है, परंतु जो मनुष्य इस सत्य को भूल जाते हैं, उनके लिए प्रकृति केवल मनोरंजन का साधन बनकर रह जाती है। जो लोग केवल दृश्य अनुभवों के माध्यम से प्रकृति का आनंद लेते हैं, वे स्पर्श और गंध के

- उपभोगवादी संस्कृति ने आधुनिक पारिस्थितिक संकट को जन्म दिया है।

माध्यम से उससे संवाद करना भूल गए हैं। परिणामस्वरूप, उनके हृदय से प्रकृति धीरे-धीरे दूर होती चली गई। हमारे समाज में पीढ़ियों से चली आ रही कथाएँ, पारंपरिक ज्ञान और लोक जीवन का अनुभव भी धीरे-धीरे विस्मृत होता जा रहा है। उपभोगवादी संस्कृति का मूल स्वभाव है - किसी वस्तु का प्रयोग करना, उसे फेंक देना और फिर उसे भूल जाना। इसी प्रवृत्ति ने आधुनिक पारिस्थितिक संकट को जन्म दिया है।

1.1.1 जैव वैविध्यता इस भूमि का वास्तविक सौष्ठव है

प्रकृति रत्नगर्भा है। प्रकृति के विभिन्न संसाधनों का उपयोग कर समस्त जीव राशि अपना जीवन आगे बढ़ाती है। इस जगत के परमाणु से लेकर सब वस्तुएँ आपस में सुसंबंधित है। एक श्रृंखला की कड़ियों की भांति सब इस चक्रिक गति से आबद्ध हैं। प्रकृति के यह मजबूत संबंध मानव के विभिन्न कार्यकलापों से बिगड़ जाते हैं। इसका कारण भौतिक सुख - सुविधाओं को जुटाने की लोभवृत्ति है। इसी अंधी दौड़ में मानव परिस्थिति की विभिन्न इकाइयों को ज़ख्मी कर देता है। वनों की कटाई, खनन या उत्खनन प्रदूषण आदि के माध्यम से मानव प्रकृति के जैविक एवं अजैविक पदार्थों को हानि पहुँचा रहा है। औद्योगीकरण के बढ़ने से प्राकृतिक संसाधनों के वैविध्य का सत्यानाश हो रहा है। यदि एक बार जैव वैविध्य का नाश हो गया तो उसे फिर से पाने के लिए लाखों साल लग जाएँगो। जो सुविधा, जो सौजन्य, जो वरदान, हम प्रकृति से ले रहे हैं वह हज़ारों वर्षों की कमाई है। उसको ध्वस्त करने में पल भर का समय काफ़ी है। जैव वैविध्य के अभाव में समस्त मानव की उपलब्धियाँ रेत का ढेर मात्र रह जाएँगे। पारिस्थितिकी तंत्र के नाश से जैव वैविध्य का नाश अवश्य हो जाएगा। जैव विविधता मानव जीवन की बुनियाद है जिसका बचाव मानव की वर्तमान आवश्यकता है।

- औद्योगीकरण के बढ़ने से प्राकृतिक संसाधनों के वैविध्य का सत्यानाश हो रहा है

पेट्रोल, डीज़ल आदि के जलने से वायुमंडल में कार्बन की मात्रा निरंतर बढ़ रही है, और बाँधों के निर्माण के कारण विस्तृत भूभाग की उपजाऊ मिट्टी नष्ट हो जाती है। प्रकृति का जैव-वैविध्य नष्ट होता जा रहा है। प्रकृति हमारी सबसे कीमती संपत्ति है। यदि हम इसका संरक्षण करेंगे तो हम न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य की जरूरतों को भी पूरा कर सकेंगे। पर्यावरण विध्वंस का प्रत्यक्ष प्रभाव समाज के निम्न स्तर के लोगों पर पड़ता है। मानव की सभ्यता एवं संस्कृति के भव्य भवन का आधार यही जैव वैविध्य है। यदि एक बार यह अमूल्य संसाधन नष्ट हो जाएँगे तो उन्हें पुनः प्राप्त करना असंभव हो जाएगा।

- जैव वैविध्य मानव की सभ्यता एवं संस्कृति के भव्य भवन का आधार है

जैव विविधता के कारण वातावरण का संतुलन भी बना रहता है। वातावरण में उपस्थित विभिन्न गैसों के बीच संतुलन जैव विविधता के कारण ही होता है। जलवायु परिवर्तन का असर सीधे ही जैव विविधता पर होता है। इसका दूसरा पक्ष यह है कि जैव विविधता के नष्ट होने से भी वातावरण में बदलाव हो जाते हैं। जिस बेदर्दी से हमने अपने वृक्षों को समाप्त किया है उसने हमारे वातावरण में नकारात्मक बदलाव के बीज बो दिए हैं। हानिकारक किरणों से बचाने वाली ओज़ोन परत में छिद्र होने से लेकर आज जो ग्लोबल वार्मिंग के ख़तरे का हम सामना कर रहे हैं, उसके पीछे का प्रमुख कारण अपने पर्यावरण का भली प्रकार संरक्षण न कर पाना ही है।

- पर्यावरण का भली प्रकार संरक्षण न करने के कारण हानिकारक किरणों से बचाने वाली ओज़ोन परत में छिद्र

- मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक तुष्टि के लिए जैव विविधता अनिवार्य है

एक प्रदेश का जैव वैविध्य उस प्रदेश के सस्य, जानवर एवं सूक्ष्म जीवियों की विविध जातियों का समूह है। इसकी रक्षा उस प्रदेश की मिट्टी की उर्वरता, जल की लभ्यता, जलवायु आदि पर निर्भर है। इन्हें कृत्रिम रूप से बनाना मुश्किल है इसलिए जैव वैविध्यों की स्थिति मनुष्य सहित सभी जीव - जन्तुओं के लिए अनिवार्य है। संसार के अधिकांश लोग दवा के लिए सस्यों का उपयोग करते हैं। मनुष्य के मनोरंजन, आचार अनुष्ठान एवं आराधना आदि में उल्लास प्रदान करने में इस जैव विविधता की बड़ी भूमिका है। जैव विविधता फुलवारियों एवं पर्यटन केन्द्रों को भी सुंदर बना देती है। इसका तात्पर्य यह है कि मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक तुष्टि के लिए जैव विविधता अनिवार्य है।

- हवा, जल, मिट्टी जीवन के आधारभूत तत्व है

जैव विविधता जीवन की सहजता के लिए ज़रूरी है। वनस्पति, खाद्यान्न ओर जीव जंतुओं की अनुपस्थिति से कितना नुकसान हो सकता है। वैज्ञानिक भी इसका आकलन नहीं कर सकते। मिट्टी में पाए जाने वाला केंचुआ दिखने में साधारण है पर प्रकृति संतुलन में इसका भी बहुत बड़ा योगदान है। एक केंचुआ 6 माह की अवधि में 20 पौंड पोषक कार्बनिक पदार्थ तैयार करके मिट्टी में मिला देता है। यह खेत की ज़मीन को पोला व भुरभुरा भी बनाता है। इनकी जातियाँ यदि नष्ट ना हों तो वह मिट्टी में 10 वर्ष में 1 इंच सतह को बढ़ा सकते हैं जो अत्यंत उपजाऊ होती है। केंचुए यदि नष्ट हो जाएँ तो यह कार्य करने में प्रकृति को 500 वर्ष लग जाएँगे। धरती अनगिनत अमूल्य धरोहर संजोए हुए जीवन को जीवंत बनाए हुए हैं। यह प्राकृतिक और जीवन क्रम के लिए ज़रूरी है। हवा, जल, मिट्टी जीवन के आधारभूत तत्व है। प्राकृतिक रूप से इनका सामंजस्य सतत जीवन का द्योतक है। जैव विविधता कई - कई वर्षों के विकास का परिणाम है। धरती की जैव विविधता को वसुधैव कुटुंबकम के सिद्धांत पर ही संरक्षित किया जा सकता है। जब तक प्रकृति, जीव जंतु और मनुष्य के बीच सामंजस्य कायम रहेगा तब तक विविधता के रंग बने रहेंगे।

1.1.2 पारिस्थितिकी आलोचना

- मानवीय गतिविधियाँ पर्यावरण को प्रभावित करती हैं

पारिस्थितिकी-आलोचना साहित्य में प्रकृति को कैसे चित्रित किया जाता है, इसका विश्लेषण करके पर्यावरणीय मुद्दों के बारे में जागरूकता लाने का प्रयास करती है। यह इस बात पर विचार करती है कि मानवीय गतिविधियाँ पर्यावरण को कैसे प्रभावित करती हैं और प्रकृति संस्कृति को कैसे प्रभावित करती है। इकोक्रिटिसिज़्म की आधिकारिक तौर पर शुरुआत दो मौलिक रचनाओं के प्रकाशन से हुई। दोनों 1990 के दशक के मध्य में प्रकाशित हुए - द इकोक्रिटिसिज्म रीडर - चेरिल ग्लोटफेल्टी और हेरोल्ड फ्रॉम द्वारा संपादित और 'द एनवायरनमेंटल इमेजिनेशन'- लॉरेंस बुएल द्वारा।

- पारिस्थितिकी आलोचना एक व्यापक दृष्टिकोण है

पारिस्थितिकी आलोचना साहित्य में मनुष्य और प्रकृति के बीच संबंधों का अध्ययन करती है। यह पर्यावरण, सांस्कृतिक मुद्दों और प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण को समझने और विश्लेषित करने पर केंद्रित है। पारिस्थितिकी आलोचना में मुख्य लक्ष्यों में से एक यह अध्ययन करना है कि समाज में व्यक्ति प्रकृति और पारिस्थितिक पहलुओं के संबंध में कैसे व्यवहार करते हैं और प्रतिक्रिया करते हैं। पर्यावरण विनाश और बढ़ती

प्रौद्योगिकी पर अधिक सामाजिक ज़ोर के कारण हाल के वर्षों में आलोचना के इस रूप ने बहुत ध्यान आकर्षित किया है। इसलिए यह साहित्यिक ग्रंथों का विश्लेषण और व्याख्या करने का एक नया तरीका है, जो साहित्यिक और सैद्धांतिक अध्ययन के क्षेत्र में नए आयाम लाता है। पारिस्थितिकी आलोचना एक व्यापक दृष्टिकोण है जिसे कई अन्य पदनामों से जाना जाता है, जिसमें 'हरित (सांस्कृतिक) अध्ययन', 'पारिस्थितिकी विज्ञान' और 'पर्यावरण साहित्यिक आलोचना' शामिल हैं।

साहित्यिक और सांस्कृतिक अध्ययन के प्रारंभिक सिद्धांत मुख्यतः वर्ग, जाति, लिंग, और क्षेत्र जैसे मुद्दों पर केंद्रित थे, जो आलोचनात्मक विश्लेषण के प्रमुख मानदंड और 'विषय' के रूप में स्थापित किए गए थे। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में मानवता को एक नई चुनौती का सामना करना पड़ा- पारिस्थितिक आपदा। आज मानव जाति जिन प्रमुख पर्यावरणीय समस्याओं से जूझ रही है, वे हैं: परमाणु युद्ध का खतरा, प्राकृतिक संसाधनों की कमी, जनसंख्या विस्फोट, शोषक तकनीकों का बढ़ता इस्तेमाल, अंतरिक्ष में कचरा फैलाना, प्रदूषण और प्रजातियों का विलुप्त होना। ऐसे संदर्भ में, साहित्यिक और सांस्कृतिक सिद्धांत ने इस मुद्दे को अकादमिक विमर्श के एक हिस्से के रूप में संबोधित करना शुरू कर दिया है। पर्यावरण इतिहासकारों का काम भी पथप्रदर्शक रहा है। रामचंद्र गुहा निस्संदेह आज भारत में लिखने वाले सबसे महत्वपूर्ण पर्यावरण इतिहासकार हैं।

- बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में उभरी नई चुनौती - पारिस्थितिक आपदा

श्री. रामचंद्र गुहा

पर्यावरणवाद के विभिन्न रूप विकसित हुए, जिनमें गहन पारिस्थितिकी और पारिस्थितिकी नारीवाद प्रमुख हैं। इन विचारों ने 'विकास' और 'आधुनिकता' की परंपरागत धारणाओं को चुनौती दी। इनका तर्क है कि पश्चिमी विज्ञान, दर्शन और राजनीति की अवधारणाएँ अक्सर 'मानव-केंद्रित' और 'पुरुष-केंद्रित' होती हैं। प्रौद्योगिकी, चिकित्सा विज्ञान, पशु परीक्षण, कॉस्मेटिक और फैशन उद्योग सभी पर्यावरणविदों की जाँच के केंद्र में रहे हैं। उदाहरण के लिए, गहन पारिस्थितिकी ने 'जैव-केंद्रित' दृष्टिकोण पर ज़ोर दिया। पारिस्थितिकी-आलोचना उस नई चेतना का परिणाम है जो यह समझने में सहायक है कि यदि हम पर्याप्त सतर्क नहीं रहे, तो शीघ्र ही प्रकृति पर चर्चा करने के लिए कुछ भी सुरक्षित नहीं रहेगा। पारिस्थितिकी-आलोचक इस प्रकार के प्रश्न पूछते हैं:

- पश्चिमी विज्ञान, दर्शन और राजनीति की अवधारणाएँ अक्सर 'मानव-केंद्रित' और 'पुरुष-केंद्रित' होती हैं।

1. उपन्यास/कविता/नाटक में प्रकृति को किस तरह से दर्शाया गया है?

2. उपन्यास की संरचना में भौतिक और भौगोलिक पृष्ठभूमि की क्या भूमिका होती है?

3. भूमि और अन्य गैर-मानव जीवन रूपों के प्रति शैक्षणिक या रचनात्मक अभ्यास और वास्तविक राजनीतिक, सामाजिक-सांस्कृतिक और नैतिक व्यवहार के बीच क्या संबंध है?

पारिस्थितिकी-आलोचना की आवश्यक मान्यताओं, विचारों और तरीकों को निम्नानुसार संक्षेपित किया जा सकता है-

1. पारिस्थितिकी-आलोचना का मानना है कि मानव संस्कृति भौतिक दुनिया से संबंधित है।

2. पारिस्थितिकी-आलोचना मानती है कि सभी जीवन रूप एक-दूसरे से जुड़े हैं। यह 'विश्व' की अवधारणा को बढ़ाकर पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को शामिल करती है।

3. इसके अलावा, प्रकृति और संस्कृति के बीच एक निश्चित संबंध है।

4. जोसेफ मीकर ने अपनी प्रारंभिक रचना द कॉमेडी ऑफ सर्वाइवलः स्टडीज इन लिटरेरी इकोलॉजी (1972) में 'साहित्यिक पारिस्थितिकी' शब्द का उपयोग 'साहित्यिक कृतियों में प्रकट होने वाले जैविक विषयों और संबंधों के अध्ययन' के संदर्भ में किया था। यह अध्ययन इस बात का भी प्रयास है कि मानव प्रजाति की पारिस्थितिकी में साहित्य ने क्या भूमिकाएँ निभाई हैं।

- सभी जीवन रूप एक-दूसरे से जुड़े हैं

यह माना जाता है कि विलियम रूएकर्ट ने 1978 में 'पारिस्थितिकी-आलोचना' शब्द की अवधारणा प्रस्तुत की थी। उन्होंने इसे 'साहित्य के अध्ययन में पारिस्थितिकी और पारिस्थितिक अवधारणाओं के अनुप्रयोग' के रूप में परिभाषित किया।

1.1.3 पारिस्थितिक सजगता और भारतीय साहित्य

- भारतीय साहित्य हमेशा प्रकृति का शुभ-चिंतक

पारिस्थितिक दर्शन, पारिस्थितिक सजगता या पारिस्थितिक आलोचना भारतीय साहित्य के लिए कोई नया विषय नहीं हैं। विश्व के सबसे प्राचीन ग्रंथ वेद प्रकृति के सच्चे संरक्षक, हिमायती और पहरेदार रहे हैं। तदोपरांत भारतीय साहित्यकारों ने भी प्रकृति को अपनी रचनाओं में सराहा है और उसे संजोकर प्रस्तुत किया है। हाँ इतना अवश्य है कि कालचक्र के अनुसार इसकी अभिव्यक्ति और रूप में भले ही परिवर्तन आ गया हो लेकिन भारतीय साहित्य तो हमेशा से ही प्रकृति का शुभ - चिंतक रहा है।

- औद्योगीकरण के परिणाम स्वरूप प्रकृति पर अत्याचार

स्वार्थ लाभ को लक्ष्य करके साधन और सामग्री एकत्रित करने की वृद्धि को समृद्धि का प्रतिमान मानने की जो संस्कृति है उसको रविन्द्रनाथ टैगोर ने 'सभ्यतानामनी पाताल' कहा। नदी पर बाँध बनाने के खिलाफ़ उन्होंने 'मुक्त धारा' नाटक लिखकर अपना प्रतिरोध ज़ाहिर किया। धरती की संपदा का अनुचित शोषण करने के विरुद्ध उन्होंने 'रक्त करवी' जैसे अनेक निबंध लिखे। आखिर उन्होंने यहाँ तक कहा मनुष्य का लोभ सिर्फ़ प्रकृति के विनाश से शांत नहीं होगा, वह मनुष्य का भी विनाश करेगा। यद्यपि कई

रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में पर्यावरण संबंधी मुद्दों को उभारा है। तथापि हिंदी साहित्य में इको क्रिटिसिज़्म अभी तक एक दर्शन नहीं बन पाया है फिर भी हिंदी आलोचना के शीर्षस्थ आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने औद्योगीकरण के परिणाम स्वरूप प्रकृति पर होने वाले अत्याचार, प्रकृति से दूर चले जाने वाले मनुष्यों से उत्पन्न सांस्कृतिक एवं पर्यावरण संकट का इशारा किया है। शुक्ल जी के बाद अज्ञेय और निर्मल वर्मा इस महाविपत्ति पर सतर्क होकर अपना-अपना विचार प्रकट करते हुए नज़र आते हैं।

भारतीय उपन्यास साहित्य में पर्यावरणीय विषयों को लंबे समय से स्थान मिलता रहा है। प्रेमचंद ने अपने उपन्यास रंगभूमि में वर्षों पहले ही पारिस्थितिकी का सजीव और प्रभावी चित्रण किया था। इसलिए भारत का प्रथम पारिस्थितिक उपन्यास का दर्जा रंगभूमि को देना उचित है। आधुनिक काल में भारतीय भाषा में लिखित सबसे सशक्त पारिस्थितिक उपन्यास ताराशंकर बंधोपाध्याय का 'आरोग्य निकेतन' है। पारिस्थितिक सजगता को अपने दामन में समेटे हिंदी के कुछ प्रमुख उपन्यास इस प्रकार हैं - वीरेंद्र जैन - डूब, नासिरा शर्मा - कुइयाँजान, संजीव - धार, सावधान नीचे आग है, जंगल जहाँ शुरू होता है, सुभाष पन्त - पहाड़ चोर, मनमोहन पाठक - गगन घटा घहरानी, तेजन्दर - काला पादरी, भगवान दास मोरवाल - काला पहाड़, उदय प्रकाश - पीली छतरी वाली लड़की, मृदुला गर्ग - कठगुलाब।

- आधुनिक काल में भारतीय भाषा में लिखित सबसे सशक्त पारिस्थितिक उपन्यास ताराशंकर बंधोपाध्याय का आरोग्य निकेतन है।

मलयालम में प्रमुख रचनाकारों के उपन्यासों में पारिस्थितिकी चिन्तन और प्राकृतिक दर्शन के कई पहलुओं का अनावरण किया गया है - आनन्द - अभयार्थिकल (शरणार्थी), मरूभूमिकल उन्डाकुन्नतु (रेगिस्तान बनने के पीछे)ओ. वी. विजयन - खसाकिन्टे इतिहासम, धर्मपुराणम, गुरूसागरम, मधुरम गायति, तलमुरकल, सी राधाकृष्णन - मुंपे परक्कुन्न पक्षीकल, पी. सुरेन्द्रन - जैवम, के. जे. बेबी - मावेली मन्ट्रम, नारायण - कोच्चरेत्ती, सी. आर . परमेश्वर - प्रकृति नियमम, एन.पी. मुहम्मद का एण्णपाडम (तेल का खेत) दैवत्तिन्टे कण्णु (ईश्वर की आँख), सारा जोसफ - आलाहयुटे पेण मक्कल, अम्बिका सुतन मंगाडु - एनमकजे।

पारिस्थितिक सजगता को अभिव्यक्त करती हिन्दी कहानियाँ -कपिल का पेड, मैं हवा पानी परिन्दा कुछ नहीं - राजेश जोशी, स्वयं प्रकाश- आरोहण, संजीव-कहीं दूर जब दिन ढल जाए, रविन्द्र कालिया- बटरोही सुन्दरी

- भारतीय साहित्यकारों ने प्रकृति को अपनी रचनाओं में सराहा है

मलयालम कहानियाँ - यू के कुमारन - कोडुगल्लूरिलेक्क इल्ला, एम. टी वासुदेवन नायर - सुकृतम, शिलालिखितम, वान प्रस्थम, टी. पद्मनाभन - ओरु चेरिया कथा, एस.पी. रमेश किलिकलुडे राजाव, ओ. वी. विजयन - काटटु कोषियुड़े अनुग्रहम, तकषी - वेल्लपोक्कत्तिल, सी. राधाकृष्णन - मदवुम, इष जन्तुविन्टे दुःखम, एस. वी. वेणुगोपन नायर - अद्वैतभारम, किषकिंधा, एम.ए. रहमान - कुलम, एम. मुकुन्दन -ओरु पुषयुटे ओरमा

भारतीय अंग्रेज़ी साहित्य - अमिताव घोष - The Hungry Tide, Gun Island, ग्लास पैलेस। अरुंधति रॉय की किताब 'द गॉड ऑफ स्मॉल थिंग्स' में पर्यावरण के प्रति उनके नैतिक रुख का पता चलता है।

भारतीय काव्य साहित्य तो जैसे पारिस्थितिक दर्शन के ताने - बाने से ही रचा गया है। प्राचीन काल से आज तक यहाँ प्रकृति नाना रूपों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराती आई है - चाहे वह सौंदर्य रूप हो, दर्शन हो, चेतना हो या आज के संदर्भ में देखें तो विमर्श के रूप में हो। महाकवि कालिदास से लेकर तुलसीदास जी, भारतेंदु हरिश्चंद्र से लेकर कामायनीकार प्रसाद जी, पंत से लेकर अज्ञेय, ज्ञानेंद्रपति और अरुण कमल से लेकर निर्मला पुतुल - सभी कवियों की तूलिका से प्रकृति निज रूप सँवारती आई है। साहित्यकारों की आगे आने वाली पीढ़ी को भी प्रकृति को साथ लेकर चलना है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

आज हम ऐसी दुनिया में जी रहे हैं जो पर्यावरण की अनेक समस्याओं और संकट भरी स्थितियों से घिरी है। इसलिए पर्यावरण की चेतना जगाना ज़रूरी है। आज सारा विश्व संकट में है और यह संकट स्वयं मनुष्य ने पैदा किया है और इसका वज्रपात भी उसी पर हो रहा है। प्रकृति से हस्तक्षेप करने के कारण स्थल, जल, जीव और वायुमंडल में जो संतुलन हमने पैदा किया है उसके कारण पर्यावरण की जो क्षति हो रही है उसके परिणाम नज़र आने लगे हैं। भूचाल, बाढ़, सूखा, भूस्खलन, तापमान में वृद्धि, मरुस्थलीकरण बहुत सी जीव - प्रजातियाँ और वनस्पतियों का लोप ऐसी कुछ स्थितियाँ हैं जो भावी संकट की सूचना देने के लिए काफ़ी हैं। ऐसे में पर्यावरण की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए निरंतर उस पर ध्यान रखने की ज़रूरत है। यही नहीं पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन हेतु पर्याप्त मानवीय एवं संस्थागत साधनों को जुटाना होगा। इसी प्रकार पर्यावरण चेतना जागृत करना तथा पर्यावरण शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए व्यापक प्रयास करने होंगे ताकि पर्यावरण प्रदूषण कम हो और पारिस्थितिक चक्र संतुलित होकर चलता रहे।

साहित्य में पारिस्थितिकवाद, पारिस्थितिक सौंदर्य शास्त्र और पर्यावरण विमर्श के पठन-पाठन का अंतिम मकसद यह है कि प्रकृति और मानव के बीच पुनीत रागात्मक संबंध का विकास हो। साहित्य यह पहचानता है की प्राण तत्व का संस्पर्श केवल इस पृथ्वी में ही देखने को मिलता है इसलिए इस धरती के साथ, उसके सीमित वैभव के साथ खिलवाड़ कदापि नहीं किया जा सकता। हम जानते हैं कि प्रकृति पर आश्रित हुए बिना मानव अपना जीवन आगे नहीं बढ़ा पाएगा। प्रकृति के शोषण की संस्कृति मानव की जघन्यता मात्र दर्शाती है। प्रकृति के उपादानों को स्वीकार करके ही मानव राशि इस जगत में अपना अस्तित्व कायम रख पायेगी।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. पारिस्थितिक वाद पर एक लेख लिखिए।
2. पारिस्थितिक सौंदर्यशास्त्र पर एक निबंध लिखिए।

3. जैव-विविधता पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
4. इको क्रिटिसिज़्म की अवधारणा पर एक लघु लेख लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएँ एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण - डॉ. सुमन सिंह।
9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र - मेघा सिन्हा।
10. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस. डॉ. एस आर जयश्री।
11. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन - के वनजा

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 2

द्वितीय विश्व युद्ध और पारिस्थितिक बोध का उदय, भारत में पारिस्थितिक आन्दोलन की पृष्ठभूमि

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- पर्यावरण नैतिकता का बोध
- द्वितीय विश्व युद्ध और पारिस्थितिक बोध से परिचय
- भारत में पारिस्थितिक आन्दोलन की पृष्ठभूमि से परिचय
- सतत विकास की अवधारणा से परिचय

Background / पृष्ठभूमि

दूसरे विश्व युद्ध के बाद भूमंडलीकरण की तीव्रता बढ़ती गई। मानव जीवन के विविध आयामों पर प्रभाव डालकर विश्व बाज़ार ने सारे नज़ारे बदल कर रख दिए। हमारे मूल्य, दर्शन, आदर्श सब बदल रहे हैं। इसका प्रभाव हमारे मानव जीवन के मात्र सामाजिक पक्षों तक सीमित नहीं बल्कि पारिस्थितिकी पर भी पड़ा है। लाभ केंद्रित दृष्टिकोण अपना कर प्रकृति के संसाधनों का शोषण कर उत्पादन में वृद्धि करके पूँजी निवेशक अपने स्वार्थ की पूर्ति करते हैं। भूमंडलीकरण का जन्म पूँजीवाद की कोख से हुआ है। पूँजीवाद के विकास के साथ-साथ प्रकृति का संतुलन बिगड़ने लगा है। धरती पर जीवन की शोभा लुप्त होने लगी है। पर्यावरण के नाश का मूलभूत कारण औद्योगिक कचरा है। आंकड़े यह बताते हैं कि पारिस्थितिकी प्रदूषण, भूतापन के जिम्मेदार विश्व के औद्योगिक राष्ट्र हैं। अब हमें अन्य विकल्पों की तलाश की आवश्यकता है जिससे हम वर्तमान और भविष्य को प्रदूषण रहित एक भूमि दे सकें लेकिन क्या यह एक स्वप्न मात्र बन कर रह जायेगा? कुछ तो हमें अपने पूर्वजों से सीखना होगा जो वे प्रकृति का अतिक्रमण न कर सरल और सहज ज़िन्दगी बिताते थे।

Keywords / मुख्य बिन्दु

द्वितीय विश्व युद्ध, पारिस्थितिक बोध, पारिस्थितिक आन्दोलन पर्यावरण नैतिकता, पारिस्थितिक विमर्श

Discussion / चर्चा

द्वितीय विश्व युद्ध और पारिस्थितिक बोध का उदय

दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान संसार के कई देशों की सम्पत्ति एवं ध्यान केवल युद्ध क्षेत्र के लिए सीमित हो गया था। तब कृषि के क्षेत्र में मंदी आ गयी। संसार के कई देशों में अकाल पड़ गया। लाखों लोग मरने लगे। 1942-43 में बंगाल में अकाल से 40 लाख से ज़्यादा लोग मर गये। तब से खाद्य क्षेत्र में वृद्धि लाने की कोशिश संसार भर में प्रारम्भ हो गयी। 1943 में रॉक फीलर फाउंडेशन एवं मेक्सिन सरकार ने मिलकर मैक्सिको में एक सस्य प्रजनन केन्द्र शुरु किया। यहाँ जापान का नोरिन 10 नामक गेहूँ का विशेष बीज, मैक्सिको और कोलम्बिया के गेहूँ के बीजों को मिलाकर एक नवीन संकर बीज का निर्माण किया गया। यह एक नई शुरुआत थी। जब भारत स्वतन्त्र हुआ तब प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने कृषि को सबसे ज़्यादा महत्व दिया था। 1966 में धान्यों के स्थान पर यहाँ गेहूँ का संकर बीज आ गया। यह भारत के गेहूँ क्षेत्रों में विशेषकर पंजाब में प्रयोग किया गया। गेहूँ का उत्पादन बढ़ गया और यह बीज दरिद्र देशों में गरीबी से होने वाली मृत्यु को दूर करने में सहायक सिद्ध हुआ। 1968 में इस प्रक्रिया को हरित क्रांति (Green Revolution) नाम से अभिहित किया गया। इस नामकरण का श्रेय अंतर्राष्ट्रीय विकास के लिए प्रवत्त अमेरिकन एजेंसी (U.S.A.I.D) के अध्यक्ष विलियम गॉड को है।

- भारत स्वतन्त्र होते समय प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने कृषि को सबसे ज़्यादा महत्व दिया

भारत में इस क्रान्ति से भूख से मृत्यु तो कम हो गयी, लेकिन अन्य उत्पादन में कमी आ गई। चावल, दाल वर्ग और तेल के बीजों का उत्पादन बहुत घट गया। भारतीय परम्परागत कृषि रीति नष्ट हो गयी। वह प्रकृति हित की रीति थी। मिट्टी, मनुष्य और अन्य विविध उत्पादन घरेलू जानवर आदि से मिलकर एक सन्तुलित स्थिति पहले कायम थी, वह खत्म हो गयी। ग्रामीण किसानों की स्थिर आर्थिक आय भी बर्बाद हो गई। ट्रैक्टर, पावर टिलर, जैसे उपकरणों के अधीन कृषि आ गई। ज़्यादा सुख, ज़्यादा मुनाफ़ा, ज़्यादा पूँजी का उपयोग हरित क्रांति का रहस्य मंत्र था। मनुष्य और खेती के बीच के संबंध की प्राकृतिक कड़ियाँ - जानवर एवं पक्षी पतंगे इस क्रांति के माध्यम से टूटने लगीं। भूमि के इतिहास में जैव वैविध्यों की संख्या काफी मात्रा में थी। यह करीब 10 करोड़ थीं, इनमें से करीब 98% जैव जातियाँ गायब हो चुकी हैं। आज धरती में केवल 20-30 लाख जैव जातियाँ शेष हैं। मनुष्य तथा अन्य जीव वर्गों का अस्तित्व सस्यों की सुरक्षा पर निर्भर है। इसलिए जैव वैविध्य को देश की मूल्यवान संपत्ति मानकर इसे बचाने की सजगता आज महसूस की जा रही है।

- भारतीय परम्परागत कृषि रीति नष्ट हो गयी

हरित क्रांति के फलस्वरूप कई प्रदेशों की वन भूमि जनता को दी गई। सरकार द्वारा दी गई वन भूमि के अलावा कृषक और भी वन भूमि अपने क़ब्ज़े में करने लगे। कृषि और बिजली के लिए कई बाँधों का निर्माण किया गया यह भी बड़े पैमाने पर जैव विविधता के नाश के हेतु बन गए। हरित क्रांति जब तेजी से आगे बढ़ने लगी, तब

- बाँधों का निर्माण बड़े पैमाने पर जैव विविधता के नाश के हेतु बन गए

उपभोग संस्कृति और सशक्त हो गई। इसके लिए विज्ञान हमेशा सहायक रहा। बुलडोज़र वनों के भीतर प्रवेश करने लगे। वन का अनुचित शोषण साधारण घटना बन गया।

अमेरिका के वैज्ञानिक नॉर्मन बोरलॉग ने सस्य बीजों के संकर का आविष्कार किया। हरित क्रांति के नाम पर भारत में 4 लाख से ज़्यादा संकर बीज कृषकों के बीच बाँट दिया गया। यह हमारे परंपरागत बीज संग्रह को नष्ट कर देने वाला है। यह विदेशी बीज उत्पादन कंपनियों को यहाँ पर पनपने और कृषकों के शोषण के लिए सुअवसर भी प्रदान करने लगा। मल्टीनेशनल बुर्जआ कंपनियों ने जब संकर बीजों का औद्योगीकरण किया तो यहाँ टर्मिनेटर टेक्नोलॉजी अथवा जिन के आतंक का जन्म हुआ यह विकसित देश द्वारा विकासशील देशों के लिए बनाया गया भयानक षड्यंत्र है इसके परिणाम स्वरूप यहाँ के परंपरागत सारे सत्य एवं धान्य उत्पादन सदा के लिए नष्ट हो जाएगा। आज हमारे कृषक विदेशी कंपनियों के नियमों का पालन करते हैं और एक प्रकार से विदेश के बंदी बने हुए हैं।

- अमेरिका के वैज्ञानिक नॉर्मन बोरलॉग ने सस्य बीजों के संकर का आविष्कार किया

भारत के कई सब्ज़ियाँ एवं अन्य वनस्पति उत्पादन यहाँ से गायब होते जा रहे हैं। औषधि सस्यों में कमी आती जा रही है। हरित क्रांति की व्यापकता के साथ कीटनाशकों का बहुत अधिक प्रयोग हो रहा है। इनके प्रयोग से कई जीव जंतु, पक्षी पतंग, मछलियाँ सब वंशनाश का सामना कर रहे हैं। केरल के कासरगोड जिले में एंडोसल्फान के प्रयोग से जीव-जंतुओं के समान मनुष्य भी विभिन्न विभीषिकाओं का सामना कर रहा है। यह कैंसर जैसे महा रोग का कारण बन रहा है, मस्तिष्क तथा स्नायु तंत्र को पूर्णतः शिथिल करके मनुष्य को कई रोगों का शिकार बना रहा है। इस प्रकार हमारे वनों, जलाशयों एवं कृषि स्थलों से परंपरागत जैव विविधता गायब हो रहा है।

- हरित क्रांति की व्यापकता के साथ कीटनाशकों का बहुत अधिक प्रयोग

शहरीकरण एवं विकास योजनाएँ जनता पर जो आघात पहुँचाती हैं वह सामाजिक पारिस्थितिक संकट का विषय है। नई योजनाओं जैसे बाँधों का निर्माण औद्योगिक नगरियों या विशेष आर्थिक क्षेत्र की योजना, एक्सप्रेस हाईवे आदि की सृष्टि से जो लोग भूमिहीन बनकर विस्थापित हो जाते हैं वे सब दरिद्र बनकर रह जाते हैं। इन योजनाओं में मुनाफ़ा कमाने वाले पूँजीपति वर्ग हैं इसीलिए विकास योजनाएँ मनुष्य और प्रकृति का शोषण करके पूँजी की वृद्धि ही करती हैं। नर्मदा योजना में लाखों विस्थापितों में सारे के सारे दरिद्र आदिवासी लोग थे। योजना के गुणभोक्ता लोग गुजरात के मध्यवर्गीय अमीर कृषक, शहरी लोग, उद्योगपति आदि हैं। लाखों हेक्टर भूमि की कृषि के लिए पानी की उपलब्धता पर लक्ष्य करके निर्मित इस योजना की सफलता पर आज शंकाएँ शेष रह गई हैं।

- विकास योजनाएँ मनुष्य और प्रकृति का शोषण करके पूँजी की वृद्धि करती हैं

केरल के प्लाच्चिमड़ा में मल्टीनेशनल कोका-कोला कंपनी के लिए भूगर्भ पानी का अनुचित शोषण करके गरीब आदिवासी लोगों को पीने के पानी से वंचित किया गया। ज़्यादातर विकास योजनाएँ मनुष्य की लालच एवं उपभोग संस्कार की अति से स्पायित है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अल्प लाभ के लिए संपूर्ण जैव वैविध्य का विनाश आगामी पीढ़ी के भविष्य के लिए ख़तरे की घंटी के समान है। शहरीकरण और औद्योगीकरण,

- शहरीकरण और औद्योगीकरण, भवन निर्माण ये सब वनों और खेतों को चुपचाप हजम करते हैं

भवन निर्माण ये सब वनों और खेतों को चुपचाप हजम करते जा रहे हैं। खेत आजकल कॉलोनी, अपार्टमेंट्स और सबसिटी में बदलते जा रहे हैं। हरियाणा में मारुति ने सबसिटी के लिए कितने ही कृषकों को विस्थापित कर दिया।

- वीरेन्द्र जैन के उपन्यास 'डूब' में बाढ़ के भयानक रूप का वर्णन हुआ है।

जल विद्युत योजनाओं से आज हरी-भरी पृथ्वी का आँचल धीरे-धीरे सूखता जा रहा है। बाँधों के कारण पीछे के इलाके में नदी का प्रवाह रुक जाता है। बाँधों में पानी की अधिकता है तो बाँध खोलने पर निचले इलाकों में बाढ़ आ जाती है। इससे हज़ारों हेक्टर कृषि योग्य भूमि पर सात-आठ फुट बालू भर जाती है। वीरेन्द्र जैन के उपन्यास 'डूब' में इसके भयानक रूप का वर्णन हुआ है। 'डूब 'में उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश के शहरों के विद्युतीकरण के लिए राजघाट बाँध परियोजना तैयार की जाती है। इसके फलस्वरूप सैकड़ो गाँवों के हरे-भरे खेत खलिहान इस योजना की भेंट चढ़ जाते हैं। लोगों को पीने का पानी भी नसीब नहीं होता। बाँधों के निर्माण से उस लडैई गाँव में बाढ़ आ जाती है।

- भूमिगत खुदाई से प्राकृतिक जल स्त्रोत और जल स्तर बुरी तरह से प्रभावित होता है

आज़ादी के बाद हमारे देश में खनन उद्योग के विकास पर ध्यान केन्द्रित किया गया। ज़मीन के नीचे से खनिज निकालने के क्रम में न केवल बनों को उजाड़ दिया जाता है बल्कि खनन प्रक्रिया के कारण पूरा पर्यावरण प्रभावित होता है। भूमिगत खुदाई से प्राकृतिक जल स्त्रोत और जल स्तर बुरी तरह से प्रभावित होता है। जंगल साफ़ कर दिए जाने के कारण नंगे हो चुके पहाड़ों में भूस्खलन, धंसन आदि घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं। खनन क्षेत्रों में धरती से खनिज पदार्थ आदि निकाल लेने पर पूरा इलाका कई सालों तक बेकार और बंजर सा हो जाता है। यह इलाका पेड़-पौधों तथा जीव जन्तुओं से रहित होकर अपनी मौलिकता खो देता है। जैव कृषियों के स्थान पर कीटनाशकों एवं अन्य कृत्रिम एवं रासायनिक खादों के उपयोग से भी मिट्टी की उर्वरता नष्ट हो जाती है।

- भारतीयता का सांस्कृतिक वैविध्य गायब होता जा रहा है

कभी ग्रामीण प्रकृति, ग्रामीण आचार - विचार, लोक - जीवन की धुन, पगडण्डियाँ, पुष्प, लता, नदियाँ, नाले, पर्वत मालाएँ, पेड़-पौधे, पक्षी पतंग, लोकगीत, लोक कथाएँ सब हमारे जीवन के अभिन्न अंग थे। ये ही हमें जीने की प्रेरणा एवं हमारे जीवन को सौंदर्य देते थे, अपनापन देते थे। यह सब आज नष्ट होते जा रहे हैं। नई पीढ़ी के लिए यह मिथक बन चुके हैं, बुजुर्गों के लिए स्मृतियाँ। हम विदेशी जीवन का अंधानुकरण कर रहे हैं। भारतीयता का वह सांस्कृतिक वैविध्य गायब होता जा रहा है। औद्योगीकरण और नगरीकरण ही आज विकास का पैमाना हो चुका है।

- भविष्य में भारतीय जलवायु में अति भीषण परिवर्तन होगा

2007 फरवरी 2 को संसार भर के मुख्य देशों के जलवायु वैज्ञानिक ए पी सी सी के नेतृत्व में पेरिस में एकत्रित हुए। उन्होंने भविष्य में मानव के सामने आने वाली विपत्तियों की चर्चा की उन्होंने यह सूचित किया कि भारत को अति भीषण जलवायु संबंधी समस्या का सामना करना पड़ेगा। सूखा, लू कई दिनों तक मूसलाधार बारिश, आँधी, आदि से भारतीय जलवायु में अति भीषण परिवर्तन होगा। 21वीं सदी के मध्य तक आते-आते हिमालय के पर्वत शिखर से बर्फ क्रमिक रूप से गायब हो जाएगी। वर्षा काल के जल को एकत्र करके रखने की ज़रूरत पड़ेगी। इसके फल स्वरूप बहुत

संख्या में पारिस्थितिक एवं सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होंगी। आईस वर्गों के पिघलने से समुद्र के जल की सीमा बढ़ जाएगी। संसार के कई बड़े नगरों एवं द्वीपों पर इसका असर पड़ेगा। इसलिए बहुत नाज़ुक वक़्त सामने आ गया है। युवा पीढ़ी को इस पर ध्यान देना बहुत ज़रूरी है।

प्रदूषण प्रकृति पर मानव के अतिक्रमण का घातक प्रभाव है। यदि हम प्राकृतिक संसाधन को बचाने का प्रयास नहीं करेंगे तो इस भूतल पर जीवन का नामो निशान नहीं रहेगा। पर्यावरण को स्वस्थ और सुंदर बनाने के लिए हमें हर हाल में तैयार होना होगा। केवल पर्यावरण दिवस (5 जून), जल दिवस (22 मार्च), वन दिवस (21 मार्च), पर्वत दिवस (31 दिसम्बर), ओजोन दिवस (16 दिसम्बर) आदि मनाने से प्राकृतिक संसाधन का बचाव नहीं होगा। उसके लिए ज़रूरी है कि हमारे मन में नवीन पर्यावरण बोध की सुगंध फैलायें। अपने को श्रेष्ठ और सृष्टि का सबसे बड़ा बुद्धि जीवी समझने वाला मानव भला इतनी सी बात क्यों नहीं समझ पाता है कि प्राकृतिक शक्तियों की पूजा का असली अर्थ यही था कि हम अपनी प्रकृति के वैभव को बनाये रखें और उसे संरक्षित रखें।

- पर्यावरण को स्वस्थ और सुंदर बनाने के लिए हमें हर हाल में तैयार होना होगा

भारत में पारिस्थितिक आन्दोलन की पृष्ठभूमि :

प्रकृति के उपादान - गगन मण्डल, पृथ्वी, वन नदियाँ, जीव-जन्तु, वृक्ष वनस्पतियाँ ये सभी पर्यावरण परिधि में समाहित हैं। इन सब का संरक्षण करना हमारा परम कर्तव्य है। हमारे पूर्वजों ने समष्टि हित में इसे समझा तथा उनके द्वारा प्रकृति को स्वच्छ एवं संरक्षित रखने के हर संभव प्रयास भी किये गये थे। इसके लिए उन्होंने धर्म और विश्वास का भी सहारा लिया। भौतिक प्रगति की सीढ़ियों पर चढ़ते मानव ने पुराने विश्वासों की तिलांजलि दे दी। अपनी लिप्सा की पूर्ति हेतु प्राकृतिक संसाधनों को दूषित कर डाला। संपूर्ण प्रकृति का आज मनुष्य की प्रवृत्तियों से दम घुट रहा है, इसका प्रभाव समस्त जीव - जंतुओं, पेड़ - पौधों, भूमि, जल, वायु एवं मानव जीवन पर पड़ रहा है किंतु दुखद स्थिति यह है कि आज मनुष्य ही इस सृष्टि के संहार का कारण बन रहा है। जंगलों की अंधाधुंध कटाई पशु - पक्षियों के शिकार, जलाशय की अपवित्रता इसके प्रमुख कारण हैं। गहराते पर्यावरण संकट के परिणाम स्वरूप वर्तमान मानव समाज में पर्यावरण चेतना जागृत हुई है। आधुनिक औद्योगिक युग की देन है - भौतिक प्रगति और पारिस्थितिक असंतुलन। इस युग के मनुष्य की बढ़ती हुई भोग लिप्सा प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध शोषण करती है और प्रदूषण के अलावा कुछ नहीं दे पाती। प्राकृतिक संपदा पर इस दोहरी मार ने विश्व पर्यावरण को जर्जर कर डाला है। मानव जाति के भविष्य पर प्रश्न चिह्न ने आज पर्यावरण के प्रति सजगता उत्पन्न की है और उन्हें सोचने के लिए विवश किया है। यही कारण है कि आज वैज्ञानिक, शिक्षाविद, पत्रकार, प्रशासक, समाजसेवी, सरकारें तथा जनसाधारण सभी पर्यावरण के भावी परिणाम के प्रति चिंतित नज़र आते हैं। समाचार पत्रों, किताबों, पत्रिकाओं, रेडियो, टेलीविज़न तथा अन्य प्रचार माध्यमों से पर्यावरण संबंधी समाचारों लेखों एवं वार्ताओं को वरीयता दी जा रही है।

- भौतिक प्रगति की सीढ़ियों पर चढ़ते मानव ने पुराने विश्वासों की तिलांजलि दी

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण कार्यक्रम क्रियान्वित किया जा रहे हैं। इससे संबंधित राज्यप्राधिकरणों, सरकारी, अर्द्ध सरकारी संगठन पर्यावरण संरक्षण के लिए कार्यरत हैं। कई स्वयंसेवी संस्थाएँ भी पर्यावरणीय चेतना के लिए सेवा भावना से कार्यरत हैं। यही नहीं व्यक्तिगत रूप से कुछ लोगों ने पर्यावरण संरक्षण के लिए जो अलख जगाई है वह बड़ी ही सराहनीय है।

भारत में सर्वप्रथम चौथी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं की ओर सरकार का ध्यान गया। इन समस्याओं पर विशेषज्ञों ने सरकार के सम्बद्ध मंत्रालयों, विभागों के साथ मिलकर विचार करने तथा समाधान सुझाने के लिए 1972 में एक पर्यावरणीय समन्वय समिति गठित की। इसके बाद दिसम्बर 1980 में भारत सरकार ने केन्द्र में एक 'पर्यावरण विभाग' स्थापित किया। आगे चलकर 1985 में इस विभाग को एक नये विभाग पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के रूप में बदल दिया गया। आज पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा विभिन्न माध्यमों से लोगों को पर्यावरणीय जानकारी प्रदान की जाती है। नागरिकों को पर्यावरणीय शिक्षा देने का कार्य किया जाता है। इसके लिए मंत्रालय द्वारा सम्मेलनों कार्यशालाओं प्रशिक्षण कार्यक्रमों पारिस्थितिकी शिविरों तथा प्रचार माध्यम आदि पर विशेष बल दिया जाता है।

- 1972 में एक पर्यावरणीय समन्वय समिति गठित की।

सच तो यह है कि आज संपूर्ण विश्व में पर्यावरण संरक्षण के प्रति अधिक से अधिक लोग चिंतित नज़र आते हैं। वैज्ञानिक, शिक्षक, विद्यार्थी, पत्रकार, साहित्यकार तथा जन सामान्य सभी पर्यावरण पर चर्चा या विचार विमर्श करते देखे जा सकते हैं। पर्यावरण के महत्व को समझकर ही आज विद्यालय विश्वविद्यालय में किसी न किसी रूप में पर्यावरणीय शिक्षा दी जा रही है। महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय में पर्यावरण संरक्षण हेतु राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है साहित्यकार शिक्षक छात्र आदि अपने लेखों को पत्र - पत्रिकाओं, पुस्तकों में प्रकाशित कराकर विविध प्रकार से पर्यावरणीय चेतना जागृति का कार्य कर रहे हैं। जन - जागृति को पर्यावरण संरक्षण के लिए एक अद्वितीय प्रयास कहा जा सकता है। भारत में इस प्रकार के अनेक उदाहरण हैं जिनके प्रयास सराहनीय रहे जैसे चिपको आंदोलन, मूक घाटी आंदोलन, अप्पिको आन्दोलन, बिश्नोई आंदोलन आदि। उनके पद चिह्नों पर चलकर हम आज भी पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। पाठ्यक्रम की आगे की इकाइयों में इन आंदोलनों पर विस्तार से चर्चा हुई है।

- जन-जागृति - पर्यावरण संरक्षण के लिए एक अद्वितीय प्रयास

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

आज विज्ञान प्रकृति पर विजय प्राप्त करने की बात करता है अपने को उसका पुत्र नहीं कहता। धर्म के कारण प्रकृति से जो आत्मीयता बनी थी, आज आस्था की कमी के कारण उपभोक्तावादिता और आक्रामकता में परिणत हो गई है। विज्ञान प्रकृति को उपयोगिता वादी दृष्टि से देखता है। यह अपसंस्कृति प्रकृति से हमें बहुत दूर ले जा रही है। जब प्रकृति और पर्यावरण का विघटन हो जाएगा तब कोई प्रौद्योगिकी काम नहीं आएगी। आप वन, जल,

कोयला, पेट्रोल को उड़ाते जाएँ और सोचें कि हम स्वस्थ और ख़ुशहाल रहें, यह कभी संभव नहीं। लोगों को चाहिए कि वह पर्यावरण संस्कृति को सहमति दें। वास्तविक दोष मनुष्य की सोच और जीवन शैली तथा व्यवहार का है। इसलिए सारी समस्या से उबरना है तो मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक अंध दृष्टि को बदलना होगा। यदि मानव और प्रकृति की एकता खंडित हो गई तो यह विराट विश्व टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा - सारा अस्तित्व मनुष्य के खिलाफ़ होगा और दुनिया में वह अकेला पड़ जाएगा। विकास की नीतियाँ जन की दृष्टि से तय की जा सकती हैं, विकास और औद्योगीकरण का लक्ष्य केवल धन कमाना या निजी सुख लूटना ना हो बल्कि हर व्यक्ति राष्ट्र का समष्टिगत लाभ सोचे। साथ ही उपयोगितावाद जीवन और पर्यावरण पर हावी ना हो। यह ठीक है कि विकास की गति को वापस नहीं मोड़ा जा सकता किंतु हर स्थिति में अपने पर्यावरण से उचित संबंध बनाए रखना ज़रूरी है।

पारिस्थितिकी मानव को एक विराट और व्यापक व्यवस्था का अंग मानती है। हम प्रकृति पर अनुशासन या शोषण करने के लिए नहीं है बल्कि हमें विकास की मशाल को जलाए रखना है। पर्यावरण हमारी संस्कृति का स्रोत है हमें उसकी हिफ़ाज़त ही नहीं करनी बल्कि उसकी पवित्रता भी बनाए रखनी है, तब कहीं जाकर पारिस्थितिक आंदोलनकारियों का संघर्ष और पारिस्थितिकी विमर्श का हमारा यह पठन और चिंतन सफल माना जाएगा।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. द्वितीय विश्व युद्ध और पारिस्थितिक बोध पर एक निबंध लिखिए।
2. भारत में पारिस्थितिक आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर एक टिप्पणी लिखिए।
3. 'पर्यावरण नैतिकता' विषय पर एक टिप्पणी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएँ एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ. सुजाता बिष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण - डॉ. सुमन सिंह।
9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र - मेघा सिन्हा।
10. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस. 'डॉ. एस आर जयश्री।
11. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन - के वनजा

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 3

पारिस्थितिक समस्याएँ - प्रदूषण - प्रदूषण के विभिन्न प्रकार, कारण और निवारण - जल, जंगल ज़मीन से जुड़ी संवेदनाएँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- पारिस्थितिक समस्याओं से अवगत होता है
- प्रदूषण के कारण और निवारण समझता है
- जल, जंगल और ज़मीन से जुड़ी संवेदनाओं से परिचित होता है
- पर्यावरण नैतिकता का बोध उत्पन्न होता है

Background / पृष्ठभूमि

पर्यावरण के सभी घटकों के बीच गहरा संबंध है अर्थात क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर, पेड़-पौधे, मानव और समस्त जीवधारियों में एक अटूट रिश्ता है। इस अटूट रिश्ते को ही हम पारिस्थितिक संतुलन कहते हैं। मानव की स्वार्थपूर्ण प्रवृत्तियों से यह संतुलन बिगड़ता जा रहा है जिससे कई पारिस्थितिक समस्याएँ पैदा हो गई हैं। पर्यावरण हर तरह से प्रदूषित हो चुका है जैसे जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, स्थल प्रदूषण, ओज़ोन संकट आदि। प्रस्तुत इकाई में हम प्रदूषण के विभिन्न प्रकार, कारण और निवारण पर चर्चा करेंगे।

Keywords / मुख्य बिन्दु

पारिस्थितिक समस्याएँ, जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, स्थल प्रदूषण, ओज़ोन संकट, कारण, निवारण।

Discussion / चर्चा

"Earth can provide enough to satisfy every man's need but not every man's greed"

- Mahatma Gandhi

- मनुष्य प्राकृतिक संपदा का अंधाधुंध प्रयोग कर रहा है

आज के पर्यावरण विशेषज्ञों के सामने बहुत बड़ी चुनौती बनकर खड़ा हुआ है भूमि प्रदूषण। कूड़े-करकट का ढेर, रद्दी कागज़, बेकार पड़े मोटर वाहन, कपड़े, रबर, प्लास्टिक के ढेर, मल-मूत्र, कीटनाशक, रासायनिक पदार्थ आदि प्रदूषण के मुख्य कारण हैं। आज इंसानों की करतूत के कारण प्रकृति का संतुलन डगमगा गया है। मनुष्य प्राकृतिक संपदा का अंधाधुंध प्रयोग कर रहा है लेकिन उसकी क्षतिपूर्ति नहीं कर रहा। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जल, वायु और जीव मंडल सुनिर्धारित इको-सिस्टम के अंतर्गत कार्य कर रहे होते हैं। जब भी किसी एक तंत्र में कोई क्षति या परिवर्तन होता है तो उसका प्रभाव दूसरे इको तंत्र पर भी पड़ता है। मनुष्य द्वारा किए गए अनेक विकास कार्यों, नगरीकरण तथा उद्योगों के कारण पृथ्वी का इको-सिस्टम बिगड़ता जा रहा है। मनुष्य द्वारा निर्मित कंक्रीट के जंगल हमारी हरी-भरी खेती को निगल गए। जहाँ हरे- भरे जंगल थे वहाँ शहर बन गए, शहरों की सड़कों पर काला धुआँ उड़ाती मोटर गाड़ियाँ शोर मचाती, सरपट दौड़ती जाती हैं। शहर जब बसे तो ऐसे बसे कि हमारे हरे-भरे गाँवों को हजम कर गए। हरियाली चूनर ओढ़े धरती का आज टाइल्स और सीमेंट से दम घुटने लगा है जो धरती सबको ठंडक देती थी आज उसका ही तन जलने लगा है।

प्रदूषण के प्रकार

भूमि प्रदूषणः-

- 'यूज़ एंड थ्रो' संस्कृति का प्रसार भूमि को मात्र कचरा डालने का माध्यम समझ लिया है।

भूमि का दुरुपयोग और उसके अत्यधिक शोषण के परिणामस्वरूप जब वह अपने प्राकृतिक स्वरूप और कार्यप्रणाली के लिए अनुपयुक्त हो जाती है तथा विकृत हो जाती है, तो इसे भूमि प्रदूषण कहा जाता है। मनुष्य द्वारा किए गए ऐसे निर्माण कार्य, जो धरती के प्राकृतिक और सहज रूप को विकृत कर दें, वे भी भूमि प्रदूषण की श्रेणी में आते हैं। शहरों में अनियंत्रित रूप से किए जा रहे मकानों, झुग्गी-झोपड़ियों, कल-कारखानों, सड़कों और नालियों के निर्माण से भूमि की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है। इसके अतिरिक्त, फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए प्रयोग किए जाने वाले रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक मिट्टी की नैसर्गिक उर्वरता को नष्ट कर रहे हैं। आजकल 'यूज़ एंड थ्रो' संस्कृति का प्रसार तेज़ी से हो रहा है, जिसके कारण मनुष्य ने भूमि को मात्र कचरा डालने का माध्यम समझ लिया है। बढ़ते अपशिष्ट और अव्यवस्थित कचरा

प्रबंधन के कारण भूमि पर अत्यधिक बोझ पड़ रहा है। यह कचरा अब भूमि के लिए एक अभिशाप बन चुका है, जिससे उसकी उत्पादकता और गुणवत्ता लगातार प्रभावित हो रही है। हमें भूमि प्रदूषण की समस्या को गंभीरता से लेते हुए इसके समाधान की दिशा में ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

- ईंट भट्टियों से भूमि की सतह क्षतिग्रस्त हो जाती है

घर का कचरा, फैक्ट्रियों और उद्योगों से निकलने वाला अपशिष्ट, निर्माण कार्यों के अवशेष, तेल, पेंट, तेज़ाब, मलमूत्र, रद्दी आदि जब अनियंत्रित रूप से एकत्रित होते हैं, तो इनमें रासायनिक परिवर्तन स्वाभाविक रूप से होते हैं। बारिश होने पर इनमें मौजूद प्रदूषक तत्व ज़मीन में समा जाते हैं, जिससे न केवल भूमिगत जल बल्कि मिट्टी भी प्रदूषित हो जाती है। ईंट भट्टियों से भूमि की सतह क्षतिग्रस्त हो जाती है, जिससे धरती की छाती मानो फट जाती है। ऐसे घावों को भरने की ज़िम्मेदारी किसकी होगी?

- हमारी मिट्टी एक बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन है, जिसका बार-बार नवीकरण संभव नहीं है।

जहाँ पहले गाँव और उपजाऊ खेती की ज़मीन हुआ करती थी, वहाँ आज नगर बस चुके हैं और कारखानों की ऊँची-ऊँची इमारतें खड़ी हो गई हैं। खेती का नामो-निशान तक मिट चुका है। आधुनिक कृषि में कीटों और जीवों से फ़सलों की सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों का प्रयोग किया जा रहा है। यह सच है कि ये कीट और जीव फ़सलों को नुकसान पहुँचाते हैं, लेकिन इनसे भी अधिक घातक वे कीटनाशक रसायन हैं, जो फ़सलों, सब्जियों और भूमि पर छिड़के जाते हैं। ये रसायन न केवल चिड़ियों, मछलियों और अन्य जीव-जंतुओं के लिए घातक सिद्ध होते हैं, बल्कि पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर भी गंभीर प्रभाव डालते हैं। हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि हमारी मिट्टी एक बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन है, जिसका बार-बार नवीकरण संभव नहीं है। रासायनिक खादों के अत्यधिक प्रयोग से प्राकृतिक उर्वरता समाप्त हो जाती है और उसके आवश्यक जैविक गुण नष्ट हो जाते हैं। आज उर्वरता बढ़ाने के लिए जो कृत्रिम प्रयास किए जा रहे हैं, वे न केवल प्राकृतिक प्रणाली के विरुद्ध हैं, बल्कि संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को भी बिगाड़ रहे हैं। अतः यह आवश्यक है कि हम पर्यावरण के अनुकूल कृषि पद्धतियों को अपनाएँ और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु जागरूकता बढ़ाएँ।

- मनुष्य को प्रकृति और भूमि के प्रति अपनी दृष्टि बदलनी होगी ताकि पर्यावरण सुरक्षित रह सके

जब भूमि को सही ढंग से जोता जाता है, तो वह संस्कारित होती है, किंतु कृत्रिम साधन प्रकृति के विरुद्ध सिद्ध होते हैं। यदि मृदा के साथ छेड़छाड़ की जाए, तो उसमें नकारात्मक गुण उत्पन्न हो जाते हैं। वर्तमान में अनेक लोग मिलकर इस धरती के संसाधनों का अत्यधिक दोहन कर रहे हैं, जिससे उसका प्राकृतिक संतुलन बिगड़ रहा है। यदि हमने कृषि योग्य भूमि का अप्राकृतिक रूप से उपयोग किया, तो इसका जैवमंडल पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि भूमि का अत्यधिक दोहन न किया जाए। यह तथ्य कृषि एवं खनिज दोनों क्षेत्रों पर समान रूप से लागू होता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि भूमि का उपयोग एवं औद्योगीकरण पारिस्थितिकी संतुलन को ध्यान में रखकर किया जाए। मनुष्य को प्रकृति और भूमि के प्रति अपनी दृष्टि बदलनी होगी ताकि पर्यावरण सुरक्षित रह सके। यदि समय रहते हमने इस ओर ध्यान नहीं दिया, तो इसके परिणाम अत्यंत विनाशकारी सिद्ध होंगे।

जल प्रदूषण :

पंचमहाभूतों में जल सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। वेदों में इसे आदिम तत्व कहा गया है, और सही मायने में, 'जल ही जीवन है।' संपूर्ण सृष्टि के आधारभूत तत्वों में से एक होते हुए भी, जल का अस्तित्व आज गंभीर संकट में है। मानव, जो स्वयं को बुद्धिजीवी मानता है, जल के महत्व को जानते हुए भी इसे दूषित करने पर आमादा है। प्राकृतिक जल संसाधन मानव की लालसा और भोगवादी दृष्टिकोण के कारण लगातार नष्ट होते जा रहे हैं। वनों के अंधाधुंध दोहन ने जल स्रोतों को सुखा दिया है, और जो शेष बचे हैं, वे प्रदूषण की चपेट में आ चुके हैं। कावेरी, कृष्णा, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र जैसी नदियाँ करोड़ों लोगों को जीवनदान देती हैं, किंतु विडंबना यह है कि इन्हीं नदियों को प्रदूषित कर उनका अस्तित्व संकट में डाल दिया गया है।

- वनों के अंधाधुंध दोहन ने जल स्रोतों को सुखा दिया है

आज देश की लगभग सभी नदियाँ घरेलू मल, औद्योगिक कचरे, कीटनाशकों, खनिजों, तेलों और विषाक्त पदार्थों से प्रदूषित हो चुकी हैं। जिन नदियों का जल कभी पवित्र माना जाता था और जो स्नान, पूजा-पाठ तथा शुद्धि के लिए प्रयुक्त होती थीं, वे अब गंदे नालों में बदल चुकी हैं। मल-मूत्र का विसर्जन, मृत पशुओं और शवों का प्रवाह, घरेलू और औद्योगिक कचरे का निपटान-यह सब नदियों को दूषित करने के प्रमुख कारण बन गए हैं।

- आज देश की लगभग सभी नदियाँ प्रदूषित हैं

झीलों की स्थिति और भी दयनीय है। आज दुनिया की सैकड़ों झीलें अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही हैं। भारत में झीलें पर्यटन, अव्यवस्थित विकास कार्यों और औद्योगिक गतिविधियों के कारण सिकुड़ रही हैं और धीरे-धीरे लुप्त होने की कगार पर पहुँच चुकी हैं।

- दुनिया की सैकड़ों झीलें अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही हैं

अब समय आ गया है कि हम जल संरक्षण के प्रति गंभीर हों और प्राकृतिक जल स्रोतों को स्वच्छ और सुरक्षित रखने के लिए ठोस कदम उठाएँ। जल ही जीवन है और यदि इसे बचाने के प्रयास नहीं किए गए, तो मानवता का भविष्य भी अंधकारमय हो सकता है।

- जल ही जीवन है

यदि हम समुद्र की भूमिका पर विचार करें, तो यह केवल मत्स्य पालन, नौवहन आदि तक सीमित नहीं है, बल्कि वायुमंडल और जीवमंडल के संतुलन में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। हाल के दशकों में समुद्र में विस्फोट, परमाणु परीक्षण और सैन्य गतिविधियों में वृद्धि के कारण इसका संतुलन बिगड़ने लगा है, जिससे समुद्री प्रदूषण भी बढ़ रहा है।

- समुद्र वायुमंडल और जीवमंडल के संतुलन में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है

ऐसा कहा जाता है कि समुद्र का जल स्तर लगातार बढ़ रहा है, जो स्पष्ट रूप से इको-तंत्र में उत्पन्न हो रही गड़बड़ी की ओर संकेत करता है। समुद्री प्रदूषण बढ़ने से उसकी उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। समुद्र में अनेक प्रकार के जीव और वनस्पतियाँ पाई जाती हैं, जिनका अस्तित्व इस प्रदूषण से खतरे में पड़ सकता है। नदियों के माध्यम से समुद्र में बहकर आने वाले रसायन, औद्योगिक कचरा और समुद्री

- समुद्री प्रदूषण बढ़ने से उसकी उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है

जहाजों से रिसने वाले तेल के कारण समुद्र का प्रदूषण एक गंभीर समस्या बन चुका है। भारत की समुद्री सीमाओं पर भी प्रदूषण की काली छाया गहराने लगी है।

- समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा और संतुलन बनाए रखने के लिए आवश्यक कदम उठाना चाहिए

राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार, केरल के तट पर अब 20 वर्ष पहले की तुलना में 25% कम मछलियाँ पकड़ी जा रही हैं। समुद्री जल में ऑक्सीजन की मात्रा में भारी कमी के कारण समुद्री जीवों और वनस्पतियों के लिए गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। इसके अतिरिक्त, परमाणु संयंत्रों और ताप विद्युत गृहों से सीधे समुद्र में छोड़ा जाने वाला गर्म पानी समुद्री पर्यावरण को गंभीर रूप से प्रभावित कर रहा है। इस गर्म जल के कारण इसके आस-पास के क्षेत्र में समुद्री जीवों और वनस्पतियों का अस्तित्व संकट में पड़ जाता है।

- नदियों को प्रदूषित कर उनका अस्तित्व संकट में डाल दिया गया है।

हिंदू समुदाय की सबसे पवित्र और अनादिकाल से अमृतमयी मानी जाने वाली गंगा नदी, जो अपने स्वाभाविक स्व-शुद्धिकरण (Self Purification) क्षमता के लिए जानी जाती है, आज प्रदूषण के बोझ तले दबी हुई है। यमुना, जिसे पौराणिक कथाओं में मृत्यु के देवता यमराज की बहन कहा गया है, अब अपने ऐतिहासिक स्वरूप से कोसों दूर जा चुकी है। द्वापर युग की निर्मल कालिंदी, आज कलयुग के मानव द्वारा इतनी दूषित कर दी गई है कि वह एक अत्यधिक प्रदूषित मल-जल वाहिनी बनकर रह गई है।

- प्रदूषण की इस भयावह स्थिति को सुधारने की परम आवश्यकता है

प्रदूषण की इस भयावह स्थिति को सुधारने के लिए ठोस नीतियों, कड़े नियमों और जन-जागरूकता की नितांत आवश्यकता है। केवल सरकारी प्रयासों से ही नहीं, बल्कि जनसहभागिता से ही इन नदियों की पवित्रता और स्वच्छता को पुनः स्थापित किया जा सकता है।

जल प्रदूषण का नियंत्रण

जल प्रदूषण के प्रभावी नियंत्रण हेतु निवारक उपायों को अपनाना अत्यंत आवश्यक है। इन उपायों के सफल कार्यान्वयन के लिए व्यक्तियों, समुदायों, सामाजिक एवं आर्थिक संगठनों, स्वयंसेवी संस्थाओं तथा राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सरकारी सहायता और सहयोग अपेक्षित है।

आम जनता को जल प्रदूषण एवं उसके दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक करने के लिए व्यापक शिक्षा और प्रचार-प्रसार आवश्यक है। सरकार को जल प्रदूषण नियंत्रण से

- आम जनता को जल प्रदूषण एवं उसके दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक कराना चाहिए

संबंधित प्रभावी एवं व्यवहारिक नियम और कानून बनाने चाहिए। व्यक्तियों, समुदायों, सामाजिक संगठनों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों, कर्मचारियों, सरकारी अधिकारियों तथा उद्योग मालिकों को इन नियमों का कड़ाई से पालन करना अनिवार्य होगा। जो भी व्यक्ति या संस्थान इन नियमों का उल्लंघन करेगा, उसे कठोर दंड और भारी आर्थिक जुर्माने का सामना करना चाहिए। इस प्रकार के कठोर नियम और उनके प्रभावी क्रियान्वयन से जल प्रदूषण पर प्रभावी नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।

वायु प्रदूषण :

वायु सभी जीवधारियों और पेड़-पौधों की जीवनदायनी है। बिना वायु के कोई भी प्राणी ज़िंदा नहीं रह सकता।

- औद्योगिक क्षेत्र में कोयला पेट्रोल और बिजली से चलने वाले सभी माध्यम गैस पैदा करते हैं।
- मोटर वाहनों और कारखानों का धुआँ।
- कोहरा, धूल, धुआँ, ईंधन, सीवर, परिवहन, बिजली उत्पादन, तेल शोधन, कूड़ा-कचरा आदि
- वायुमंडल में प्रदूषण कभी प्राकृतिक कारणों से भी होता है जैसे तेज़ाबी बारिश, ज्वालामुखी के फटने, धूल भरी आंधी चलने या जंगलों में आग लग जाने से। किंतु अधिकांश प्रदूषण का उत्तरदायी मनुष्य स्वयं है। कल कारखानों, मोटर-गाड़ियों, लकड़ी जलाने से उठने वाले धुएँ, परमाणु ऊर्जा आदि से भी जलवायु का प्रदूषण होता है।

- अधिकांश प्रदूषण का उत्तरदायी मनुष्य स्वयं है

- कारखानों से उठता धुआँ, गैस,राख और धूल का आतंक चारों ओर दिखाई दे रहा है। थर्मल प्लांट धातु और रासायनिक फैक्टरियाँ, तेल शोधक कारखाने, सीमेंट के कारखाने वायु प्रदूषण के बहुत बड़े साधन माने जाते हैं।
- वायु प्रदूषण का एक बहुत बड़ा ख़तरा परमाणु परीक्षणों और रासायनिक युद्धों से है। यह सर्वज्ञात तथ्य है कि रेडियोधर्मिता और विकिरणन का मानव और जीव जगत पर कितना प्रभाव पड़ता है। रासायनिक गैस में भी युद्ध में जिस मात्रा में प्रयुक्त होने लगी हैं वह भी ख़तरे की सूचक हैं। उसमें सैनिक तो मरते ही हैं नागरिक भी प्रभावित होते हैं।

ध्वनि प्रदूषण

ध्वनि जब शोर बन जाती है और इस अवांछित शोर से हमारे शरीर के अंदर अशांति (Restlessness) उत्पन्न होती है तो हम उसे ध्वनि प्रदूषण कहते हैं।

ध्वनि प्रदूषण के दुष्प्रभाव/ Bad Impact of Noise Pollution-

ध्वनि प्रदूषण के दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैं-

- मनोवैज्ञानिक और स्वास्थ्य संबंधी दुष्प्रभाव।
- श्रवणेन्द्रिय संबंधी दुष्प्रभाव।
- सामाजिक दुष्प्रभाव।

क) मनोवैज्ञानिक और स्वास्थ्य संबंधी दुष्प्रभाव :

- मानव शरीर की हार्मोन प्रणाली को भी प्रभावित करता है

ध्वनि प्रदूषण के कारण लोगों में अशांति, बेचैनी और चिड़चिड़ापन बढ़ जाता है, जिससे वे मानसिक और शारीरिक रूप से थकान महसूस करने लगते हैं। यह प्रदूषण मानव शरीर की हार्मोन प्रणाली को भी प्रभावित करता है, जिससे विभिन्न प्रकार की शारीरिक और मानसिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। लंबे समय तक ध्वनि प्रदूषण के संपर्क में रहने वाले व्यक्तियों को न्यूरोटिक मेंटल डिसऑर्डर (Neurotic Mental Disorder) होने का खतरा रहता है।

ख) श्रवणेन्द्रिय पर दुष्प्रभाव/ Bad Impact on Sense of Hearing :

ध्वनि प्रदूषण से कान में दो प्रकार की क्षति होती है-एक तो अस्थाई क्षति और दूसरा स्थाई क्षति। अस्थाई क्षति दवा और सावधानी बरतने से उपचारित हो जाती है किंतु स्थाई क्षति में प्रायः कान का पर्दा क्षतिग्रस्त हो जाता है।

ग) सामाजिक दुष्प्रभाव :

- ध्वनि प्रदूषण के कारण विभिन्न प्रकार की शारीरिक और मानसिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं

ध्वनि प्रदूषण के कारण जब मनुष्य अनिद्रा, बेचैनी, स्मृति भंग, उच्च रक्तचाप और थकान जैसी समस्याओं से ग्रस्त होता है, तो उसकी कार्यक्षमता प्रभावित होती है, जिससे उसकी आजीविका पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इससे न केवल पीड़ित व्यक्ति बल्कि उस पर आश्रित लोग भी आर्थिक संकट का सामना करने को मजबूर होते हैं।

ओज़ोन संकट

हमारे वायुमंडल में पृथ्वी से लगभग 15 किलोमीटर की ऊँचाई पर ओज़ोन गैस

की एक परत मौजूद है, जो सूर्य की घातक पराबैंगनी किरणों को पृथ्वी की सतह तक पहुँचने से रोकती है। हालाँकि, बढ़ते पर्यावरणीय प्रदूषण के कारण इस परत का संतुलन बिगड़ने लगा है। मुख्य रूप से क्लोरोफ्लोरोकार्बन (CFC) जैसे रसायनों के प्रयोग से वायुमंडल में ओज़ोन की मात्रा कम हो रही है। आज ओज़ोन परत का क्षरण एक वैश्विक समस्या बन चुका है। यदि यह परत पूरी तरह नष्ट हो गई, तो पराबैंगनी किरणों के प्रभाव से जीवों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा।

- आज ओज़ोन परत का क्षरण एक वैश्विक समस्या बन चुका है।

पारिस्थितिक समस्याएँ बनाम पर्यावरणीय नैतिकता

प्रकृति अपनी साम्यावस्था में रहने का प्रयास हमेशा ही करती रही है। उसके यह प्रयास स्वचालित तथा स्व नियंत्रित हुआ करते हैं परंतु मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो की प्रकृति के इन कार्यों में व्यवधान डालकर प्रकृति की साम्यावस्था को विकृत करने पर तुला हुआ है जो कि उसके स्वयं के लिए एवं संपूर्ण प्राणी जगत तथा भौतिक जगत के लिए कदापि हितकर नहीं होगा। मानव अभी तक अपनी भोग वृत्ति की आकांक्षा के वशीभूत होकर ही प्रकृति को नुकसान पहुँचाने में लगा हुआ है। इसका एकमात्र कारण उसका लालच है। समाज तथा सरकार ने कानूनी प्रावधानों के रूप में कई प्रकार के नियम अधिनियम तथा कानून का निर्माण किया है जैसे

- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986
- वन्य जीवन (संरक्षण) अधिनियम 1972
- वन संरक्षण अधिनियम 1980
- जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम 1974
- जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण उपकर अधिनियम 1977

इसके अतिरिक्त अन्य बहुत से अधिनियम तथा भारतीय दंड संहिता की धाराओं के द्वारा पर्यावरण को संरक्षित रखने के लिए कानून तथा संहिताओं की लंबी सूची है। इन कानून और अधिनियमों को लागू करना केवल सरकार का काम नहीं है। इसमें जन-सामान्य की भागीदारी हुए बिना यह अधिनियम और कानून केवल किताबों की शोभा ही बढ़ाते रहेंगे। अतः समाज के प्रत्येक नागरिक का यह नैतिक दायित्व है कि अपने देश और अपनी मिट्टी के प्रति अपने कर्तव्य को निभाएँ।

- प्रत्येक नागरिक को अपनी मिट्टी के प्रति अपने कर्तव्य निभाना है

जल, जंगल, ज़मीन से जुड़ी संवेदनाएँ : प्रदुषण निवारण में जन-सहभागिता

प्रकृति और मानव के बीच एक गहरा आत्मीय बंधन है - यह जन्मों का संगम है। जिस प्रकार चंद्रमा का किरणों से, सूरज का आकाश से, और खुशबू का पवन से अटूट संबंध है, उसी प्रकार मानव का रिश्ता प्रकृति से है। ग्रह, उपग्रह, आकाश, सूरज, चंद्रमा, समुद्र, वन और समस्त जीव-जगत हमारे अस्तित्व का अभिन्न हिस्सा हैं। यदि ये नहीं रहेंगे, तो हम भी नहीं रहेंगे।

- मानव का गहरा आत्मीय रिश्ता प्रकृति से है

- प्रकृति नहीं रहेगी, तो हम और अपनी संस्कृति भी नहीं रहेगी

वायु हमारे सांसों के तार से हमें भीतर और बाहर की दुनिया से जोड़ती है, और जल हमारे जीवन का आधार है। हम संपूर्ण विश्व का अंश हैं, और विश्व हमसे जुड़ा है-जो वह है, वही हम हैं-'तत्त्वमसि'। हमारे जीवन का हर सूत्र प्रकृति के प्रत्येक तत्व से जुड़ा हुआ है। यदि प्रकृति नहीं रहेगी, तो न हम रहेंगे और न ही हमारी संस्कृति। हमारी संस्कृति वही है, जो एक वृक्ष, एक पत्ती, एक फूल, एक चींटी, एक चिड़िया-सभी में एक समान चेतना को देखती है और 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' के सिद्धांत पर विश्वास रखती है।

- मनुष्य की भौतिकवादी जीवनशैली ने प्रकृति को असंतुलित कर दिया है

पृथ्वी केवल किसी एक तत्व का नाम नहीं, बल्कि जल, वायु, अन्न, जीव-जंतु और संपूर्ण पर्यावरण का सामूहिक स्वरूप है। इस कारण से इसे पर्यावरण की धारक माना गया है। आदिकाल से ही मनुष्य प्रकृति के अनुरूप जीवन जीने में संलग्न रहा है, किंतु आधुनिकता के चलते यह संतुलन बिगड़ता जा रहा है। विज्ञान प्रकृति पर विजय पाने के उद्देश्य से उसे नष्ट करने में जुटा हुआ है। मनुष्य की भौतिकवादी जीवनशैली ने प्रकृति को असंतुलित कर दिया है। अपनी सुविधा और समृद्धि के लिए उसने प्रकृति का अंधाधुंध दोहन कर उसे प्रदूषित कर दिया है।

- प्रकृति को समझना और उसके साथ सामंजस्य स्थापित करना है

आदिवासी समाज ने आज भी प्रकृति से अपना रागात्मक संबंध बनाए रखा है। अत्याधुनिक समय में भी उन्होंने अपनी नैसर्गिकता, संस्कृति और परंपरागत जीवनशैली को बरकरार रखा है। पर्यावरण की समस्याओं का समाधान केवल नारेबाज़ी और भाषणों से संभव नहीं है; इसके लिए सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। प्रकृति को समझना और उसके साथ सामंजस्य स्थापित करना जरूरी है, जिसे आदिवासी समाज भली-भांति समझता है। वे अपने जल, जंगल और ज़मीन के लिए प्राणों की आहुति तक देने को तत्पर रहते हैं।

- प्रकृति की रक्षा और सम्मान करना हमारा दायित्व है।

आज प्रकृति को बचाने के लिए इसी भावना की आवश्यकता है। चहुँमुखी विकास के इस युग में पुनः पुरानी प्राकृतिक अवस्था में लौटना संभव नहीं है, किंतु इतना अवश्य किया जा सकता है कि मनुष्य प्रकृति में अपने हस्तक्षेप को सीमित करे और यह समझे कि उसे केवल प्रकृति से लेना ही नहीं, बल्कि उसे देना भी है। प्रकृति का उपभोग मात्र करने के बजाय उसकी रक्षा और सम्मान भी करना अनिवार्य है।

- प्रकृति की सुरक्षा एवं संरक्षण की दिशा में सभी प्रयासों का सख़्त पालन करना है

आज पूरा विश्व जागरूक हो चुका है और प्रकृति की सुरक्षा को लेकर गंभीर चिंतित है। पिछले कई वर्षों में विश्व के सभी देशों ने इस महत्वपूर्ण विषय को समझा है और इसके संरक्षण की दिशा में प्रयासरत हैं। इस विषय पर अनेक गोष्ठियाँ और सम्मेलन हो चुके हैं, लेखन और कानून बन चुके हैं, आंदोलन और जन-जागृति भी हो चुकी है। अब आवश्यकता है कि इन सभी प्रयासों का सख़्ती से पालन किया जाए। केवल चर्चा करने से समाधान नहीं मिलेगा - अब ठोस कार्य करने का समय आ गया है। अकेले प्रयास पर्याप्त नहीं होंगे, बल्कि प्रकृति के संरक्षण के लिए जन - सहभागिता ही सबसे प्रभावी उपाय सिद्ध हो सकती है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

गंगा हो या यमुना, गोमती हो या क्षिप्रा, कृष्णा हो या कावेरी-हर नदी को गंदे नाले में बदलने पर इंसान तुला हुआ है। औद्योगीकरण और नगरीकरण की अंधी दौड़ ने हमें ऐसी रणभूमि में ला खड़ा किया है, जहाँ सब कुछ है, पर 'जीवन' नहीं। वृक्ष लगातार कटते जा रहे हैं, खेत सिमटते जा रहे हैं, कंक्रीट के जंगल फैलते जा रहे हैं, प्राणवायु मलिन होती जा रही है, मिट्टी की सौंधी खुशबू गायब हो रही है। अधिक उत्पादन की लालसा में रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक प्रयोग हो रहा है, हर तरफ़ शोर-शराबा बढ़ रहा है, और हम आँखें मूँदकर स्वयं को यह धोखा दे रहे हैं कि हम विकास की ओर बढ़ रहे हैं।

यह इंसान की प्रवृत्ति है कि वह हर समस्या और दोष का जिम्मा दूसरों पर डाल देता है। लेकिन आखिर कब तक? अब समय आ गया है कि हम यह सोचना छोड़ दें कि यदि बाकी लोग कुछ नहीं कर रहे, तो मैं क्यों करूँ? शुरुआत हमें स्वयं से करनी होगी-हम सुधरेंगे, युग सुधरेगा! विनाश की आहट हम आज भी सुनने को तैयार नहीं, लेकिन हमारे मनीषियों और चिंतकों ने इसे शताब्दियों पूर्व ही भाँप लिया था। इसी कारण उन्होंने प्रकृति में देवत्व का सान्निध्य बताया और उसे संरक्षित रखा। लेकिन आज का मानव न देवत्व को मानता है, न प्रकृति को और इसी कारण उसके साथ मनचाहा व्यवहार करता है।

अब हमें इस भौतिकता और अंधे विकास की नींद से जागना होगा। प्रकृति के महत्व को आत्मसात करना होगा और निष्काम भाव से 'मनसा, वाचा, कर्मणा' पर्यावरण संरक्षण की प्रतिज्ञा लेनी होगी। समय की माँग यही है कि हम विकास और पर्यावरण को साथ लेकर चलें। मानव जागृति और चहूँमुखी विकास का स्वर्णिम भविष्य केवल स्वस्थ पर्यावरण के बिना संभव नहीं। हमारे कार्यशैली, जीवनशैली और नियमों में ऐसे बदलाव लाने होंगे, जिससे सामाजिक और आर्थिक प्रगति द्रुत गति से हो, साथ ही पर्यावरण भी सुरक्षित रहे।

शासन तंत्र में नियम-कानून बनाने वाला भी इंसान है और उन्हें तोड़ने वाला भी वही। अब केवल मानव का आत्मिक अनुशासन ही पर्यावरण को बचा सकता है। प्रकृति को विकृत होने से रोकना, उसे परिष्कृत करना, तथा सभी चेतन-अचेतन घटकों के साथ आत्मीय संबंध बनाए रखना हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। जो इसकी अवहेलना कर रहा है, वह उस मूर्ख के समान है जो जिस डाल पर बैठा है, उसी को काट रहा है।

यह हमारा राष्ट्रीय और सांस्कृतिक कर्तव्य है कि हम प्रकृति को संजोए रखें-पेड़ लगाएँ, बारिश का पानी बचाएँ, तालाब और सरोवरों का निर्माण करें और उनका संरक्षण सुनिश्चित करें। मनुष्य का जीवन तभी सार्थक होगा जब वह प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करेगा। प्रकृति संरक्षण के इस महायज्ञ में हमें अपनी भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. पारिस्थितिक समस्याओं पर विचार कीजिए।

2. प्रदूषण के कारण और निवारण पर एक लेख लिखिए।
3. जल, जंगल और ज़मीन से जुड़ी संवेदनाओं पर अपने विचार लिखिए।
4. पर्यावरण नैतिकता पर एक टिप्पणी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के. के. सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य - डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएँ एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस.डॉ. एस आर जयश्री।
2. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
3. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
4. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
5. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
6. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
7. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
8. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 4

भारत के प्रमुख पारिस्थितिक आन्दोलन

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- भारत में हरित क्रांति के बारे में समझता है
- भारत के प्रमुख पारिस्थितिक आन्दोलनों से परिचित होता है
- भारत में हरित क्रान्ति के बारे में जानता है
- चिपको आंदोलन समझता है
- नर्मदा बचाओ आंदोलन से परिचय होता है

Background / पृष्ठभूमि

वन संरक्षण और वृक्षारोपण जैसे कार्यक्रम केवल सरकारी नियमों या प्रशासनिक प्रयासों से ही सफल नहीं हो सकते, बल्कि इसके लिए जन जागरूकता और सामाजिक चेतना का जागृत होना अनिवार्य है। जब समाज का प्रत्येक व्यक्ति यह समझेगा कि वन संरक्षण न केवल उसके लिए, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी आवश्यक है, तो यह कार्य स्वतः ही आगे बढ़ेगा।

भारत में वन संरक्षण की एक समृद्ध सामाजिक परंपरा रही है, और वन यहाँ की संस्कृति का अभिन्न अंग हैं। हमारे यहाँ पीपल, बरगद आदि जैसे कई वृक्षों की पूजा की जाती है, जो वृक्ष संरक्षण का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

वन संरक्षण में स्वयंसेवी और गैर-प्रशासनिक संस्थाओं की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। विश्वभर में कई संस्थाएँ, जैसे कि 'ग्रीन हाउस' और अन्य संगठन, पर्यावरण संरक्षण के कार्य में संलग्न हैं। इसी तरह, भारत में भी कई आंदोलन हुए हैं, जो पर्यावरण संरक्षण की दिशा में कार्यरत रहे हैं। इस इकाई में, हम ऐसे कुछ प्रमुख आंदोलनों पर विस्तृत चर्चा करेंगे।

Keywords / मुख्य बिन्दु

वन संरक्षण, बिश्नोई आन्दोलन, चिपको आन्दोलन, अप्पिको आन्दोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, प्लाचीमडा आन्दोलन, टिहरी डाम आंदोलन।

Discussion / चर्चा

- पर्यावरण की समझ विकसित होने में लंबा समय लगा है।

पर्यावरण की समझ विकसित होने में लंबा समय लगा है। भारत जैसे देश में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा जनजातीय क्षेत्र, ग्रामीण जीवन-शैली और धार्मिक मान्यताओं में अंतर्निहित थी। इस दौर में भी जब वैधानिक रूप से पर्यावरण को क्षति पहुँचाने के दृष्टिगत कोई नीति-कानून नहीं बने थे तब भी अनेक ऐसे उदाहरण है जहाँ लोगों ने स्वयं जीव-जगत को बचाने के लिए प्रयास किया था। पर्यावरण के प्रति वैश्विक समाज विकसित होने का कारण उन आंदोलनों को माना जा सकता है जिसके मूल में जल, जंगल और ज़मीन से जुड़े जन-अधिकारों के विषय थे। उदाहरण के लिए टिहरी बचाओ आंदोलन, गंगा मुक्ति आंदोलन, बिश्नोई आंदोलन, चिपको आंदोलन, अप्पिको आंदोलन, साइलेंट घाटी आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, टिहरी बचाओ आंदोलन आदि। भारत के प्रमुख पारिस्थितिक आंदोलनों के बारे में हम यहाँ विस्तार से चर्चा करेंगे।

भारत में हरित क्रांति

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत खाद्यान्न और अन्य कृषि उत्पादों की भारी कमी से जूझ रहा था। वर्ष 1947 में स्वतंत्रता मिलने से पहले, बंगाल में भीषण अकाल पड़ा था, जिसमें लाखों लोगों की मृत्यु हुई थी। इस संकट का मुख्य कारण कृषि संबंधी औपनिवेशिक शासन की कमज़ोर नीतियाँ थीं। उस समय देश की जनसंख्या लगभग 30 करोड़ थी, जो कि वर्तमान जनसंख्या का लगभग एक-चौथाई थी, लेकिन खाद्यान्न उत्पादन इतना कम था कि इतनी जनसंख्या के लिए भी अनाज की पर्याप्त आपूर्ति संभव नहीं थी।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद वैश्विक स्तर पर अनाज और कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए शोध किए जा रहे थे, और कई वैज्ञानिक इस क्षेत्र में कार्य कर रहे थे। इस संदर्भ में प्रोफेसर नॉर्मन बोरलॉग प्रमुख थे, जिन्होंने गेहूँ की उच्च उपज वाली हाइब्रिड प्रजाति का विकास किया। वहीं, भारत में हरित क्रांति के जनक एम.एस. स्वामीनाथन को माना जाता है, जिन्होंने कृषि सुधारों में अहम भूमिका निभाई।

- भारत में हरित क्रांति के जनक एम.एस. स्वामीनाथन

एम.एस. स्वामीनाथन

1960 के मध्य में स्थिति और भी दयनीय हो गई जब पूरे देश में अकाल की स्थिति बनने लगी। उन परिस्थितियों में भारत सरकार ने विदेशों से हाइब्रिड प्रजाति के बीज

- 1966-67 में भारत में हरित क्रांति को औपचारिक तौर पर अपनाया

माँगाए। अपनी उच्च उत्पादकता के कारण इन बीजों को उच्च उत्पादकता किस्में (High Yielding Varieties- HYV) कहा जाता था। सर्वप्रथम HYV को वर्ष 1960-63 के दौरान देश के 7 राज्यों के 7 चयनित जिलों में प्रयोग किया गया और इसे गहन कृषि जिला कार्यक्रम (Intensive Agriculture district programme - IADP) नाम दिया गया। यह प्रयोग सफल रहा तथा वर्ष 1966-67 में भारत में हरित क्रांति को औपचारिक तौर पर अपनाया गया।

- उन्नत किस्म के बीजों के प्रयोग में सिंचाई के लिये अधिक पानी, उर्वरक, कीटनाशक की आवश्यकता

मुख्य तौर पर हरित क्रांति देश में कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिये लागू की गई एक नीति थी। इसके तहत अनाज उगाने के लिये प्रयुक्त पारंपरिक बीजों के स्थान पर उन्नत किस्म के बीजों के प्रयोग को बढ़ावा दिया गया। पारंपरिक बीजों के स्थान पर HYVs के प्रयोग में सिंचाई के लिये अधिक पानी, उर्वरक, कीटनाशक की आवश्यकता होती थी। अतः सरकार ने इनकी आपूर्ति हेतु सिंचाई योजनाओं का विस्तार किया तथा उर्वरकों आदि पर सब्सिडी देना प्रारंभ किया। प्रारंभ में HYVs का प्रयोग गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा और मक्का में ही किया गया तथा गैर खाद्यान्न फसलों को इसमें शामिल नहीं किया गया। परिणामस्वरूप भारत में अनाज उत्पादन में अत्यंत वृद्धि हुई।

हरित क्रांति के प्रभाव:

- भारत अनाज उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर

हरित क्रांति से देश में खाद्यान्न उत्पादन तथा खाद्यान्न गहनता दोनों में तीव्रवृद्धि हुई और भारत अनाज उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भर हो सका। हरित क्रांति के बाद कृषि में नवीन मशीनों जैसे - ट्रैक्टर, हार्वेस्टर, ट्यूबवेल, पंप आदि का प्रयोग किया जाने लगा। इस प्रकार तकनीकी के प्रयोग से कृषि का स्तर बढ़ा। कृषि के मशीनीकरण के परिणामस्वरूप देश में इससे संबंधित उद्योगों का अत्यधिक विकास हुआ।

- ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के नए अवसर विकसित

हरित क्रांति के फलस्वरूप कृषि के विकास के लिये आवश्यक संरचनाएँ जैसे- परिवहन सुविधा हेतु सड़कें, ट्यूबवेल द्वारा सिंचाई, ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत आपूर्ति, भंडारण केंद्रों और अनाज मंडियों का विकास होने लगा। विभिन्न फसलों के लिये न्यूनतम समर्थन मूल्य (Minimum Support Price- MSP) व अन्य सब्सिडी सेवाओं का प्रावधान भी इसी समय शुरू किया गया। हरित क्रांति तथा मशीनीकरण से उत्पादन में हुई बढ़ोतरी के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के नए अवसर विकसित हुए। हरित क्रांति की वजह से भारत के ग्रामीण समाज में व्यापक स्तर पर बदलाव हुए इनमें से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण था ग्रामीण समाज का बाज़ारोन्मुख व गतिशील होना। इसका परिणाम यह हुआ कि धनी व निर्धन किसानों के बीच असमानता बढ़ती गई।

पर्यावरणीय गिरावट:

- रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और सिंचाई का गहन उपयोग

हरित क्रांति कृषि नवाचारों की एक श्रृंखला थी जिसका उद्देश्य खाद्य उत्पादन में वृद्धि करना और गरीबी को कम करना था। हरित क्रांति के सकारात्मक पहलुओं के साथ नकारात्मक पहलू भी थे। हरित क्रांति के कारण रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और सिंचाई का गहन उपयोग हुआ, जिसका पर्यावरण पर हानिकारक प्रभाव पड़ा।

रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी का क्षरण और जल निकायों का प्रदूषण हुआ, जिसके परिणामस्वरूप पारिस्थितिक तंत्र को दीर्घकालिक नुकसान हुआ।

रसायनों का अंधाधुंध और असंगत उपयोग मिट्टी, हवा और पानी तथा पशुओं को दिए जाने वाले चारे को प्रदूषित करता है। यह पशुओं की बढ़ती उत्पादक और प्रजनन स्वास्थ्य समस्याओं के महत्वपूर्ण कारणों में से एक हो सकता है।। हरित क्रांति की प्रक्रिया में मिट्टी, भूजल और पारिस्थितिकी तंत्र को होने वाले व्यवस्थित नुकसान की सीमा को मापने की आवश्यकता है। यदि हरित क्रांति द्वारा किए गए नुकसान को कम करने के लिए समय पर, पर्याप्त और टिकाऊ उपाय नहीं किए गए तो इससे लाभान्वित होने वाले लोगों के जीवन पर अपरिवर्तनीय परिणाम हो सकते हैं।

- पशुओं की बढ़ती उत्पादक और प्रजनन स्वास्थ्य समस्याओं के महत्वपूर्ण कारण

पर्यावरण संरक्षण के पथ पर उठे सकारात्मक कदम

पर्यावरण संरक्षण केलिए पर्यावरण कार्य बल का गठन सन 1982 में किया गया था। इंदिरा गाँधी प्रियदर्शिनी वृक्ष मित्र पुरस्कार, इंदिरा गाँधी पर्यावरण पुरस्कार, महावृक्ष पुरस्कार आदि के ज़रिये इसे सबल बना दिया। विश्व पर्यावरण दिवस-5 जून को मनाया जाता है, जो 1972 में स्टॉकहोम सम्मेलन की याद में आयोजित किया जाता है।

- विश्व पर्यावरण दिवस-5 जून

पर्यावरण संरक्षण को जन आंदोलन बनाने और जन जागरूकता बढ़ाने के लिए रेडियो व टेलीविजन कार्यक्रमों का प्रसारण किया जा रहा है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने सभी विद्यालयों और महाविद्यालयों में पर्यावरण शिक्षा को अनिवार्य करने के निर्देश दिए हैं। इसके परिणामस्वरूप, सभी विश्वविद्यालय एवं माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अपने पाठ्यक्रमों में पर्यावरण शिक्षा को सम्मिलित कर रहे हैं।

- सभी विद्यालयों और महाविद्यालयों में पर्यावरण शिक्षा अनिवार्य

1. चिपको आंदोलन

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस स्वामीनाथन के शब्दों में- चिपको आंदोलन केवल हिमालय के पर्वतीय भाग में पेड़ों की कटाई रोकने का प्रतिकारात्मक आंदोलन नहीं है यह प्रत्यक्ष दर्शन जीवंत विचारधारा तथा मौजूदा भोगवादी सभ्यता के ख़िलाफ़ बगावत है।

आधुनिक समय में पर्यावरण के महत्व को व्यापक रूप से समझा गया है। यही कारण है कि 20 वीं और 21वीं सदी कई महत्वपूर्ण पर्यावरणीय आंदोलनों की साक्षी बनी है। औद्योगीकरण के दुष्परिणाम जब स्पष्ट होने लगे, तो यह एहसास हुआ कि धरती पर जीवन तभी सुरक्षित रहेगा जब जल, जंगल और ज़मीन संरक्षित रहेंगे। इसी दिशा में सबसे महत्वपूर्ण आंदोलन चिपको आंदोलन था। जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, इस आंदोलन में ग्रामीणों ने पेड़ों से चिपककर उनकी कटाई को रोका। यह आंदोलन 17वीं सदी में बिश्नोई समुदाय द्वारा किए गए पर्यावरण संरक्षण आंदोलन की तर्ज पर आधारित था और पूर्णतः आत्मबलिदान पर केंद्रित था। इसका मुख्य उद्देश्य अपने जंगलों की रक्षा करना था।

- पर्यावरण संरक्षण आंदोलन की तर्ज पर आधारित सबसे महत्वपूर्ण आंदोलन

■ आंदोलन से जुड़े प्रमुख व्यक्ति-सुंदरलाल बहुगुणा, गौरा देवी, बचनी देवी और चंडी प्रसाद भट्ट

चिपको आंदोलन के प्रमुख नेता-इस आंदोलन से जुड़े प्रमुख व्यक्तियों में *सुंदरलाल बहुगुणा, गौरा देवी, बचनी देवी और चंडी प्रसाद भट्ट* आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस आंदोलन की पृष्ठभूमि पहाड़ी क्षेत्रों की उन वास्तविकताओं पर आधारित थी, जहाँ लोक जागरूकता का यह मानना था कि यदि जंगल नहीं रहेंगे, तो ईंधन, चारा और घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति कैसे होगी।

सुंदरलाल बहुगुणा

ब्रिटिश शासनकाल के दौरान लागू किए गए वन कानूनों का आम जनता और जनजातीय समुदायों ने सदैव विरोध किया। वर्ष 1927 में जब वन अधिनियम लागू किया गया, तब से ही लोग अपने प्राकृतिक अधिकारों के हनन को लेकर निराश और आक्रोशित थे।

■ आंदोलन उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों से जुड़ा है और इसकी शुरुआत 1972 में

चिपको आंदोलन की पृष्ठभूमि : यह आंदोलन उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों से जुड़ा है और इसकी शुरुआत वर्ष 1972 में हुई, जब वन विभाग ने 300 पेड़ों की कटाई और टेनिस रैकेट बनाने का ठेका इलाहाबाद स्थित साइमन कंपनी को दिया। लेकिन भारी जनविरोध के कारण यह ठेका रद्द कर दिया गया। इसके बाद वर्ष 1974 में वन विभाग ने लगभग ढाई हज़ार पेड़ों की कटाई का करार किया, जिससे स्थानीय लोग भड़क उठे। इस विरोध का एक बड़ा कारण वर्ष 1970 में अलकनंदा नदी में आई बाढ़ थी, जिससे भारी तबाही हुई थी। ग्रामीणों का मानना था कि यदि जंगलों की अंधाधुंध कटाई न होती, तो यह बाढ़ इतनी विनाशकारी नहीं होती।

रेणी गाँव: चिपको आंदोलन का केंद्र: इस आंदोलन का मुख्य केंद्र रेणी गाँव था, जो उत्तराखंड के चमोली जिले में भारत-तिब्बत सीमा पर स्थित है। यह गाँव ऋषिगंगा और विष्णुगंगा के संगम पर बसा हुआ है।

14 फरवरी 1974 को चंडी प्रसाद भट्ट ने एक सभा आयोजित की, जिसमें ग्रामीणों को इस कटाई के विरुद्ध जागरूक किया गया। वन विभाग ने पेड़ों की कटाई के लिए ऐसे समय का चयन किया जब अधिकांश गाँववासी चमोली में बाढ़ मुआवजा लेने गए थे और गाँव में केवल महिलाएँ और बच्चे थे।

- महिलाओं ने पेड़ों से चिपककर उन्हें कटने से बचाने का संकल्प लिया

जब ठेकेदार मज़दूरों को लेकर जंगल पहँचे, तब एक छोटी बच्ची ने इस घटना की जानकारी गौरा देवी को दी। गौरा देवी ने तुरंत अन्य ग्रामीण महिलाओं को एकत्र किया और वे सभी जंगल की ओर दौड़ पड़ीं। 21 महिलाओं ने पेड़ों से चिपककर उन्हें कटने से बचाने का संकल्प लिया। वन विभाग के अधिकारी घटनास्थल पर पहँचे और उन्हें समझाने से लेकर डराने-धमकाने तक के सभी प्रयास किए, लेकिन महिलाएँ अपने संकल्प से नहीं डगमगाईं।

- टिहरी, अल्मोड़ा, नैनीताल सहित कई स्थानों पर इस आंदोलन का प्रभाव पड़ा

चिपको आंदोलन की सफलता : समय के साथ आंदोलन को व्यापक समर्थन मिलने लगा और धीरे-धीरे इसमें महिलाओं की संख्या बढ़ती गई। अंततः वन विभाग को अपने कदम पीछे खींचने पड़े। रेणी गाँव की इन वीर महिलाओं ने इतिहास रच दिया और यही आंदोलन पूरे उत्तराखंड में फैल गया। टिहरी, अल्मोड़ा, नैनीताल सहित कई स्थानों पर इस आंदोलन का प्रभाव पड़ा, जिससे जंगलों की कटाई और नीलामी पर रोक लगा दी गई।

- चिपको शब्द उत्तराखंड तक ही सीमित नहीं है अब पूरे विश्व का जाना पहचाना नाम तथा दर्शन है।

चिपको आंदोलन ने पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में एक नई दिशा प्रदान की और यह न केवल भारत बल्कि पूरे विश्व में एक प्रेरणादायक घटना बन गया। वर्षों से चिपकने का कार्यक्रम वृक्षों को काटने से रोकने तक ही सीमित नहीं रहा अब यह एक ही प्रजाति के वृक्षों को रोपण रोकने, वर्षों में गहरे घाव करके तारपीन तथा विरोजा निकलने पर प्रतिबंध लगाने, यूकेलिप्टस के रोपण पर प्रतिबंध लगाने तक विस्तृत हो गया अब चिपको शब्द उत्तराखंड तक ही सीमित नहीं है चिपको अब पूरे विश्व का जाना पहचाना नाम तथा दर्शन है।

- चिपको आंदोलन को वर्ष 1987 में सम्यक जीविका पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

पर्यावरणविद् सुंदरलाल बहुगुणा ने अपनी अदम्य जिजीविषा से चिपको आंदोलन को स्वरूप देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने न केवल टिहरी में इस आंदोलन के प्रणेता के रूप में वनों के विनाश को रोका, बल्कि लगभग 5000 किलोमीटर की पदयात्रा कर जन जागरूकता भी फैलाई। उनके अथक संघर्षों का ही परिणाम था कि तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने पहाड़ी क्षेत्रों में पेड़ों की कटाई और जंगलों की नीलामी पर 20 वर्षों के लिए रोक लगा दी।

चिपको आंदोलन को वर्ष 1987 में सम्यक जीविका पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस आंदोलन के विस्तार में कई लोगों का योगदान अविस्मरणीय है। चिपको आंदोलन के प्रसिद्ध कवि घनश्याम रतूड़ी भी इनमें से एक थे, जिनके रचित पर्यावरण गीत आज भी पहाड़ों में गाए जाते हैं।

सुंदरलाल बहुगुणा को वर्ष 2009 में पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया, जबकि चंडी प्रसाद भट्ट को 1982 में रमन मैग्सेसे पुरस्कार से नवाज़ा गया था।

2 मूक घाटी आंदोलन

केरल की साइलेंट वैली लगभग 90 वर्ग किलोमीटर में फैली एक सुंदर और हरी-भरी घाटी है। इसे पहले सैरंध्री नाम से जाना जाता था, जो पांडवों की पत्नी द्रौपदी का दूसरा

नाम है। साइलेंट वैली भारत के गिने-चुने वर्षा वनों में से एक है। ऊँची चोटियों से घिरा यह जंगल इतना घना है कि यहाँ पहुँचना बेहद कठिन है।

- साइलेंट वैली में कुंतीपुझा नदी पर बाँध बनाने का विचार

साइलेंट वैली में कुंतीपुझा नदी पर बाँध बनाने का विचार पहली बार 1920 के दशक में सामने आया था, क्योंकि यह नदी केरल में ऊँचाई से गिरते हुए मैदानी क्षेत्रों में प्रवाहित होती है, जो ऐसी परियोजनाओं के लिए आदर्श मानी जाती है। केरल सरकार कुंतीपुझा नदी पर 131 मीटर ऊँचा बाँध बनाना चाहती थी, जो 240 मेगावाट बिजली उत्पन्न करता और केरल के पालक्काड और मलप्पुरम जिलों की हज़ारों हेक्टेयर भूमि को सिंचित कर सकता था।

साइलेंट घाटी आंदोलन की शुरूआत-

- साइलेंट वैली जैव विविधता से संपन्न

जैसे ही बाँध बनने की घोषणा हुई लोगों ने उसका विरोध शुरू कर दिया। शांति घाटी (साइलेंट वैली) अपनी हरियाली, पेड़-पौधों और जंगल के लिए जानी जाती है। यह क्षेत्र जैव विविधता से संपन्न है, इसलिए लोगों ने इसका विरोध शुरू कर दिया। शांति घाटी में लंबी पूँछ वाले बंदर भी पाए जाते हैं जिनको दुर्लभ प्रजाति समझा जाता है। 'स्नेक मैन' के नाम से जाने जाने वाले रोमुलस व्हिटेकर जिन्होंने मद्रास सर्प उद्यान रेप्टाइल पार्क की स्थापना की थी, उन्होंने सबसे पहले वाँध योजना का विरोध करना शुरू किया। 1977 में केरला वन रिसर्च संस्थान ने सर्वे करना शुरु किया कि वाँध बनने के बाद पर्यावरण को कितना नुकसान होगा।

साइलेंट वैली

- सुगता कुमारी " टीचर" 'शांति घाटी बचाओ' (सेव साइलेंट वैली) का नारा दिया।

शांति घाटी को बचाने के लिए 'केरल शास्त्र साहित्य परिषद' ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने कई पब्लिक मीटिंग की, इसमें लोगों को वाँध बनने के बाद पर्यावरण को होने वाले नुकसान के बारे में विस्तार से जानकारी दी। सुगता कुमारी 'टीचर' जो केरल की विख्यात कवयित्री थीं, वह भी इस आंदोलन में जुड़ गई। उन्होंने 'शांति घाटी बचाओ' (सेव साइलेंट वैली Save Silent Valley) का नारा दिया।

शांति घाटी को बचाने के लिए उन्होंने कई कविताएँ भी लिखीं। मरत्तिनु स्तुति (Ode to a Tree) नाम की एक कविता इस आंदोलन की पहचान बन गई थी। इस कविता को आवाज़ सुगता कुमारी जी ने दी थी। जिन्होंने आंदोलन में लोगो को जागरूक बनाया।

सुगताकुमारी

सलीम अली

- डॉक्टर सलीम अली जलविद्युत बाँध परियोजना को बंद करने की अपील की

- डॉ एम. एस. स्वामीनाथन शांति घाटी को एक आरक्षित पर्यावरण पार्क बनाने की बात कही

- प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने केरल सरकार से इस जलविद्युत बाँध परियोजना को बंद करने की बात कही

- 15 नवंबर 1984 को साइलेंट वैली को राष्ट्रीय उद्यान घोषित कर दिया गया

डॉक्टर सलीम अली जो एक प्रसिद्ध पक्षी विज्ञानी थे और मुंबई नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी के सदस्य थे उन्होंने इस जलविद्युत बाँध परियोजना को बंद करने की अपील की। शांति घाटी के पेड़ों को काटने को रोकने के लिए केरला हाई कोर्ट में याचिका दायर की गई।

डॉ एम. एस. स्वामीनाथन जो एक जाने-माने कृषि वैज्ञानिक थे और कृषि विभाग के सचिव थे। उन्होंने शांति घाटी को एक आरक्षित पर्यावरण पार्क बनाने की बात कही। उन्होंने कहा कि शांति घाटी के 8.9 किलोमीटर वर्ग क्षेत्र और इससे लगे हुए अमाराबालम (80 वर्ग किमी), अट्टप्पाडी(120 वर्ग किमी), जैसे क्षेत्रों को मिलाकर एक प्राकृतिक पार्क बनाने की बात कही।

1980 जनवरी महीने में केरल हाईकोर्ट ने फिर से शांति घाटी के पेड़ों को काटने की अनुमति दे दी, लेकिन तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने केरल सरकार से इस जलविद्युत बाँध परियोजना को बंद करने की बात कही। उन्होंने कहा कि इस पर विस्तार से विचार करना चाहिए, उसके बाद ही बाँध बनाना चाहिए। 1982 में एक कमेटी बनाई गई जिसका चेयरमैन एन जी के मेनन और माधव गाडगिल, दिलीप के विश्वास को बनाया गया।

वर्ष 1980 में जब इंदिरा गाँधी दूसरी बार प्रधानमंत्री बनी तो उन्होंने केरल सरकार से बाँध का काम तब तक रोकने को कहा जब तक परियोजना के प्रभाव का पूरा मूल्यांकन नहीं हो जाता। इसका नतीजा यह हुआ कि एम जी के मेनन की अध्यक्षता में केंद्र और राज्य की एक संयुक्त समिति बनाई गई। अपनी रिपोर्ट में समिति ने कहा कि 830 हैक्टेर का जो क्षेत्र बाँध की वजह से डूबेगा वह प्रकृति द्वारा संजोये गए तटीय पारिस्थितिकी तंत्र का महत्वपूर्ण उदाहरण है। बाँध बनाने से साइलेंट वैली में लोगों की आवाजाही बढ़ेगी और जैव विविधता पर बुरा असर पड़ सकता है जिससे पूरा इकोसिस्टम गड़बड़ा जाएगा। अंततः 15 नवंबर 1984 को साइलेंट वैली को राष्ट्रीय उद्यान घोषित कर दिया गया। विकास योजनाओं को मंजूरी से पहले पर्यावरण पर इसके असर के मूल्यांकन यानी Environment Impact Assessment (EIA) के विचार इसी पर्यावरण आंदोलन से जन्म लिया है।

कुछ अन्य लोग इस कमेटी में शामिल थे। 1983 में मेनन कमेटी ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। रिपोर्ट को अच्छी तरह पढ़ने के बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने शांति घाटी में बनने वाले जल विद्युत बाँध परियोजना को बंद करने का आदेश दे दिया। 15 नवंबर 1984 को इसे एक राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा दे दिया गया और इसे संरक्षित पार्क बना दिया गया। 7 सितंबर 1985 को तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने शांति घाटी नेशनल पार्क का उद्घाटन किया। वर्तमान में यह घाटी नीलगिरी जैव विविधता पार्क के अंतर्गत संरक्षित कर ली गई है।

- 1983 में मेनन कमेटी ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की

3. नर्मदा बचाओ आन्दोलन

- नर्मदा नदी भारत की पाँचवीं सबसे बड़ी नदी है

नर्मदा बचाओ आंदोलन भारत में पर्यावरण संरक्षण के महत्वपूर्ण आंदोलनों में से एक है। नर्मदा नदी भारत की पाँचवीं सबसे बड़ी नदी है, जिसकी कुल लंबाई 1,315 किलोमीटर है। इसका लगभग 87% भाग मध्य प्रदेश में बहता है, जबकि शेष भाग महाराष्ट्र और गुजरात से होकर गुज़रता है।

- नर्मदा नदी पर निर्मित होने वाले बाँध को सरदार सरोवर परियोजना के नाम से जाना गया

वर्ष 1946 में भारत सरकार के सेंट्रल वॉटरवेज एंड इरिगेशन डिपार्टमेंट ने एक समिति का गठन किया, जिसका उद्देश्य नर्मदा घाटी में जल संसाधन से जुड़ी परियोजनाओं की प्रभावशीलता और उत्पादकता का मूल्यांकन करना था। लगभग 15 वर्षों के अध्ययन के बाद, तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने नर्मदा घाटी परियोजना के निर्माण को स्वीकृति प्रदान की। गुजरात में नर्मदा नदी पर निर्मित होने वाले बाँध को सरदार सरोवर परियोजना के नाम से जाना गया, जबकि मध्य प्रदेश में इसे नर्मदा सागर परियोजना के रूप में विकसित किया जाना था। वर्ष 1984 में इस परियोजना के शिलान्यास के कुछ समय बाद ही श्रीमती इंदिरा गाँधी का निधन हो गया, जिसके पश्चात नर्मदा सागर परियोजना का नाम बदलकर इंदिरा सागर परियोजना कर दिया गया।

- भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश सी. रामास्वामी डिस्प्यूट ट्रिब्यूनल के अध्यक्ष

नर्मदा जल विवाद और ट्रिब्यूनल का गठन: नर्मदा नदी के जल संसाधनों को लेकर गुजरात, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के बीच विवाद उत्पन्न हो गया। इस विवाद के समाधान के लिए वर्ष 1969 में नर्मदा डिस्प्यूट ट्रिब्यूनल (NDT) का गठन किया गया। इस ट्रिब्यूनल का मुख्य उद्देश्य जल विवाद को सुलझाने के साथ-साथ निर्माणाधीन बाँधों के कारण विस्थापित हो रहे लोगों के पुनर्वासन की समस्याओं का समाधान निकालना था। भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश सी. रामास्वामी इस ट्रिब्यूनल के अध्यक्ष थे।

वर्ष 1978 में NDT ने नर्मदा घाटी परियोजनाओं को हरी झंडी दे दी। ट्रिब्यूनल की एक प्रमुख सिफारिश थी कि जिन लोगों को उनकी भूमि से विस्थापित किया जा रहा है, उन्हें बदले में उतनी ही भूमि दी जानी चाहिए।

परियोजना के विरोध और नर्मदा बचाओ आंदोलन का उद्भव

1980 के दशक की शुरुआत में सरदार सरोवर परियोजना को व्यापक जन विरोध

का सामना करना पड़ा। विस्थापित लोगों को भूमि के बदले भूमि तभी दी जा सकती थी, जब वे इसके लिए कानूनी प्रमाण प्रस्तुत करते। किंतु वर्षों से वहाँ रह रहे अनपढ़ ग्रामीणों के लिए जटिल कागजी प्रक्रिया को पूरा करना बेहद कठिन था।

- आम लोग, विद्यार्थी, सामाजिक संगठन और राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ इस परियोजना के विरोध में एकजुट होने लगे

इस परियोजना के कारण तीनों राज्यों-गुजरात, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश-में बड़ी संख्या में लोग विस्थापित हो रहे थे। प्रभावित लोग, विद्यार्थी, सामाजिक संगठन और राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ इस परियोजना के विरोध में एकजुट होने लगे। मध्य प्रदेश में इस परियोजना का विरोध नर्मदा घाटी नवनिर्माण समिति, जबकि महाराष्ट्र में नर्मदा घाटी धर्म व्यवस्था समिति कर रही थी। वर्ष 1989 में इन सभी संगठनों ने मिलकर एक नए आंदोलन की शुरुआत की, जिसे आज नर्मदा बचाओ आंदोलन के नाम से जाना जाता है।

मेधा पाटेकर और बाबा आमटे का योगदानः

मेधा पाटेकर नर्मदा बचाओ आंदोलन की प्रमुख सूत्रधार के रूप में उभरीं। इस आंदोलन को और अधिक ऊर्जा तब मिली जब कुष्ठ रोग उन्मूलन के लिए जीवनभर कार्य करने वाले बाबा आमटे वर्ष 1980 में इससे जुड़ गए। अरुंधती रॉय प्रमुख लेखिका और सक्रिय कार्यकर्ता भी इससे जुड़ गए।

- भारत में पर्यावरण आंदोलनों की परिपक्वता का प्रतीक

नर्मदा बचाओ आंदोलन भारत में पर्यावरण आंदोलनों की परिपक्वता का प्रतीक है। इस आंदोलन ने पहली बार विकास और पर्यावरण के बीच संघर्ष को राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा का विषय बनाया। इस संघर्ष में केवल विस्थापित लोग ही नहीं, बल्कि वैज्ञानिक, गैर-सरकारी संगठन (NGOs) और आम जनता भी सक्रिय रूप से शामिल हुई।

- कोई भी परियोजना पर्यावरण संरक्षण और स्थानीय समुदायों के अधिकारों का भी ध्यान रखना है

नर्मदा बचाओ आंदोलन सिर्फ एक नदी बचाने का आंदोलन नहीं था, बल्कि यह पर्यावरण और विकास के बीच संतुलन की माँग का प्रतीक था। इस आंदोलन ने यह साबित किया कि कोई भी परियोजना तभी सफल मानी जा सकती है, जब उसमें पर्यावरण संरक्षण और स्थानीय समुदायों के अधिकारों का भी ध्यान रखा जाए। नर्मदा बचाओ आंदोलन जो एक जन आंदोलन के रूप में उभरा। कई समाजसेवियों, छात्रों, महिलाओं, आदिवासियों, किसानों तथा मानव अधिकार कार्यकर्ताओं का एक संगठित समूह बना।

आन्दोलन की उपलब्धियाँ:

1. विस्थापितों के पुनर्वासन और मुआवज़े के लिए सरकार द्वारा नीतियों में बदलाव।
2. नर्मदा नदी के संरक्षण और सुरक्षा के लिए सरकार द्वारा कदम उठाना।
3. पर्यावरणवादी और सामाजिक मुद्दों पर जागरूकता बढ़ाना।

4 प्लाचीमडा आन्दोलन (Plachimada Movement)

- प्लाचीमडा आंदोलन केरल में पर्यावरण संरक्षण के लिए लड़ा गया

प्लाचीमडा आंदोलन केरल के पालक्काड जिले के प्लाचीमडा गाँव में हुआ था। यह आंदोलन जल और पर्यावरण संरक्षण के लिए लड़ा गया था। इसकी शुरुआत 2002 में हुई, जब कोका-कोला कंपनी ने प्लाचीमडा में अपना संयंत्र स्थापित कर वहाँ के जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन करना शुरू कर दिया। इससे गाँव में पानी की भारी कमी हो गई और स्थानीय लोगों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा।

- कोका-कोला कंपनी के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया

इस आंदोलन में मुख्य रूप से स्थानीय महिलाएँ और किसान शामिल थे। उन्होंने कोका-कोला कंपनी के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया और न्यायालय में मामला दर्ज कराया। अंततः 2004 में केरल उच्च न्यायालय ने कोका-कोला कंपनी को प्लाचीमडा में अपना संयंत्र बंद करने का आदेश दिया। प्लाचीमडा आंदोलन जल और पर्यावरण संरक्षण का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है, जो दर्शाता है कि जब स्थानीय समुदाय अपने अधिकारों और प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा के लिए एकजुट होते हैं, तो वे बड़ी कंपनियों के खिलाफ भी सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

हाल ही में, बहुराष्ट्रीय पेय कंपनी कोका-कोला ने केरल सरकार को पालक्काड जिले के प्लाचीमडा में स्थित अपनी 35 एकड़ भूमि वापस करने की पेशकश की है। हिंदुस्तान कोका-कोला बेवरेजेज़ प्राइवेट लिमिटेड के मुख्य कार्यकारी अधिकारी, जुआन पाब्लो रोड्रिग्ज ट्रोवेटो ने मुख्यमंत्री पिनाराई विजयन को एक पत्र लिखकर संपत्ति और वहाँ की इमारतें राज्य सरकार को सौंपने के कंपनी के निर्णय की जानकारी दी। स्थानीय लोगों द्वारा पर्यावरण प्रदूषण और भूजल के अत्यधिक दोहन की शिकायतों के बाद कोका-कोला ने मार्च 2004 में प्लाचीमडा में अपनी इकाई बंद कर दी थी।

5 बिश्नोई आंदोलन

- फिल्म अभिनेता सलमान खान को काले हिरण के शिकार के मामले में न्यायालय तक ले गए

भारत में प्रथम ज्ञात पर्यावरण आंदोलन की जानकारी राजस्थान से प्राप्त होती है, जिसे बिश्नोई आंदोलन के रूप में जाना जाता है। राजस्थान का बिश्नोई समाज पर्यावरण और वन्यजीव संरक्षण के प्रति अपनी अटूट निष्ठा के लिए प्रसिद्ध है। यह समाज फिल्म अभिनेता सलमान खान को काले हिरण के शिकार के मामले में न्यायालय तक ले जाने और बिना किसी समझौते के लंबी कानूनी लड़ाई लड़ने के कारण भी चर्चा में रहा है। बिश्नोई समाज की यह जागरूकता उनकी धार्मिक आस्थाओं से जुड़ी हुई है।

सन् 1451 में राजस्थान के पीपासर गाँव में समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने वाले संत जांभेश्वर महाराज का जन्म हुआ। उन्होंने समाज के नैतिक और आध्यात्मिक

- 'बिश्नोइ' नियमों में वृक्षों की रक्षा करना और वन्य जीवों की सुरक्षा करना प्रमुख

उत्थान के लिए 29 नियम बनाए, जिनका पालन करने के कारण उनके अनुयायियों को 'बिश्नोई' कहा जाता है। इन नियमों में वृक्षों की रक्षा करना और वन्य जीवों की सुरक्षा करना प्रमुख रूप से शामिल है। बिश्नोई समाज अपने गुरु के इन आदेशों का पालन करते हुए सदैव खेजड़ी के वृक्षों की सुरक्षा के लिए प्रतिबद्ध रहा है।

जांभेश्वर जी के लगभग 300 वर्ष बाद, जोधपुर के राजा को अपने महल के निर्माण के लिए ईंधन की आवश्यकता हुई। इसके लिए उन्होंने खेजड़ली गाँव में लगे वृक्षों को काटने का आदेश दिया, क्योंकि वहाँ बड़ी संख्या में बिश्नोइयों द्वारा लगाए गए खेजड़ी के वृक्ष थे। बिश्नोई समाज ने इस आदेश का विरोध किया, लेकिन जब उनकी बात नहीं सुनी गई, तो राजा के सैनिक वृक्षों को काटने के लिए खेजड़ली पहुँचे।

- 363 बिश्नोइयों ने अपने प्राणों की आहुति देकर वृक्षों की रक्षा की

इसी गंभीर समय में इमरती देवी नामक एक साहसी महिला ने वृक्ष से चिपककर उसे कटने से बचाने का निश्चय किया। राजा के सैनिकों ने निर्दयता से उनकी हत्या कर दी। इमरती देवी के बलिदान ने बिश्नोई समाज में आत्म-बलिदान की भावना को जागृत कर दिया। इसके बाद 363 बिश्नोइयों ने अपने प्राणों की आहुति देकर वृक्षों की रक्षा की। इस ऐतिहासिक घटना को खेजड़ी आंदोलन के नाम से जाना जाता है। वन संरक्षण के लिए इस प्रकार का बलिदान विश्व इतिहास में अद्वितीय है।

- बलिदान और पर्यावरण संरक्षण के प्रति उनकी निष्ठा

आज भी बिश्नोई समाज के गाँव अन्य गाँवों से बिल्कुल अलग दिखाई देते हैं। वहाँ फैली हरियाली, विचरण करते कृष्ण मृग और दुर्लभ पक्षी देखकर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि यह गाँव बिश्नोई समाज का ही होगा। प्रत्येक वर्ष भाद्रपद मास की दशमी तिथि को खेजड़ली में 363 शहीदों की स्मृति में एक भव्य मेला आयोजित किया जाता है, जो उनके बलिदान और पर्यावरण संरक्षण के प्रति उनकी निष्ठा का प्रतीक है।

बिश्नोई समाज की यह अमर गाथा हमें सिखाती है कि प्रकृति की रक्षा के लिए निष्ठा, साहस और बलिदान आवश्यक हैं।

6. टिहरी डाम आन्दोलन

उत्तराखंड राज्य में टिहरी डाम के निर्माण के खिलाफ़ चलाया गया एक महत्वपूर्ण सामाजिक और पर्यावरणवादी आंदोलन था। यह आंदोलन 1990 के दशक में शुरू हुआ और 2004 तक चला।

- भारत के उत्तराखंड के टिहरी जिले में उभरा एक महत्वपूर्ण आंदोलन

टिहरी बाँध भारत के उत्तराखंड की पहाड़ियों में गंगा की मुख्य सहायक नदी भागीरथी पर बनाया गया है। बाँध के प्रबंधन के लिए 1988 में टिहरी हाइड्रो डेवलपमेंट कॉरपोरेशन (THDC) का गठन किया गया था। यह बाँध पर्यावरण समूहों और टिहरी और आस-पास के इलाकों के लोगों के तीव्र विरोध का विषय रहा है।

टिहरी वाँध परियोजना की पृष्ठभूमि

- स्थानीय समुदायों, कार्यकर्ताओं और पर्यावरणविदों के कड़े विरोध

टिहरी वाँध परियोजना की कल्पना भारत की बढ़ती ऊर्जा मांगों के समाधान के रूप में की गई थी। एक बार पूरा हो जाने पर यह बा बाँध उत्तरी राज्यों को जल विद्युत प्रदान करेगा। हालांकि, इस परियोजना को स्थानीय समुदायों, कार्यकर्ताओं और पर्यावरणविदों के कड़े विरोध का सामना करना पड़ा, जिन्होंने पर्यावरण, पारिस्थितिकी पर इसके प्रभाव और हजारों लोगों के विस्थापन के बारे में चिंता जताई।

- पर्यावरणीय और सामाजिक निहितार्थों के बारे में जागरूकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका

आंदोलन द्वारा उठाए गए प्रमुख मुद्दे हैं पर्यावरणीय प्रभाव, विस्थापन और पुनर्वास, भूकंपीय भेद्यता, जलवायु परिवर्तन, विकल्प और सतत विकास। कार्यकर्ताओं ने तर्क दिया कि सौर और पवन ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा विकल्पों को बढ़ावा देना पर्यावरण के लिए अधिक अनुकूल और सामाजिक रूप से न्यायसंगत होगा। परिणाम और प्रभाव टिहरी वाँध आंदोलन ने टिहरी वाँध परियोजना के पर्यावरणीय और सामाजिक निहितार्थों के बारे में जागरूकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आंदोलन की उपलब्धियाँ:

- सरकार द्वारा विस्थापितों के पुनर्वासन के लिए नीतियों में बदलाव।
- पर्यावरणवादी मुद्दों पर जागरूकता बढ़ाना।
- स्थानीय समुदाय के अधिकारों की रक्षा में मदद।

टिहरी डाम आंदोलन ने पर्यावरणवादी और सामाजिक मुद्दों पर राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा शुरू की और सरकार को विस्थापितों के अधिकारों की रक्षा के लिए कदम उठाने के लिए मजबूर किया।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

पर्यावरण संरक्षण का प्रश्न केवल विज्ञान या कानून का नहीं, बल्कि भावना और आध्यात्म का भी है। हमारा भावनात्मक विस्तार इतना व्यापक हो कि उसकी परिधि में संपूर्ण प्रकृति समाहित हो जाए। हमें प्रकृति की ओर लौटना होगा—उसके संगीत के साथ अपनी वृत्तियों की संगति बिठानी होगी और उस उदात्त, दिव्य संगीत में एकाकार होना होगा।

नर्मदा बचाओ आन्दोलन ने बड़े वाँधों के निर्माण के प्रभावों पर राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा शुरू की। इसने पर्यावरणवादी और सामाजिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया और सरकार को विस्थापितों के अधिकारों की रक्षा के लिए कदम उठाने के लिए मजबूर किया। धरती हमें एकमात्र धरोहर के रूप में मिली है। वह हमारी माता, संरक्षिका और पोषिका है। प्रकृति से हमारी कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है, वह हमारी प्रतिद्वंद्वी नहीं, बल्कि सहचर है। आत्म-नियंत्रण ही हमारा स्वचालित अंकुश होगा।

चिपको आंदोलन, मूक घाटी आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, प्लाचीमड़ा आंदोलन, टिहरी वाँध आंदोलन—इन सभी आंदोलनों से जुड़े लोग आंतरिक नैतिक आग्रह से प्रेरित हैं। यही भावना व्यापक होनी चाहिए। उनके लिए अहिंसा केवल निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं, बल्कि सक्रिय, रचनात्मक समदृष्टि है। यह केवल प्रतिरोध नहीं, बल्कि भागीदारी भी है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. जल, जंगल और ज़मीन से जुड़े आन्दोलनों पर एक निबंध लिखिए।
2. पर्यावरण नैतिकता पर एक टिपण्णी लिखिए।
3. हरित क्रांति पर एक लेख लिखिए।
4. चिपको आंदोलन पर टिपण्णी लिखिए।
5. मूक घाटी आन्दोलन पर टिपण्णी लिखिए।
6. नर्मदा बचाओ आन्दोलन पर टिपण्णी लिखिए।
7. प्लाचीमडा आन्दोलन पर टिपण्णी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य - डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएँ एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस, डॉ. एस आर जयश्री।
2. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
3. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
4. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
5. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
6. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
7. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
8. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

BLOCK 02

पारिस्थितिक दर्शन की विभिन्न शाखाएँ

Block Content

Unit 1: पारिस्थितिकी दर्शन

Unit 2: गहन पारिस्थितिकवाद (Deep Ecology)

Unit 3: पारिस्थितिक साम्यवाद (Eco Marxis)

Unit 4. पारिस्थितिक नारिवाद (Eco Feminism)

इकाई 1

पारिस्थितिक दर्शन

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- पारिस्थितिक दर्शन से परिचय प्राप्त करता है
- पारिस्थितिक दर्शन की विभिन्न शाखाओं को समझता है
- भौम सदाचार से परिचय प्राप्त करता है
- औद्योगीकरण का आतंक के बारे में समझता है

Background / पृष्ठभूमि

पारिस्थितिक चिंतन की आधारशिला है भौम सदाचार। भूमि का यथार्थ अधिकारी कौन है, क्या यह भूमि मनुष्य मात्र के लिए है, भूमि के जैव एवं अजैव सत्ता को भी यहाँ अधिकार है या नहीं, इन सभी पर केन्द्रित है भौम सदाचार। और ये भौम सदाचार तो भारतीय संस्कृति का प्राणतत्व है। भारतीय संस्कृति तो सम्पूर्ण प्रकृति में देवत्व के दर्शन करती आई है। चाहे विलम्ब से क्यों न हो पाश्चात्य चिन्तन में भी भौम सदाचार का रूपायन हुआ है। पारिस्थितिक चिन्तकों में प्रमुख हैं अलदो लियपोलद। उन्होंने सबसे पहले भौम सदाचार (Land Ethics) की संकल्पना को हमारे सामने रखा। 1981 में रोड्रिक फ्रेसियर नैश की "Rights of Nature' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई। उन्होंने इस पुस्तक में भौम सदाचार का अच्छा ख़ासा विश्लेषण प्रस्तुत किया है। पारिस्थितिक दर्शन की संकल्पना के केन्द्र में आध्यात्मिकता है। यह आध्यात्मिकता हरित आध्यात्मिकता है। आज ज़रूरत भी इसी हरित आध्यात्मिकता की है। इस ब्लॉक की इकाइयों में पारिस्थितिक दर्शन की विभिन्न शाखाओं पर विस्तार से विचार किया गया है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

पारिस्थितिक दर्शन, भौम सदाचार, पारिस्थितिक चिंतन, हरित आध्यात्मिकता, गहन पारिस्थितिवाद

Discussion / चर्चा

2.1.1 पारिस्थितिक दर्शन

देश की माटी, देश का जल
हवा देश की, देश के फल
सरस बनें, प्रभु सरस बनें।

- (कवीन्द्र रवीन्द्र)

- पारिस्थितिक दर्शन की संकल्पना के केन्द्र में आध्यात्म है।

पारिस्थितिक दर्शन की संकल्पना के केन्द्र में आध्यात्म है। यह आध्यात्म धार्मिक आध्यात्म से बिल्कुल भिन्न है। यह हरित आध्यात्म है। आज की ज़रूरत यह हरित आध्यात्मिकता ही है। प्रपंचसत्ता में जिसे हम अचेतन समझते हैं, उनमें ही जीवन की बुनियादी तत्व निहित हैं। भारतीय दर्शन के मुताबिक चेतन और अचेतन में कोई अंतर नहीं है जैसे कि प्रसाद जी ने कहा-

एक तत्व की ही प्रधानता
कहो उसे जड़ या चेतन।

प्रसाद जी ने कामायनी में यत्र-तत्र भारतीय दर्शन के तहत प्रकृति और मनुष्य के बीच की पारस्परिकता, विलास एवं विकास के नाम पर उसका अनुचित उपभोग तथा उससे संभावित दुष्परिणामों का परोक्ष संकेत किया है। आज के यांत्रिक युग में यंत्र के पुर्ज़े बनकर जीने के लिए अभिशप्त मनुष्य का सहज एवं स्वाभाविक जीवन नष्ट हो गया है। इसलिए वह अशांत ही नहीं अनिश्चित होकर भटकने के लिए विवश भी है -

श्रम में कोलाहल पीड़नमय
विकल्प प्रवर्तन महायंत्र का
क्षण भर भी विश्राम नहीं है
प्राणदास है क्रिया तंत्र का
यहाँ सतत संघर्ष, सफलता
कोलाहल का यहाँ राज है
अंधकार में होड़ लग रही
मतवाला यह सब समाज है

- (कामायनी-रहस्य सर्ग)

हमें सोचना चाहिए कि यह अनिश्चितता और अशांति क्यों? इसलिए कि प्रकृति और मनुष्य के बीच के पारस्परिक आध्यात्म का अभाव। इस पारस्परिकता का दूसरा नाम है 'समरसता'। औद्योगीकरण से उत्पन्न यांत्रिक मानसिकता ने प्रकृति और मनुष्य के बीच की समरसता को मिटा दिया। वे अलग-अलग हो गए। आध्यात्म के अभाव में भटकना आधुनिक मानव की नियति बन गया। अतः पारिस्थितिकी आधुनिक मनुष्य के स्वत्व

की पहचान का परिणाम है। प्रसाद जी ने पहचान लिया कि मनुष्य और प्रकृति के बीच के आध्यात्म से जो समरसता बनती है उसमें जीवन का वास्तविक शील या रस निहित है। वह रस ग्रहण ही पारिस्थितिक सजगता का लक्ष्य या उद्देश्य है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल की साहित्य संबंधी मान्यताओं में सबसे मुख्य है साहित्य में प्रकृति और मनुष्य की पारस्परिकता। उनका मानना है कि सभ्यता के विकास के साथ-साथ कवि कर्म जटिल होता जा रहा है। इस सभ्यता समीक्षा के पीछे निहित संकल्पना यही थी कि मनुष्य को मात्र अपने प्रिमिटिव (आदिम) जीवन और आदिम बिम्बों से रस और शांति मिलती है। आज की कला सभ्यता के अलंकरणों से आवृत है। लेकिन साहचर्य - संभूत रस के प्रभाव से सामान्य सीधे-सादे, चिरपरिचित दृश्यों से कितने माधुर्य की अनुभूति होती है। वन्य और ग्रामीण दोनों प्रकार के जीवन प्राचीन है, दोनों पेड़ -पौधों, पशु पक्षियों, नदी नालों और पर्वत मैदानों के बीच व्यतीत होते हैं वह प्रकृति के अधिक निकट हैं।

- सभ्यता के विकास के साथ-साथ कवि कर्म जटिल होता जा रहा है

शुक्ल जी ने यांत्रिक युग में विकास के नाम पर प्रकृति और जीव जंतुओं का जो अनुचित शोषण हो रहा है उसे साहित्य का सबसे श्रेष्ठ एवं उच्च विषय माना है -

> मनुष्य सारी पृथ्वी छेंकता चला जा रहा है।
> जंगल कट-कट कर खेत, गाँव और नगर बनते जा रहे हैं।
> पशु-पक्षियों का भाग छिनता चला जा रहा है।
> उनके सब ठिकानों पर हमारा निष्ठुर अधिकार होता चला जा रहा है।-
>
> (कविता क्या है चिंतामणि, भाग-एक)

- मनुष्य जैसे इस प्रकृति का अनुभव करता है, अन्य जीव-जंतुओं को भी अनुभव करने का अधिकार है

शुक्ल जी की मान्यता है कि इन जीव-जंतुओं के जीवन परिस्थितियों की ओर भावुकता से ध्यान देने पर बहुत से मार्मिक तथ्य सामने आएंगे। मनुष्य जैसे इस प्रकृति का आश्रय पाकर सुख अनुभव करता है वैसे ही इस संसार के अन्य जीव-जंतुओं को भी अनुभव करने का अधिकार है। मनुष्य और प्रकृति के बीच के सह अस्तित्व की अभिव्यक्ति से ही उच्च कोटि का साहित्य जन्म लेता है।

औद्योगीकरण का आतंक सबसे अधिक संस्कृति और परिस्थिति पर पड़ा है। इस यथार्थ का ख़ुलासा करते हुए अज्ञेय ने अपने मौलिक विचारों को 'त्रिशंकु' में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार पुराने सामाजिक संगठन के टूटन से उसकी सजीव संस्कृति और परंपरा मिट गई है। अतः हमारे जीवन में से लोकगीत, लोक नृत्य, फूस के छप्पर और दस्तकारियाँ क्रमशः अप्रत्यक्ष होती जा रही हैं। वे कहते हैं कि हमारा समाज अब ना देहाती रहा है ना शहरी। उसका संगठन ही नष्ट हो गया है। सभ्यतावश उसका सामूहिक संबंध नष्ट हो गया। जहाँ आधुनिकीकरण नहीं पहुँचा वहाँ आज भी जीवन एक कला है यानी कि यंत्र युग की प्रगति का निर्माण हाल पुरानी मिट्टी उपड़ता हुआ चला जा रहा है।

- हमारा समाज अब ना देहाती रहा है ना शहरी

अज्ञेय मानते हैं कि प्राचीन व्यवस्था के टूटने का कारण मशीन है। अज्ञेय ने नष्ट होने वाली प्रकृति के प्रति अन्यत्र भी दुख प्रकट किया है चाहे कविताओं में हो या उनके

वैचारिक उद्गारों में। आधुनिक मशीनी संस्कृति के प्रति एक बुद्धिजीवी की वितृष्णा और पीड़ा सार्थक हो उठी है। निर्मल वर्मा ने लिखा है कि अज्ञेय का प्रकृति बोध छायावादी बोध से बहुत अलग है। वे पहाड़ों को देखकर मुग्ध होते हैं तो नीचे जंगलों में पेड़ों के कटने का आर्तनाद भी सुनते हैं। 'असाध्य वीणा', 'बंधु है नदियाँ', 'हरी घास पर क्षण भर', 'हिरोशिमा', 'कलगी बाजरे की', 'बावरा अहेरी' जैसी कविताओं में आहत कविमन का आर्तनाद अनुगूँजित है। अज्ञेय ने 'शाश्वती में पेड़ काटकर पहाड़ खोदकर आधुनिक बनने के लिए शोर मचाने वाले तथाकथित आधुनिकों पर व्यंग्य करते हुए कहा कि पेड़ के नीचे रुक कर सुस्ता लिया फिर कॉपी निकाली तो मैं एक लंबी साँस सुनकर चौका। पर आसपास कोई नहीं था। मैंने सोचा, भ्रम हुआ होगा, हवा होगी। फिर लिखने की ओर दत्तचित्त हुआ। लंबी साँस फिर सुनाई दी। पेड़ ने लंबी साँस ली थी मैंने कहा क्यों पेड़ क्या हुआ? पेड़ ने कहा तुम कवि हो ना? मैंने कहा हूँ भी तो क्या? वन प्रकृति का भक्त हूँ, पेड़ों से प्रेम है। मुझे पेड़ रोक कर बोला- होगा तुम पेड़ पर कविता लिखो या पेड़ को बचाने के आंदोलन के लिए ही कविता लिखो छपेगी तो पेड़ की लुगदी पर ही। जब-जब कोई लिखता है मैं लंबी साँस लेता हूँ, वह पेड़ काटने का एक और निमित्त बना। (शाश्वती अज्ञेय)

- अज्ञेय का प्रकृति बोध छायावादी बोध से बहुत अलग है

डॉ. प्रभाकरन हेब्बार इल्लत के मत में प्रकृति के बचाव से ही मानव के सच्चे सामाजिक जीवन का वातावरण तैयार होगा। अपने जैविक पर्यावरण को बचाने का अर्थ इस प्रकृति के अन्य जीव-जंतुओं की जैविकता की रक्षा करना होता है प्रकृति का हर एक तत्व उस विराट प्रकृति की जैव-विविधता का अटूट हिस्सा है। इसलिए मानव इस विराट प्रकृति का अंश है, दोनों के बीच अंश-अंशी का रिश्ता कायम है'।

- मानव की जैविक स्थिति की जैविकता की रक्षा प्रकृति की रक्षा का पर्याय बन जाता है।

प्रकृति के प्रति आत्मीयता प्रकट करने वाले सशक्त रचनाकार हैं निर्मल वर्मा। वे आधुनिक मानव- जीवन की सबसे बड़ी विपत्ति के रूप में मनुष्य का प्रकृति से विगलित हो जाना और समाज से अलग हो जाना मानते हैं। निर्मल जी भारतीय चिंतन में मनुष्य और प्रकृति के बीच की पारस्परिकता को स्वीकार कर रहे हैं और यह भी प्रतिपादित कर रहे हैं कि आधुनिक मानव को अपने अकेलेपन से मुक्त होने के लिए इस पारस्परिकता की दृढ़ता को समझना और अपनाना चाहिए। आज के मानव को सचमुच एक वापसी की ज़रूरत है क्योंकि प्रकृति से मिलजुल कर उसके साथ की आत्मीयता को स्वीकार कर ज़िंदगी गुज़ारने वाले व्यक्ति को असुरक्षित होने का बोध कभी नहीं होगा। प्रकृति और मनुष्य की पारस्परिकता में ही मानव जीवन की सार्थकता है। अगर मानव अपनी प्रकृति के छोटे से अंश को भी बचाने में नाकामयाब रहा तो उसकी सम्पूर्ण उपलब्धियों का ही कोई मूल्य नहीं रह जायेगा। जैसा कि पाब्लो नेरुदा ने एक बार कहा था-

- प्रकृति और मनुष्य की पारस्परिकता में ही मानव जीवन की सार्थकता है।

'कविता का कोई अर्थ नहीं रह जायेगा यदि वह
ओस की एक बूँद को बचा न सके'

मनुष्य और प्रकृति के सह अस्तित्व के आध्यात्म से ही यथार्थ कविता जन्म लेती है। आज की स्थिति में यह सह अस्तित्व नष्ट होता जा रहा है। गौरवपूर्ण रचनाकार

- मनुष्य और प्रकृति के सह अस्तित्व के आध्यात्म से ही यथार्थ कविता जन्म लेती है।

सदा इससे सतर्क रहते हैं। वे इस अमानवीय वृत्ति यानी कि असंगति से सजग होकर रचनात्मक स्तर पर सक्रिय हो उठते हैं। उन्होंने प्रकृति और मनुष्य के बीच की अनिवार्य आध्यात्म को स्पायित किया। यही चिंतन, मंथन और यह दर्शन वाकई अभिनंदनीय है और आगे आने वाले साहित्यकारों के लिए अनुकरणीय भी। मनुष्य को हमेशा यह स्मरण रहे कि -

प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित हम सब थे, भूले मद में

(जयशंकर प्रसाद, कामायनी, चिंता सर्ग)

- पंच भूतों को शुद्ध करने की ताकत पेड़ - पौधों में है

प्रकृति की आराधना प्रकृति के संरक्षण का अभिन्न अंग है। हिमालय इसलिए पूज्य है कि वह संस्कृति का संरक्षक है, भारत के मौसम को नियंत्रित करने में उसकी देन अमूल्य है"। भारतीय ऋषि जब पेड़ काटते थे तब प्रार्थना करते थे कि हम जड़ से नहीं काट ेंगे वे सूर्य को पिता एवं नदी को माता के रूप में देखते हैं इसका तात्पर्य यह है कि वह प्रकृति में अपनेपन का ही बिस्तर देखते हैं। बृहदारण्यकोपनिषद में कहा गया है कि वृक्ष मनुष्य हैं, पत्ते रोम हैं, छिलका चर्म है। वे पेड़ को पुत्र से बढ़कर मानते हैं। संघर्ष का रास्ता छोड़कर शांति का मंत्र उनके दर्शन का आधार है यह शांति दर्शन प्रकृति व अन्य प्राणिजातों के साथ समरस अवस्था या लयात्मक अवस्था का दूसरा नाम है। उनकी राय में पंच भूतों को शुद्ध करने की ताकत पेड़-पौधों में है। "प्रकृति के साथ आत्मस्थ संबंध रखने से 'वसुधैव कुटुंबकम' की स्थापना हो सकती है। यही भारतीय मुनियों का मनन है, भारतीय पर्यावरणीय दर्शन का बीज है।" - डॉ. प्रभाकरन हेब्बार इल्लत

2.1.2 पारिस्थितिक दर्शन की शाखाएँ

पारिस्थितिक दर्शन की चार शाखाएँ हैं-

- गहन पारिस्थितिवाद (Deep Ecology)
- सामाजिक पारिस्थितिवाद (Social Ecology)
- पारिस्थितिक मार्क्सवाद (Eco - Marxism)

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

पारिस्थितिक दर्शन और इसकी शाखाओं का अध्ययन तभी सार्थक और पूर्ण माना जाएगा, जब प्रत्येक व्यक्ति प्रकृति के संरक्षण और उसके महत्व के प्रति जागरूक होगा। पृथ्वी पर जीवन का स्पंदन और जैव-विविधता विद्यमान हैं, जो इसके संरक्षण की आवश्यकता को और भी महत्वपूर्ण बनाते हैं। असंख्य पेड़-पौधों और जीव जन्तुओं से संपन्न है यह धरती। इन्हीं असंख्य जीव- जंतुओं में से एक प्राणी है 'मनुष्य'। अंधाधुंध विकास के नाम पर मनुष्य आज धरती और प्रकृति का व्यापक स्तर पर दोहन करने लगा है। इस पृथ्वी के प्रत्येक जैविक और अजैविक तत्व आपस में जुड़े हुए हैं, उनके बीच सम्बन्ध का विघटन इस पृथ्वी के पतन का कारण बन सकता है। वन, पहाड़, नदियाँ, झरने इस धरती का श्रृंगार हैं। धरती के इस श्रृंगार और सुन्दरता को बनाये रखना इंसान का फ़र्ज़ है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. पारिस्थितिक दर्शन की चार शाखाओं के नाम लिखिए।
2. पारिस्थितिक दर्शन अवधारणा पर एक लघु लेख लिखिए।
3. भौम सदाचार पर एक टिप्पणी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएँ एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण - डॉ. सुमन सिंह।

9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र-मेघा सिन्हा।

10. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य-डॉ सुमा एस. 'डॉ. एस आर जयश्री।

11. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन-के वनजा

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

इकाई 2

गहन पारिस्थितिवाद (Deep Ecology)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- गहन पारिस्थितिवाद से परिचय होता है
- गहन पारिस्थितिवाद के समर्थकों को जानता है
- भौम सदाचार से परिचय प्राप्त करता है
- गहन पारिस्थितिकीवाद का उद्देश्य: समझता है

Background / पृष्ठभूमि

गहन पर्यावरणवाद प्रकृति के सारे जैविक एवं अजैविक वस्तुओं के आपसी सौहार्दपूर्ण संबंध की हिमायत करता है। यह संबंध आंतरिक जैव संबंध है। प्रकृति के स्तर पर विचार किया जाए तो सब समान हैं। इस धरती पर सबका समान अधिकार है तथा जितनी विविधता प्रकृति में है वह प्रकृति के प्राणत्व एवं दिव्यत्व के स्तर पर सबके समान अधिकार की भावना को संतुष्ट करने वाली होती है। गहन पर्यावरणवाद विभिन्न प्रकार के प्राणी वर्गों के बीच समानता की माँग करता है। यदि कोई प्राणी प्राकृतिक संसाधन का अधिक उपयोग करेगा तो वह किसी दूसरे वर्ग के बुनियादी अधिकारों पर किए जाने वाले हस्तक्षेप के रूप में परिवर्तित हो जाएगा। किसी के द्वारा किया जाने वाला अमित उपयोग प्रकृति में जीवन के संतुलन को बिगाड़ देता है। संतुलन प्राकृतिक स्थिति का लक्षण है, असंतुलन प्रकृति विरोधी तत्व है। इसलिए स्वाभाविक रूप से उपभोग व्यापार पर आधारित समस्त विकास के मापदंडों को गहन पर्यावरणवाद स्वीकार नहीं करता है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

गहन पारिस्थितिवाद, पारिस्थितिक दर्शन, भौम सदाचार, जीवनशैली में बदलाव

Discussion / चर्चा

2.2.1 गहन पारिस्थितिवाद (Deep Ecology)

- मानव के जैविक अस्तित्व एवं प्रकृति के जैविक अस्तित्व में आपसी जुड़ाव है

आधुनिक परिस्थितिवाद की प्रारंभिक दशा में इसे एक परिष्करणवाद माना जाता था। इन परिष्करण वादियों का विश्वास था कि वर्तमान संस्कृति में वांछित परिवर्तन लाने पर पारिस्थितिक संकट को हल किया जा सकता है। नॉर्वे की चिंतक आर्ननेस ने इस विचार को सतही परिस्थितिवाद (shallow Ecology) कहा। 1973 में उन्होंने गहन स्थितिवाद (Deep Ecology) नाम से एक नई दर्शन शाखा को जन्म दिया। इसके ज़रिए पारिस्थितिक परिवर्तन एवं सुरक्षा के लिए उन्होंने काम किया। गहन परिस्थितिवाद के आधारभूत तत्व दो हैं प्रथम तो यह है कि मनुष्य के समान इस प्रकृति की सभी सत्ताओं का अपना मूल्य है और उन्हें अपने अस्तित्व को खुद ढूंढने का अधिकार है। प्रत्येक सत्ता का मूल्य इस पर केंद्रित नहीं है कि वह मनुष्य के लिए उपयोगी है या नहीं इसलिए प्रकृति से मनुष्य को अपनी बुनियादी ज़रूरत से ज़्यादा संसाधनों को एकत्रित करने का अधिकार नहीं है। दूसरा यह है कि दर्शन को मनुष्य केंद्रित तत्व से जैव केंद्रित बनाना है। तब भूमि में प्रत्येक सत्ता को अपना अस्तित्व प्राप्त हो जाएगा। आर्ननेस ने 'जैव समुदाय' की नूतन परिकल्पना विकसित की है। मानव के जैविक अस्तित्व एवं प्रकृति के जैविक अस्तित्व में आपसी जुड़ाव है। प्रकृति अजैव शरीर है या प्रकृति के ही विस्तार के रूप में मानव तथा अन्य प्राणियों के शरीर को देखा जा सकता है। प्रकृति के विभिन्न प्राणियों व अजैविक तत्वों के बीच में जो संबंध है वह एक जैविक श्रृंखला के रूप में विकसित होता है।

- पारिस्थितिक विनाश का मूल कारण विश्व संरचना में मनुष्य के स्थान संबंधी गलत धारणाएँ हैं।

गहन परिस्थितिवाद का मुख्य भाव है शमन (Healing) यह शमन मन, शरीर और भूमि का है। अज्ञान से संतुलन नष्ट होकर मन रोग ग्रस्त बन जाता है। रोगी मन की वृत्ति से मिट्टी विषलिप्त हो जाती है। उस मिट्टी से शरीर में विष प्रवेश कर वह भी रोग ग्रस्त बन जाता है। पारिस्थितिक विनाश का मूल कारण विश्व संरचना में मनुष्य के स्थान संबंधी गलत धारणाएँ हैं। सह अस्तित्व और करुणा पर केंद्रित नए भौम सदाचार से विनाश की ओर अग्रसर होते मन, शरीर, प्रकृति और भूमि को हम पुनः गढ़ सकते हैं। विश्व साहित्य में यह भाव बड़े पैमाने पर प्रयुक्त हो रहा है।

मनुष्य का आर्थिक जीवन स्तर लगातार बढ़ता जा रहा है उसके लिए प्रकृति का अनुचित शोषण करना सही रास्ता नहीं है। आज के दौर में मनुष्य की नीति, अर्थशास्त्र, कार्य प्रणाली आदि में भी परिवर्तन लाना चाहिए। इसके लिए अहिंसात्मक मार्ग को अपनाना चाहिए भारतीय दर्शन में बौद्ध, जैन दर्शन गहन परिस्थितिवाद को बढ़ावा देने वाले हैं। गहन परिस्थितिवादियों में कुछ लोग हिंसात्मक मार्ग से भी प्रकृति को बचाने की पक्ष में हैं। भारत वर्ष में चिपको आन्दोलन के तहत गौरादेवी और राजस्थान की विश्नोई महिलाओं द्वारा दिया गया प्राणों का बलिदान इस सन्दर्भ में विशेष उल्लेखनीय

है। परिस्थितिवाद की शाखाओं के प्रकार और नामकरण भले कितने ही हों, भारतीय संस्कृति प्राचीन काल से ही प्रकृति संरक्षक रही है।

चिपको आन्दोलन- विश्नोई आन्दोलन

2.2.1.1 गहन पारिस्थितिकी का एक उदाहरण

- सभी जीवित चीजों में अंतर्निहित मूल्य होता है।

गहन पारिस्थितिकी का एक उदाहरण यह विश्वास है कि सभी जीवित चीजों में अंतर्निहित मूल्य होता है। जहाँ एक पारंपरिक पर्यावरणविद् सैल्मन आबादी की रक्षा पर ध्यान केंद्रित कर सकता है क्योंकि वे एक महत्वपूर्ण खाद्य स्रोत हैं, वहीं एक गहन पारिस्थितिकीविद् तर्क देगा कि मनुष्यों को सभी मछली प्रजातियों और वास्तव में सभी समुद्री प्रजातियों की रक्षा करनी चाहिए।

2.2.1.2 गहन पारिस्थितिकी के मुख्य बिंदु

- मनुष्य किसी भी अन्य जीवित चीज से अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है

1980 के दशक में बिल डेवल और जॉर्ज सेशंस ने डीप इकोलॉजी के आठ सिद्धांतों की रूपरेखा तैयार की। ये सभी सिद्धांत इस विचार पर केंद्रित हैं कि जीवित चीजों का मूल्य है, मनुष्य किसी भी अन्य जीवित चीज से अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है, और इन सिद्धांतों का सम्मान करने के लिए मानव दैनिक जीवन में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता होगी।

2.2.1.3 गहन पारिस्थितिकीवाद का उद्देश्यः

- यह हमारी जीवनशैली में बड़े पैमाने पर बदलाव करके प्रकृति को बनाए रखने की इच्छा व्यक्त करता है।
- इनमें वन क्षेत्रों को संरक्षित करने के लिये मांस के व्यावसायिक उत्पादन को सीमित करना शामिल है।
- जीवनशैली में बदलाव करने के अलावा गहन पारिस्थितिकी प्रकृति संरक्षण कर मज़बूत नीति निर्माण एवं कार्यान्वयन पर ध्यान केंद्रित करती है।
- गहन पारिस्थितिकीवाद 'योग्यतम की उत्तरजीविता' सिद्धांत के पुनर्मूल्यांकन की मांग करता है। इनका मानना है कि योग्यतम की उत्तरजीविता को प्रकृति के साथ सहयोग करने और सहअस्तित्व की मानवीय क्षमता के माध्यम से समझा जाना चाहिये, न कि शोषण करने या उस पर हावी होने के दृष्टिकोण से।
- इस प्रकार गहन पारिस्थितिकीवाद 'तुम या मैं' के दृष्टिकोण के बजाय 'जियो और जीने दो' के दृष्टिकोण को प्राथमिकता देता है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

गहन पर्यावरणवाद सामानता, सहकारिता, सहजीवन की वकालत करता है तथा सभी प्रकार के शोषण का विरोध करता है। आधुनिक समाजवादी सिद्धांत का प्रभाव इस पर पड़ा है। इसलिए 'जैव समता' को इस सिद्धांत का आधार कहा जा सकता है। इसकी स्थापना तभी संभव होगी जब शोषण का अंत हो, दमन का सत्यानाश हो, सत्ता का विकेंद्रीकरण हो, गाँवों की स्वायत्तता हो, तथा किसी के एकाधिकार या स्वामित्व का अंत हो। यह पर्यावरणवाद नकली विकास को स्वीकार नहीं करता जो केवल धन का साम्राज्य विकसित करता है तथा मानवीय संवेदना एवं आत्मिक संबंध को कुचल देता है। यह विकास की एक तरफ़ गति को नकारता है तथा प्रकृति के स्वास्थ्य को ध्यान में रखता है। गहन पर्यावरणवाद पूँजी के बल पर होने वाले नकली, अस्थाई, अवैज्ञानिक, मानव - प्रकृति विरोधी विकास की अवधारणाओं को नकारता है। वह पृथ्वी के साथ आदर्श संबंध की स्थापना करने के मार्गों की खोज करता है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. गहन पारिस्थितिकीवाद के बारें में टिप्पणी लिखिए।
2. गहन पारिस्थितिकीवाद की अवधारणा पर एक लघु लेख लिखिए।
3. गहन पारिस्थितिकीवाद का उद्देश्य लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता विष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन-भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण-राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण-डॉ. सुमन सिंह।
9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र - मेघा सिन्हा।
10. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य-डॉ सुमा एस. 'डॉ. एस आर जयश्री।
11. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन - के वनजा

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 3

पारिस्थितिक साम्यवाद (Eco Marxism)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- सामाजिक परिस्थितिवाद [Social Ecology] से परिचय होता है
- पारिस्थितिक साम्यवाद [Eco Marxism] समझता है
- पारिस्थितिक साम्यवादी रचनाकारों को जानता है
- पर्यावरणीय समाजवादी रचनाकारों से परिचय प्राप्त करता है

Background / पृष्ठभूमि

पर्यावरणीय समाजवाद एक ऐसी विचारधारा है जो वर्तमान में कार्यरत पूँजीवाद के विकास के मापदंडों पर सवाल करती है। आजकल हमारे सामने विकास का जो दौर चल रहा है वह विनाश को निमंत्रण दे रहा है। जेम्स ओ कोनर, जोवल कोवल, बेलामी फॉस्टर आदि ने इस स्थिति के खलिाफ़ आवाज़ उठाई और मार्क्सवादी सैद्धान्तिक आलोचना के आलोक में अपनी मान्यताओं को पेश किया। इसके अनुसार वर्तमान विकास में लोकतंत्रात्मकता का अभाव है। प्रकृति के अमित एवं असंतुलित उपभोग को बढ़ावा दिया जा रहा है। पूँजीवाद द्वारा पोषित वर्तमान बाजारीकृत आर्थिक व्यवस्था में उपयोग के मूल्य को विनिमय मूल्य के ऊपर प्रमुख माना जाता है। पूँजीवादी विकास प्रक्रिया संपत्ति के असमान वितरण पर बल देने के कारण स्वाभाविक रूप से सामाजिक अंतर्विरोधों को उत्तेजित करती है। पर्यावरणीय समाजवाद विशेष रूप से मानवीय सहकारिता पर आधारित समेकित उत्पादन पर बल देता है तथा वर्तमान आर्थिक संरचना और आर्थिक नीतियों में बदलाव की माँग करता है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

बीज शब्द : सामाजिक पारिस्थितिवाद,, पारिस्थितिक साम्यवाद, भौम सदाचार, पूँजीवाद, पारिस्थितिक संकट

Discussion / चर्चा

मार्क्सवादी दर्शन वर्ग भेद पर ध्यान देता है। पारिस्थितिक समस्याओं को मात्र वर्ग भेद तक सीमित रखकर विश्लेषित करना नामुमकिन है। एक कारखाने से अगर विष सर्वत्र फैलता है तो जनता उस कारखाने के खिलाफ़ आंदोलन अवश्य करती है। उस वक्त मजदूर संगठन फैक्ट्री मालिक के साथ ही रहेगा। मिसाल के तौर पर जब साइलेंट वैली आंदोलन ज़ोरों पर रहा तब मजदूरों ने उस परियोजना का समर्थन इसलिए किया कि उसके लिए मजदूरी मुख्य थी लेकिन प्रबुद्ध जनों के निरंतर प्रयत्न के कारण ही वह परियोजना किसी न किसी प्रकार बंद की गई। पूँजीवाद ने प्रकृति और सामाजिक संरचना में समान रूप से आघात पहुँचाया। पूँजीवाद के ज़रिए जो प्राकृतिक विनाश हो रहा है उसके संबंध में 19 वीं शताब्दी के अंत में मार्क्सवादी दृष्टिकोण से पीटर क्रोपोट कीन, चाल्स फेरियर, विलियम मॉरिस जैसे विद्वानों ने लिखना शुरू किया था। 20वीं शताब्दी के अंतिम तीन दशकों तक आते-आते पारिस्थितिक दर्शन और मार्क्सवाद परस्पर मिल गए तब पारिस्थितिक दर्शन को नया उन्मेष मिला। यह अरुण हरित संगम मुख्यतः दो धाराओं से आगे बढ़ा - Social Ecology और Ecological Socialism या Eco Marxism। इन दोनों की मुख्य समानता यह है कि गहन परिस्थितिवाद से अलग होकर यह पारिस्थितिक संकट के सामाजिक - सांस्कृतिक एवं आर्थिक कारणों पर ध्यान देते हैं।

1962 में रेचल कर्सन ने 'मौन वसंत' लिखा। इस वर्ष बुक्कच्चिन नामक एक अमेरिकी दार्शनिक ने 'कृत्रिम परिस्थिति' नामक एक रचना लिखी। इस रचना के ज़रिए सामाजिक परिस्थितिवाद को एक स्पष्ट परिभाषा एवं दार्शनिक आधार प्राप्त हुआ। बाद में इस पर केंद्रित कई रचनाएं उन्होंने की। रचनाएं इस दर्शन को और व्यापक बनाने में सहायक सिद्ध हुई बुक्कच्चिन के अनुसार गहन पारिस्थितिवादियों ने सारा दोष मनुष्य केंद्रित प्रवृत्ति में देखा। उन्होंने रोग लक्षणों को देखा लेकिन उनके सामाजिक कारणों को अनदेखा कर दिया। बुक्कच्चिन ने कहा कि शुरू में मनुष्य ने अन्य मनुष्यों के ऊपर अधिकार जमाने का कार्य किया था। अधीनस्थ बनाना इसकी सहज एवं स्वाभाविक वृत्ति ही है। मनुष्य जब गोत्र में रहने लगा तब वह प्रकृति का अनुसरण करके ही जी रहा था पर धीरे-धीरे गोत्र में पुरुष का अधिकार बढ़ने लगा। इसे सुदृढ़ रखने के लिए कई अधिकार संबंधी संरचनाएँ की गईं। परिणामतः पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था में स्त्रियों को अधीन कर दिया गया। इस सामाजिक प्रभुत्व का स्वाभाविक परिणाम है प्रकृति पर अधिकार जमाने की प्रणाली। इस प्रभुत्व को समाज से दूर करने का प्रयत्न है बुक्कच्चिन का सामाजिक परिस्थितिवाद।

- परिस्थितिवादियों ने सारा दोष मनुष्य केंद्रित प्रवृत्ति में देखा

पर्यावरणीय समाजवाद

पर्यावरणीय समाजवाद वास्तव में वर्तमान ज़िंदगी में बदलाव की माँग करता है जिससे मानव के जीने लायक भौतिक स्थितियों का निर्माण हो। असीम उद्योगों के विकास

- असीम उद्योगों के विकास से असीम विषैले पदार्थों का निवेश पर्यावरण में होता है।

से असीम विषैले पदार्थों का निवेश पर्यावरण में होता है। उसमें ख़तरनाक परमाणु अवशिष्ट भी शामिल है जिससे प्रकृति के जैव एवं अजैव शरीर का स्वास्थ्य बिखर जाता है और आंतरिक रूप से जनितकीय परिवर्तन का शिकार होता चला जाता है। इसलिए इस प्रकार के अवशिष्ट को कम करने के लिए निषेधात्मक विकास की नीति को अपनाना ही होगा। हमें ऊर्जा के उपभोग की दर को कम करना होगा। बिजली के उपकरणों को त्यागना होगा और सहकारिता की संस्कृति को पल्लवित पोषित करना होगा। उपभोग के स्थान पर उपयोग की संस्कृति स्थापित हो जिससे मानव के साथ समस्त प्रकृति के जैव-अजैव वस्तुओं का चैतन्य कायम रहे।

देश के पर्यावरणशास्त्री और समाजशास्त्री में आए परिवर्तन

- गुण वस्तुओं में है मानव में नहीं

आज सभी देशों के पर्यावरणशास्त्री और समाजशास्त्री एक ऐसी सभ्यता की तलाश में है जिससे कि धरती पर आ पड़े संकट को टाला जा सके। वह बड़े उद्योग के स्थान पर छोटे और कुटीर उद्योगों पर, शहरीकरण के स्थान पर ग्रामीणीकरण पर, जटिल प्रौद्योगिकी के बजाय मानव द्वारा नियंत्रित और सरल प्रौद्योगिकी पर ज़ोर दे रहे हैं तथा प्रकृति के साथ शत्रुता की बजाय समरसता का भाव स्थापित करने को बढ़ावा दे रहे हैं। पूँजीवादी व्यवस्था विज्ञान की विभूतियों के माध्यम से अनगिनत अनावश्यक वस्तुओं का प्रचार करती है तथा मानव के मन में कृत्रिम इच्छाओं को जगा कर बाज़ार की ओर खींचती है। वर्ण, वर्ग, देश की संस्कृति व मानवीय संबंधों का सटीक प्रयोग बाज़ारी वस्तुएँ उपभोक्ता के मन में प्रवेश करती हैं फ़िर यह ऐलान कर दिया जाता है कि गुण वस्तुओं में है मानव में नहीं।

पूँजी व्यवस्था का प्रभाव

- प्राकृतिक संसाधनों के सम्यक, संतुलित, समतुल्य उपभोग पर जीवन का सौंदर्य निहित

पूँजी पर आधारित जीवन व्यवस्था मानव को असंवेदनशील पशु के रूप में परिवर्तित कर देती है। प्राकृतिक संसाधनों के सम्यक, संतुलित, समतुल्य उपभोग पर ही जीवन का सौंदर्य निहित है। उत्पादन, उपभोग, मुनाफ़ा पूँजीवाद के बुनियादी उसूल हैं। उनकी प्राथमिकता मानव की भलाई में नहीं है अर्थ के ढेर खड़ा करने में है। मानव को वहाँ पर छला जाता है, जहाँ वह अपनी नैसर्गिकता को छोड़कर उपभोग करने वाला जानवर मात्र बनकर रह जाता है।

- पूँजी से संचालित जीवन व्यवस्था में मानव लाभ जुटाने का एक उपकरण

पूँजी से संचालित जीवन व्यवस्था में मानव लाभ जुटाने का एक उपकरण मात्र बनकर रह गया है। लेकिन समाजवाद मानव के समान, सहकारी उपयोग पर बल देता है। यह मानव की बुनियादी आवश्यकताओं को केंद्र में रखता है तथा मानव के भोग करने की कामना को नकारता है। अतः जीवन के आर्थिक आधार को पर्यावरण के अनुकूल बनाना हमारा फ़र्ज़ बन जाता है। यह दर्शन अमीरों का नहीं बल्कि ग़रीबों का समर्थन करता है जो मार्क्स की मानवीयता की हिमायत करता है।यह किसी प्रदेश या किसी देश की समस्या का समाधान नहीं बल्कि विश्व की समस्याओं के समाधान की संभावनाओं को पेश करता है।

इस प्रकृति में अनगिनत प्राणिजात हैं। मानवेतर प्राणियों को भी इस संसार में जीने का समान अधिकार है पर मानव की प्रभुत्व से प्रकृति की संरचना में भारी - भरकम परिवर्तन होते चले जा रहे हैं जिनके कारण प्रकृति की स्वाभाविक जैविकता का विनाश होता जा रहा है। पूँजीवाद इस प्रकृति को उत्पादन के रूप में परिवर्तित करके बाज़ार को समृद्ध करता है तथा उत्पादों की बिक्री सुनिश्चित करके केवल लाभ का स्वार्थी दानव खड़ा करता है। पूँजीवाद अपनी ताकत से प्रकृति के संसाधनों को सस्ते में अपनाता है तथा यह विचार भी रखता है कि प्राकृतिक संसाधनों पर सिर्फ़ और सिर्फ़ उसका ही अधिकार है इस अधिकार की स्थापना हेतु युद्ध का आतंक मचाया जाता है। इस प्रकार की पूँजीवादी गतिविधि से समाज में विषम जीवन व्यवस्था का विस्तार होता है। पूंजीवाद इस प्रकार प्रकृति और मानव की चेतना को प्रदूषित करता है। जो अमानवीकृत सामाजिक व्यवस्था की बढ़ोत्तरी में खाद का काम करता है। आजकल पूँजीवाद उत्पादों के उपयोग की अवधि को कम करके बाज़ार की चीज़ों का विक्रय सुनिश्चित करता है और बाज़ार को मालों की विविधता से भर देता है। इससे उपभोग की दर पल-पल बढ़ती चली जाती है। पूँजीवादी विकास ने इस संसार को कार्बन सिंक बना कर रख दिया है। इस प्रकार की प्रगति से आने वाले समय में पेड़-पौधे, शुद्ध जल, शुद्ध वायु, स्तनपाई जीव, पक्षी, नाना प्रकार के जीव सभी गायब हो जाएंगे। हम यह भूल जाते हैं कि प्रकृति के यह संसाधन ही सबसे बड़ी पूँजी है इसके विनाश से विकास का आधार नष्ट हो जाएगा यह विपद स्थिति पूँजीवादी ताकतों के विकास से उत्पन्न हुई है जो संपत्ति के एकाधिकार एवं एकल समाज का समर्थन करती है यह अपने आप में प्रकृति विरोधी, मानव विरोधी एवं जीवन विरोधी है इसका प्रतिरोध समाजवादी पर्यावरण करता है।

- पूँजीवाद प्रकृति और मानव की चेतना को प्रदूषित करता है

पारिस्थितिक साम्यवाद Eco Marxism :

जर्मन हरित संगठन के संस्थापकों में एक है रुडोल्फ बाहरोय। उनकी प्रसिद्ध रचना है -फ्रॉम रेड टू ग्रीन। (लाल से हरित की ओर)। डेविड पेप्पर, पीटर डीकनेस जैसे कई चिंतकों ने पारिस्थितिक समाजवाद की स्पष्ट व्याख्या करने की कोशिश की है। हरित मार्क्सवाद के समकालीन प्रचारकों में मुख्य हैं जेम्स.ओ. कोणोर। बुक्कच्चिन के सामाजिक परिस्थितिवाद से भिन्न होकर इको मार्क्सवाद राजनीतिक अर्थशास्त्र का विश्लेषण है इसके अनुसार प्रयत्न, शोषण, उत्पादन, मुनाफ़े का दर, पूँजी का बंटवारा और केंद्रीकरण जैसे मुख्य मुद्दों के अध्ययन से ही पूँजीवाद के अधीन उत्पन्न होने वाले प्राकृतिक नाश पर विचार कर सकते हैं। पूँजीवादी व्यवस्था के आमूल परिवर्तन से ही पारिस्थितिक संकट का हल संभव होगा। गहन परिस्थितिवादियों और सामाजिक परिस्थितिवादियों के समान ये भी प्रकृति की सत्ता और जैव विविधता को मानने के साथ ही साथ इसको 21वीं सदी में मनुष्य के अस्तित्व के आधारभूत विज्ञान के रूप में मान्यता देते हैं। केरल के शास्त्र साहित्य परिषद का काम इको - मार्क्सवाद के उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है।

- पूँजीवादी व्यवस्था के आमूल परिवर्तन से पारिस्थितिक संकट का हल संभव

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

पूँजीवादी संस्कृति प्रत्येक व्यक्ति को एक उपभोक्ता में बदल देती है और जीवन एवं संस्कृति के प्रत्येक कर्म और परिणाम को एक बिकाऊ माल बनाकर रख देती है। आजकल की संस्कृति में मानव की सामाजिक मर्यादा वस्तुओं के स्वामित्व पर आधारित है जो एक प्रतीकात्मक मूल्य का वहन करती है। इससे भौतिक सुख - सुविधा मानव जीवन के सामाजिक अस्तित्व का अभिन्न हिस्सा बन जाती है। वस्तु के अधिग्रहण की कामना से मानवीय जीवन का एकमात्र लक्ष्य केवल धन बनकर रह जाता है। (बाप बड़ा ना भैया, सबसे बड़ा रुपैया 'तो भला प्रकृति की चिन्ता कौन करे ...) इस स्थिति से मानवीय समाज की रक्षा हेतु सुविधाओं या विकास की विभूतियों को छोड़ने की तथा पुनीत त्याग की संस्कृति विकसित करनी होगी। उपभोग के संस्कार एवं मानव के हस्तक्षेप से से ओज़ोन परतों में छिद्र हो रहे हैं, जंगल मरुस्थल में बदलता चला जा रहा है, जैव - विविधता विलुप्त होती जा रही है, उर्वर मिट्टी बंजारा होती जा रही है - इसका तात्पर्य यह है कि प्रकृति को केंद्र में रखकर जीवन की चर्चा की जानी चाहिए। आजकल प्रकृति और मानव के द्वंदात्मक संबंधों की पुनर्व्याख्या करना मानव की संस्कृति के लिए अनिवार्य बन गया है। प्रकृति के स्वास्थ्य को ध्यान में रखे बिना मानव अपनी सांस्कृतिक उपलब्धियों को आगे नहीं बढ़ा सकता। हमारे जीवन के विकास के सैद्धांतिक मापदंडों को समय के अनुसार पुनः ढलना होगा। आगामी पीढ़ी या भविष्य को ध्यान में रखते हुए प्राकृतिक संसाधनों के युक्ति संगत व विवेकपूर्ण उपयोग के बल पर हम भविष्य के साथ न्याय कर पाएंगे। यही इस वैचारिक धारा की वर्तमान प्रासंगिकता है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. इको - मार्क्सवाद के समर्थकों के नाम लिखिए।
2. पारिस्थितिक साम्यवाद [Eco Marxism] की अवधारणा पर एक लघु लेख लिखिए।
3. सामाजिक परिस्थितिवाद [Social Ecology] विषय पर एक निबंध लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. वन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।

6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन-भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण-राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण - डॉ. सुमन सिंह।
9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र - मेघा सिन्हा।
10. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन - के वनजा

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 4

पारिस्थितिक स्त्रीवाद - (Eco Feminism)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- इको-फ़ेमिनिज़्म से परिचय होता है
- शोषण का प्रतिरोध करने की चेतना से अवगत होता है
- पारिस्थितिक स्त्रीवादी रचनाकारों के बारे में जानता है

Background / पृष्ठभूमि

अनादि काल से प्रकृति और मनुष्य का सहसंबंध निर्विवाद रहा है। लेकिन औद्योगिक क्रांति से पूँजीवादी वर्ग ने प्रकृति को लूटते हुए अपना उत्पादन बढ़ाना शुरू कर दिया। तब से प्रकृति और मनुष्य के बीच का संबंध शिथिल होने लगा पारिस्थितिक विनाश मनुष्य के विनाश का हेतु बन गया। 1963 में प्रकाशित रेचल करसन के साइलेंट स्प्रिंग नामक ग्रंथ ने पाश्चात्य दुनिया में पारिस्थितिकी संबंधी चर्चाओं की शुरुआत की। 1978 में इको - क्रिटिसिज़्म शब्द का प्रयोग सबसे पहले विलियम रुकर्ट ने किया। 1990 में इको - क्रिटिसिज़्म एक आलोचनात्मक पद्धति के रूप में अमेरिका में उभर कर आया। इसकी कई शाखाओं में मुख्य शाखा है -इको-फ़ेमिनिज़्म।

Keywords / मुख्य बिन्दु

पारिस्थितिक स्त्रीवाद, स्त्री और प्रकृति, स्त्री की गुलामी, शोषण, उपभोग संस्कृति, प्रतिरोध

Discussion / चर्चा

इको-फ़ेमिनिज़्म :

इको-फ़ेमिनिज़्म में इको अथवा इकॉलोजी शब्द पृथ्वी रूपी गृह का प्रतिपादन करता है। प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और स्त्री की गुलामी को सम्बद्ध करके देखने की प्रवृत्ति इसमें पाया जाती है। इको फ़ेमिनिज़्म अथवा पारिस्थितिक स्त्रीवाद में स्त्री

- आज स्त्री और प्रकृति दोनों शोषण का शिकार

और प्रकृति के ऊपर पुरुष के अधिकार की आलोचना की जाती है। यह एक वैश्विक विचारधारा है जिसमें स्त्री और प्रकृति को केंद्र में रखकर विचार-विमर्श किया जाता है। आज स्त्री और प्रकृति दोनों शोषण का शिकार बनी हुई हैं। दोनों की तुलना इसमें होती है।

- 20वीं शताब्दी के सातवें दशक में पारिस्थितिक स्त्रीवाद अथवा इको - फ़ेमिनिज़्म विकसित हुआ

आधुनिक फ़ेमिनिस्टों में सबसे पहले सिमोन द बुआ ने स्त्री और प्रकृति को साथ रखकर विचार प्रस्तुत किया। पुरुष सत्तात्मक समाज ने स्त्री और प्रकृति की समानता पहचान कर दोनों का वस्तुकरण कर दिया। इसलिए पुरुष ने स्त्री और प्रकृति को अपनी शक्ति के अधीन बना कर नयी संस्कृतियों का निर्माण करना शुरु कर दिया। जिसप्रकार पुरुष माँ से अलग होकर उसके ही शोषण के लिए तैयार हो जाता है वैसे ही प्रकृति रूपी माँ की गोदी में लाड़ प्यार से बड़े होने के बाद उसका शोषण करना शुरु कर देता है।स्त्री और प्रकृति से बढ़कर श्रेष्ठ की सृष्टि करने की व्यग्रता में पुरुष प्रकृति को खाकर औद्योगिक संस्कृति के निर्माण में लग जाता है। नारीवादी आंदोलन को नवजीवन प्रदान करते हुए 20वीं शताब्दी के सातवें दशक में पारिस्थितिक स्त्रीवाद अथवा इको - फ़ेमिनिज़्म विकसित हुआ। यह पारिस्थितिक दर्शन की अन्य शाखाओं से विकास प्राप्त करने लगा। इको-फ़ेमिनिज़्म नामक संकल्पना की दार्शनिक व्याख्या सबसे पहले फ्रेंच फेमिनिस्ट फ्रान्स्वा द यूबोण ने प्रस्तुत की।

- पूँजीवाद और समाजवाद दोनों समान रूप से इस पारिस्थितिक नाश के कारण है।

फ्रान्स्वा के अनुसार भूमि के नाश का कारण पुरुष है। उनके आक्रमणों से भूमि को मनुष्य की भलाई के लिए बचाने में स्त्री समर्थ है। 5000 वर्ष से पूर्व खेती स्त्रियों के नियंत्रण में थी इस पुरुष ने अपने अधीन कर लिया मिट्टी की उत्पादन क्षमता के साथ स्त्री की उर्वरता को भी अपने अधीन कर पुरुष ने अपने अपनी सत्ता को आगे बढ़ाया। मिट्टी और स्त्री में बीज बोने का अधिकार पुरुष ने ले लिया। आज की मुख्य दो समस्याएं हैं सीमा रहित जनसंख्या वृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों का नाश। पुरुष द्वारा पुरुष के लिए निर्मित समाज के भाव नियम स्त्री के ऊपर पुरुष के अधिकार जमाने में बहुत सहायक सिद्ध हुए। आज का पारिस्थितिक संकट पुरुष लिंग अधिक पट्टी की सृष्टि है। पूँजीवाद और समाजवाद दोनों समान रूप से इस पारिस्थितिक नाश के कारण है। यदि पूँजीवाद मुनाफ़े के नाम पर काम करता है तो समाजवाद प्रगति के नाम पर।

- स्त्रीत्व पर आधारित भूमि सबको सुरक्षा प्रदान करेगी

फ्रान्स्वा ने इको फ़ेमिनिज़्म को मानवीयता के रूप में देखा। इसका लक्ष्य पुरुष के बदले में स्त्री को प्रतिष्ठित करना नहीं है। इको फ़ेमिनिज़्म का मकसद अधिकार और उसकी संरचना को शिथिल करना है। स्त्री - पुरुष भेद के बिना मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने,समझने और मानने वाले एक संसार के सृजन में एक फ़ेमिनिज़्म काम करता है। स्त्री को इस पारिस्थितिक आंदोलन के नेतृत्व में आना चाहिए। फ्रान्स्वा ने लिखा है कि स्त्रीत्व पर आधारित भूमि सबको सुरक्षा प्रदान करेगी। (And the planet placed in the feminine will flourish for all)।

वर्ड्सवर्थ की बहन डोरती वर्ड्स की कृतियों का मूल्यांकन एवं पुनर्मूल्यांकन आजकल इको-फ़ेमिनिज़्म के आधार पर किया जा रहा है। अमेरिकन लेखिका मेरी ओस्टन की

- 1903 में प्रकाशित "The Land of Little Rain' आरम्भिक इको-फेमिनिस्ट कृति

1903 में प्रकाशित 'The Land of Little Rain' आरम्भिक इको-फेमिनिस्ट कृति है। इस विचारधारा के आधार पर आलोचना करने वालों में मुख्य हैं - ग्लोरिया अलसान दुवा, डोणा हारवे, पाट्रिक मर्फी, आनी दिल्लाई, विल्ला कातेर, उरसुला लिग्विन, लूसी ताप होन्सो आदि।

- इको-फ़ेमिनिज़्म शब्द का अंग्रेजी में प्रथम प्रयोग वेंरमेंड में स्थापित Institute of Social Ecology ने किया

इको-फ़ेमिनिज़्म शब्द का अंग्रेजी में प्रथम प्रयोग वेंरमेंड में स्थापित Institute of Social Ecology 'ने किया है। इस संस्था ने 1976 में इको-फ़ेमिनिज़्म का पाठ्यक्रम चलाया। इसे चलाने का दायित्व स्त्रीवाद के मुख्य दार्शनिक मेडम नेस्त्रा किंग (Ynestra king) का था। 1981 में इन्होंने फ़ेमिनिज़्म और प्रकृति की कला नामक प्रामाणिक पुस्तक प्रकाशित की। 1978 में मेरी डॉली का गैन इकोलॉजी' और सूसन ग्रीफ की 'स्त्री और प्रकृति' नामक रचनाएँ भी प्रकाशित हुईं। 1980 में प्रकाशित करोलिन मरचेंट का 'प्रकृति की मृत्यु' नामक ग्रन्थ भी इको-फ़ेमिनिज़्म के प्रचार में बहुत सहायक निकला।

इको-फ़ेमिनिज़्म फेमिनिस्ट सिद्धान्त और पारिस्थितिक दर्शन दोनों को आधार बनाकर आगे बढ़ा। इसकी चार धाराएँ हैं-

- आध्यात्मिक पारिस्थितिक नारीवाद (Spiritual Eco - Feminism)
- सांस्कृतिक पारिस्थितिक नारीवाद (Cultural Eco-Feminism)
- सामाजिक पारिस्थितिक नारीवाद (Social Eco-Feminism)
- सामाजवादी पारिस्थितिक नारीवाद (Socialist Eco-Feminism)

भारत में पारिस्थितिक स्त्रीवाद :

- माता भूमिः पुत्रो अहं प्रथिव्याः - (अथर्ववेद)
- समुद्रवसने देवि पर्वत स्तन मण्डले।

विष्णु पत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्वमे

जैसे अनेकानेक श्लोक भारत में पारिस्थितिक स्त्रीवाद की प्राचीनता के प्रमाण हैं। प्रकृति को स्त्री (माता) के रूप में देखने की परम्परा हमारे यहाँ पहले से ही मौजूद थी। यहाँ स्त्री और प्रकृति दोनों को ही पूजा की जाती थी लेकिन कालान्तर में दोनों ही शोषण का शिकार हुईं। अब प्रकृति का व्यापक रूप से दोहन और स्त्री शोषण दोनों के खिलाफ़ ही आवाज़ बुलन्द होने लगी है। प्रतिरोध शुरू हो चुका है। भारत में कई स्त्रियों ने पर्यावरण को बचाने के लिए आन्दोलनों में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया और अपने प्राणों के उत्सर्ग से भी पीछे नहीं हटीं। चिपको आन्दोलन में महिलाओं के बलिदान को क्या कभी भुलाया जा सकता है? केरल के प्लाचीमडा में मयिलम्मा का संघर्ष जग जाहिर है।

- केरल के प्लाचीमडा में मयिलम्मा का संघर्ष स्मरणीय है

हमारे हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं के पात्र भी प्रकृति संरक्षण के प्रति सचेत और जागरूक हैं। 'उतनी दूर मत ब्याहना बाबा' कविता की बिटिया अपने पिता से अपनी ख़्वाहिशें ज़ाहिर करती है-

जंगल नदी पहाड़ नहीं हो जहाँ
वहाँ मत करना मेरा लगन
और उसके हाथ में मत देना मेरा हाथ
जिसके हाथों ने कभी कोई पेड़ नहीं लगाये (निर्मला पुतुल)

निर्मला पुतुल जी प्राकृतिक संसाधनों को बचाने के लिए प्रयत्नशील हैं-

- निर्मला पुतुल जी प्राकृतिक संसाधनों को बचाने के लिए प्रयत्नशील

बच्चों के लिए मैदान
पशुओं के लिए हरी-हरी घास
बूढों के लिए पहाड़ों की शांति
आओ मिलकर बचाएँ
कि इस दौर में भी बचाने को
बहुत कुछ बचा है अब भी
हमारे पास'

- महादेवी जी की मेरा परिवार रचना परिस्थिति के सन्दर्भ में एक अनमोल हीरा

महादेवी वर्मा जी का प्रकृति प्रेम, जानवरों और पक्षियों के प्रति उनकी ममता एवं करुणा हिंदी साहित्य में किसी से छिपी नहीं है। महादेवी जी की 'मेरा परिवार' रचना परिस्थिति के सन्दर्भ में एक अनमोल हीरा है। - सोना हिरनी, गौरा गाय, गिल्लू गिलहरी, नीलू कुत्ता, लूसी, नीलकंठ मोर,-ये सब महादेवी वर्मा जी के कहानियों के पात्र मात्र नहीं हैं। इन सभी के साथ उनकी संवेदनायें जुड़ी हुई हैं- 'पशु को मनुष्य से यातना ही नहीं, निर्मम मृत्यु तक प्राप्त होती है, परन्तु उसकी आँखों के विश्वास का स्थान न विस्मय ले पाता है, न आतंक'

- मृदुला वर्ग के उपन्यास 'कठगुलाब' को इको-फेमिनिस्ट रचना है

मृदुला गर्ग के उपन्यास 'कठगुलाब' को इको-फेमिनिस्ट रचना के अंतर्गत दर्ज किया जा सकता है। जब धरती पेड़-पौधों एवं हरीतिमा से ओतप्रोत हो जाती है तब वहाँ की गरीब अशिक्षित जनता भी विकास की ओर अग्रसर होने लगती है। इस प्रकार कठगुलाब एक फ़तासी है जो स्त्री एवं धरती को ऊसरता से उर्वर बना देती है।

उषा यादव जी की कविताएँ भी पर्यावरण की चेतना के संदर्भ में उल्लेखनीय रही हैं-

मैं नदी हूँ, जानना काफ़ी नहीं क्या

और परिचय पूछकर तुम क्या करोगे

तड़प ही असहाय नयनों में भरोगे इमैं नदी हूँट

राजेश जोशी की कहानी 'कपिल का पेड़' में मनुष्य और प्रकृति की पारस्परिकता का बखान हुआ है। इसमें स्त्री और पेड़ को समान दर्ज़ा देकर उनके शोषण की कथा पेश की गई है। इसलिए इस कहानी में इको - फ़ेमिनिज़्म की दृष्टि जाहिर है। पूँजीवादी पुरुष सत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में स्त्री और प्रकृति समान रूप से शोषण एवं उपेक्षित हैं। इसे पहचाना और इसका प्रतिरोध करना ही इस कहानी का मूल भाव है।

जंगल की ताज़ी हवा
नदियों की निर्मलता
पहाड़ों का मौन
गीतों की धुन
मिट्टी का सौंधापन
फसलों की लहलहाहट
. . . . . .
आओ मिलकर बचाएँ (निर्मला पुतुल)

चंद्रकांत देवताले जी पृथ्वी एवं स्त्री दोनों के प्रति जो अन्यायपूर्ण व्यवहार हो रहा है उसकी घोर निंदा करते हैं। पृथ्वी एवं स्त्री परस्पर पूरक बनकर देवताले जी की कविता को सार्थक इको फेमिनिस्ट बनाती है-

- पृथ्वी एवं स्त्री परस्पर पूरक बनकर देवताले जी की कविता को सार्थक इको फेमिनिस्ट बनाती है

हज़ार तरीकों से प्यार किया है हमने
पृथ्वी से
और
स्त्री से
दोनों के भीतर है ब्रह्मांड की खुशियों के झरने
दौड़ कर छू लेने वाली आँखों से देखो
सब देखो
नीली गौरैया
नदी को देख रही है

लिंगाधिपत्य व्यवस्था में स्त्री और प्रकृति समान रूप से शोषण के शिकार बन रहे हैं। इसलिए प्रकृति को शोषण मुक्त करने के नेतृत्व में स्त्री को आगे आना ही चाहिए। प्रकृति के शोषण को अच्छी तरह से समझने में वह इसलिए सक्षम है कि प्राकृतिक विभवों के अभाव का असर स्त्रियों पर सबसे ज़्यादा पड़ता है। परिवार को आगे बढ़ाने का दायित्व उसके ऊपर हमेशा रहता है। प्रकृति की चोट पर मरहम पट्टी लगाकर उसकी रक्षा वह कर सकती है। इस पूँजीवादी व्यवस्था में स्त्री और प्रकृति पुरुष के अधीन हैं। दोनों उनके उपभोग की वस्तुएं हैं। वे दोनों पर बीज होते हैं और अपनी मर्ज़ी के अनुसार उपभोग करते हैं। इसलिए पारिस्थितिक स्त्रीवाद समस्त जैव-वैविध्यों के साथ सहिष्णुता एवं स्नेह के व्यवहार को मुख्य स्थान देता है तथा स्त्री और प्रकृति दोनों के शोषण के खिलाफ पारिस्थितिक स्त्रीवाद लड़ता आ रहा है। सभी पारिस्थितिक मुद्दों को

- आज स्त्रियाँ पर्यावरण संकट के खिलाफ ज़्यादा काम कर रही हैं

वह आलोचनात्मक दृष्टि से परखता है। इस दृष्टि में वन संरक्षण, पारिस्थिति संरक्षण, आर्थिक प्रगति जैसी सारी बातें दर्ज़ हैं। प्रकृति और समाज की बंजरता को दूर कर अपने को बंजरता से बचाने की कोशिश है इसमें। इसलिए आज भारत में हो या विदेश में स्त्रियाँ पर्यावरण संकट के खिलाफ ज़्यादा काम कर रही हैं। हमारे साहित्य में भी इस दृष्टि से एक अलग पहचान बनाने में स्त्री कामयाब हुई है इसलिए साहित्यिक अध्ययन में पारिस्थितिक स्त्रीवाद के नज़रिए से पठन-पाठन की ज़रूरत बढ़ती जा रही है।

चिपतो आंदोलन में महिलाओं की भूमिका

इको-फ़ेमिनिज़्म से सम्बंधित कुछ प्रमुख रचनाएँ-

अल्पना मिश्र का उपन्यास 'अस्थिफूल'

मृदुला गर्ग का उपन्यास 'मिलजुल मन'

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इको-फ़ेमिनिज़्म का उद्देश्य पुरुष के स्थान पर स्त्री को प्रतिष्ठित करना नहीं बल्कि स्त्री -पुरुष भेद के बिना सभी मनुष्य को समान अधिकार देना और सबके मन में लिंगभेद से परे एक दृष्टिकोण पैदा करना है। ऐसे समाज में ही प्रकृति सुरक्षित रह सकती है। दूरदर्शिता के बिना तैयार की गई योजनाओं का दुष्परिणाम प्रकृति को भोगना पड़ रहा है जो मानव जाति के लिए ख़तरा बनता जा रहा है। इससे बचने के लिए प्रकृति से मिलकर जीने की एक जीवन - शैली अपनानी होगी। इसके लिए पुरुष और स्त्री को कंधे से कंधा मिलाकर काम करना है तब कहीं जाकर ही स्वस्थ पर्यावरण से युक्त एक समरस समाज का सृजन होगा।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. इको-फ़ेमिनिज़्म पर एक लेख लिखिए।
2. शोषण का प्रतिरोध करने की चेतना पर एक लघु लेख लिखिए।
3. पारिस्थितिक स्त्रीवादी रचनाकारों के नाम लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. वन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण-राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण - डॉ. सुमन सिंह।
9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र - मेघा सिन्हा।
10. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस. 'डॉ. एस आर जयश्री।
11. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन - के वनजा

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

BLOCK 03

साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन

Block Content

Unit 1: साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन का उद्भव एवं विकास

Unit 2 : वीरेंद्र जैन और उनका उपन्यास डूब

Unit 3: समकालीन हिन्दी उपन्यास और पारिस्थितिकीय संकट-रोहिणी अग्रवाल (लेख)

Unit 4: समकालीन हिंदी कहानियों में पारिस्थितिकी का स्वरूप एवं प्रमुख कहानीकार

इकाई 1

साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन का उद्‌भव एवं विकास

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन के उद्‌भव एवं विकास से परिचय होता है
- पर्यावरण नैतिकता का बोध प्राप्त होता है
- साहित्य की विभिन्न विधाओं में पारिस्थितिक विमर्श के बारे में समझता है

Background / पृष्ठभूमि

भारतीय साहित्य का सामाजिक जीवन मूल्यों के साथ दोहरा सम्बन्ध है। एक ओर साहित्य एक स्वच्छ दर्पण बन-ाकर अपने समय के सामजिक मूल्यों, मनुष्य के कर्तव्य व सामजिक विसंगतियों, अव्यवस्थाओं,रूढ़ियों को प्रतिबिंबित करता है, तो दूसरी ओर वह उसकी मीमांसा करके उनका संसोधित रूप प्रस्तुत करके समाज विशेष के सदस्यों को नए जीवन मूल्यों के निर्माण की प्रेरणा देता है। भारतीय साहित्य सामजिक युग चेतना का प्रतिनिधि है। आज साहित्यकार भारतीय जन जीवन में व्याप्त विकृतियों, समस्याओं, अव्यवस्थाओं को प्रस्तुत इन ज्वलंत समस्याओं के समाधान सजगता और गंभीरता के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं। पर्यावरण संरक्षण और पारिस्थितिक चिंतन पर रचित रचनाएँ इसी बात का प्रमाण हैं।

Keywords / मुख्य बिन्दु

पारिस्थितिक चिंतन, उद्‌भव एवं विकास, पर्यावरण नैतिकता, पारिस्थितिक विमर्श

Discussion / चर्चा

3.1.1 भारतीय साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन का उद्‌भव और विकास

भारतीय साहित्य एक महासागर है, जो किसी भाषा विशेष का साहित्य ना होकर विविध भाषाओं का साहित्य है। अनेकों भाषाओं की साहित्यिक धाराएँ भारतीय

साहित्य रूपी समुद्र में समाहित होती रही हैं और निरंतर उसमें लय हो रही हैं। विश्व के प्राचीनतम साहित्य वेद से लेकर वर्तमान तक का भारत का साहित्य भारतीय साहित्य है। भारतीय साहित्य केवल कला कला के लिए सिद्धांत का अनुगमन नहीं करता, शिवेत रक्षतये की शास्त्रीय परिकल्पना के साथ सांस्कृतिक मूल्यों का समुच्चय, परंपरा से सम्पृक्ति और जीवन मूल्यों की सुरक्षा ही भारतीय साहित्य का ध्येय है।

- विश्व के प्राचीनतम साहित्य वेद

आज संपूर्ण विश्व पर्यावरण प्रदूषण की भयावहता से ग्रसित है। पर्यावरण में हो रहा निरंतर असंतुलन एक गंभीर चिंता व चिंतन का विषय है। ऐसी कठिन परिस्थितियों से मुक्ति पाने के लिए हमें पुनः अपने भारतीय साहित्य द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलना होगा। भारतीय साहित्य में पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता वैदिक काल से ही मिलती है। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद व अन्य धर्म ग्रंथो में, संस्कृत साहित्य में, बौद्ध जैन साहित्य में, भारत के हर राज्यों की भाषाओं के साहित्य में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता के दर्शन होते हैं।

- भारतीय साहित्य में पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता वैदिक काल से ही मिलती है।

3.1.1.1 वेदों में पर्यावरण संरक्षण

वेद भारतीय वांग्मय की अमूल्य निधि हैं। संपूर्ण भारतीय साहित्य में इनका अत्यधिक महत्व है। इसमें ज्ञान, विज्ञान, धर्म, अध्यात्म और पर्यावरण संरक्षण का विशाल सागर विद्यमान है। आज पूरे विश्व में पर्यावरण एक गंभीर चर्चा का विषय बना हुआ है। पर्यावरण पर चर्चा पर भारत के संदर्भ में कोई नया विषय नहीं है। हमारे धर्म, दर्शन एवं संस्कृति के पुरोधाओं ने सर्वप्रथम पर्यावरण के विषय में ही सोचा और पर्यावरण सुरक्षा को धार्मिक भावना से जोड़कर उसे सांस्कृतिक परंपरा का अभिन्न अंग बना दिया। वायु, जल, वर्षा, भूमि, वनस्पति, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, वन्य जीव, सूर्य की रोशनी, पर्वत, पहाड़, नदी, तालाब,-आदि सभी मिलकर पर्यावरण की संरचना करते हैं। संतुलित पर्यावरण का ताना-बाना ही पृथ्वी पर जीवन प्रक्रिया ठीक से चलने में मदद करता है। हमारे ऋषि मुनियों ने सदैव प्रकृति की आराधना अर्चना और प्रार्थना कर परिस्थितिकी संतुलन को कायम रखा। शांति मंत्र में इसी संतुलन की ही ध्वनि सुनाई देती है।

- आज पूरे विश्व में पर्यावरण एक गंभीर चर्चा का विषय बना हुआ है

वेदों में धरती को माँ कहा गया है। वेदों में पृथ्वी को विश्व का भरण-पोषण करने वाली, धनों की खान, सुवर्ण से युक्त तथा जगत को बसाने वाली बताया गया है-

'विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी।।'

पृथ्वी के ये विशेषण पर्यावरण की दृष्टि से भी सार्थक कहे जा सकते हैं। क्योंकि विश्व का भरण पोषण पर्यावरण की अनुकूलता पर ही निर्भर है। विभिन्न प्रकार के फल औषधीय फसलें, अनाज, पेड़-पौधे इसी पृथ्वी पर उत्पन्न होते हैं। उन पर ही हमारा भोजन निर्भर है। यजुर्वेद के एक मंत्र में आदेश दिया गया है कि पृथ्वी को दृढ़ करो तथा पृथ्वी पर हिंसा मत करो (यजुर्वेद 13-8)

- विश्व का भरण पोषण पर्यावरण की अनुकूलता पर निर्भर

भूमि की तरह अन्य पंच महाभूतों में देव सानिध्य मान कर उन्हें संरक्षित रखने का प्रयास किया गया है।। वैदिक मान्यता के अनुसार पर्यावरण की शुद्धि का सर्वोत्तम साधन अग्नि होता है। यज्ञ की प्रक्रिया अनुसार अग्नि में घी, सामग्री एवं अन्य पदार्थ आहुति के रूप में डाले जाते हैं। यज्ञ कुंड में आहुति देने का यही अभिप्राय है कि वह आहुति यहाँ से उठकर संपूर्ण वायुमंडल में फैल जाए और उसे सुगंधित तथा रोग रहित कर दे। यही आहुति दूषित जलों में प्रवेश करके उन्हें शुद्ध करती हुई अंत में सूर्य को प्राप्त हो जाए। हरे पेड़ों को काटने से प्राकृतिक संतुलन बिगड़ता है इसीलिए इस पर निषेधाज्ञा लागू की गई थी। यज्ञ हवन आदि धार्मिक कार्यों के लिए सूखे पेड़ खोजे जाते थे।

- हरे पेड़ों को काटने से प्राकृतिक संतुलन बिगड़ता है

पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने में पेड़ पौधों की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है हमारेऋषि मुनियों ने तो वर्षों के नीचे रहकर आत्मबोध प्राप्त किया था प्रकृति के साथ मैत्रीही नहीं अपितु प्रकृति को सदा नमन करने की हमारी मान्यता रही है वनों को वन देवता कहकर पुकारा गया। प्रायः हर पेड़ के साथ कोई ना कोई कथा जुड़ी है और धार्मिक महत्व मिला है। इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण पीपल, नीम, तुलसी, बेल आदि हैं क्योंकि इनमें दिव्य औषधि गुण विद्यमान हैं। पीपल सर्वाधिक आक्सीजन देता है यह वैज्ञानिक तथ्य है तो तुलसी व नीम के औषधीय गुण सर्वविदित हैं। यदि वृक्ष काटना अत्यन्त आवश्यक हो जाय तो हमारे पूर्वज हाथ जोड़कर प्रार्थना भाव से परोपकार की भावना मन में रखकर मन ही मन आज्ञा लेकर आवश्यकतानुसार भी वृक्ष काटते थे-

नमस्ते वृक्षपूजेयं विधिवत सम्प्रगृह्यताम्।
यानीह भूतानि व अर्चार्थ ममुकस्य व देवस्य परिकल्पित

- पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने में पेड़ पौधों की भूमिका महत्वपूर्ण है

जिस देश में व्यक्ति वृक्ष काटने से पूर्व उससे क्षमा प्रार्थी हो, यही नहीं उस पर रह रहे जीव - जंतुओं पक्षियों से अन्यत्र निवास करने की विनती करता हो ऐसी आदर्श स्थिति की कल्पना भारतीय साहित्य को छोड़कर भला कहीं और की जा सकती है? पर्यावरण एवं तकनीकी विकास में एक सामंजस्य पैदा करके जन भावनाओं को अपनी परंपराओं से जोड़कर हम भारतवासी पुनः एक बार नवीन प्रकृति-मित्र परंपरा में विश्व के मार्गदर्शक बन सकते हैं।

- प्राकृतिक पदार्थ हमारे यथार्थ मित्र वह जीवनदाता हैं

पर्यावरण विषयक चिंतन भारत की परिप्रेक्ष्य में कोई नया नहीं है। यह हमारी धार्मिक एवं सांस्कृतिक परंपरा से जुड़ा हुआ है। पर्यावरण शब्द का उल्लेख किए बिना यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि प्राकृतिक पदार्थ हमारे यथार्थ मित्र वह जीवनदाता हैं। प्रकृति के साथ विरोध करके हम शुद्ध पर्यावरण के अभाव में जीवित नहीं रह सकते, यही एहसास वेदों ने संपूर्ण विश्व को कराया है।

3.1.2 उपनिषद एवं पुराण में पर्यावरण संरक्षण

उपनिषद में पर्यावरण महत्व एवं संरक्षण संबंधी पर्याप्त साहित्य मौजूद है। यद्यपि उपनिषद ग्रन्थों के रचयिता मनन करने वाले ऋषि मुनि आत्म चिंतन में अधिक लीन

रहा करते थे परंतु वह अपने आसपास के वातावरण एवं परिवेश के प्रति सावधान एवं सचेत रहा करते थे। उपनिषदों में पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के लिए पंच भौतिक तत्वों को देवों का रूप दिया गया है तथा पशु हिंसा वह पेड़-पौधों को काटने जैसी क्रियाओं को निषिद्ध बताया गया है जिससे प्राकृतिक संतुलन बना रहे। प्रकृति ने जिस प्रकार मनुष्य की संरचना की है उसी प्रकार जीव जंतुओं और वनस्पतियों की भी। प्रकृति में रहने वाले सभी जीवों को स्वाभाविक क्रियाएं करने की स्वतंत्रता देने से ही पारिस्थितिक संतुलन बना रह सकता है। इसीलिए हमारे धार्मिक ग्रंथो में पीपल, वट, नीम व तुलसी देव तुल्य मानकर पूजा की जाती रही है जो पर्यावरण संरक्षण का प्रतीक है। संसार का संपूर्ण भौतिक विकास सूर्य की सत्ता पर निर्भर है। जड़-चेतन का अस्तित्व सूर्य के कारण है। इस धरती पर सूर्य के ताप एवं प्रकाश से ही जीवन का संचार हुआ इसी कारण उपनिषदों में सूर्य को प्राण की संज्ञा दी गई है-

- संसार का संपूर्ण भौतिक विकास सूर्य की सत्ता पर निर्भर है।

'आदित्योह वै प्राणः'

पुराण-भारतीय वांग्मय में पुराण साहित्य का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। पुराणों में वर्ण्य विषय में विविधता है। पुराणों में पर्यावरण संरक्षण पर विशद चर्चा की गई है। इसमें प्राकृतिक पर्यावरण के महत्व संबंधी हजारों वक्तव्य भरे पड़े हैं जैसे वृक्षों तथा पौधों में भी आत्मा का वास माना जाता है जीव जंतुओं में भी इस परमात्मा का अंश है इसीलिए हरे पेड़ों को काटना मनुष्य वध के समान निंदनीय माना जाता था तथा उसकी सेवा की जाती थी इन सब के पीछे एक ही उद्देश्य था कि किसी न किसी प्रकार से वृक्षों का संरक्षण हो हमारे ऋषिगण इतने संवेदनशील एवं कृतज्ञ पारायण रहे हैं कि वह पृथ्वी के पाद स्पर्श से भी अपराध बोध अनुभव करते हुए उसे क्षमा याचना करते हैं-

समुद्र वसने देवी पर्वत स्तन मंडले
विष्णु पत्नी नमस्तुभ्यं पाद स्पर्श क्षमस्व मे

- पुराणों में पर्यावरण संरक्षण पर विशद चर्चा की गई है।

अर्थात् विष्णु प्रिया वसुंधरा समुद्र आपके वस्त्र एवं पर्वत स्तन है आपको नमस्कार है मेरे पास स्पर्श को क्षमा करें। वामन पुराण में तो प्रातः काल उठते ही पांचो तत्वों का स्मरण करने की परंपरा पर जोर दिया गया है-पृथ्वी अपनी सुगंध, जल अपने बहाव अग्नि अपने तेज़, अंतरिक्ष (आकाश)अपनी शब्द ध्वनि और वायु अपने स्पर्श गुण के साथ हमारे प्रातः काल को अपना आशीर्वाद दें यही हमारी कामना है।

भारतीय संस्कृति व सभ्यता में वृक्षों को पूजनीय माना गया है जो पर्यावरण संरक्षण का प्रतीक है हम देवता उसी को मानते हैं जो निस्वार्थ भाव से दूसरों की सेवा में तत्पर रहे और हमेशा ही कुछ देता रहे वृक्ष अपनी उत्पत्ति के साथ ही अनेक रूपों में प्राणी जगत को कुछ ना कुछ देता ही है इसीलिए पुराणों में वृक्षों के लिए कहा गया है

मूले ब्राह्म त्वचा विष्णु साखायाम् महेश्वरम
पत्रम् सर्व देवानाम् वृक्ष देव नमोस्तुते

मत्स्य पुराण, अग्नि पुराण, वायु पुराण, स्कंद पुराण एवं श्रीमद् भागवत पुराण में वृक्षारोपण एक धार्मिक एवं पुण्य कार्य के रूप में माना गया तथा सभी को वृक्षारोपण उत्सव करना चाहिए ऐसा भी उल्लेख मिलता है वराह पुराण में तो पेड़-पौधों और वन-ास्पतियों के रोपण, पोषण और संवर्धन को पुण्य कार्य माना गया है। मत्स्य पुराण में एक वृक्ष को दस पुत्रों के बराबर माना गया है-'दश पुत्र समो द्रुमः'

- प्रकृति के रक्षण का मतलब मानवता का रक्षण है

हमारे पुराणों में प्रकृति संरक्षण के इतने संदर्भ हैं कि हमारी पाठ्य सामग्री की शब्द सीमा में समा ही नहीं सकते लेकिन कुछ ही उदाहरण से हम कथ्य को बड़ी ही गंभीरता से आत्मसात कर चुके हैं। वनों का विनाश अपने आप में एक महान ख़तरा है। यह ख़तरा मनुष्यों से लेकर पूरे राष्ट्र के लिए है। प्रकृति के रक्षण का मतलब मानवता का रक्षण है इसीलिए पुराणों में वृक्ष लगवाने तालाब व कोई खुदवान बगीचे लगवाने जैसे जनहितैषी उपाय सुझाये गए हैं। ये सभी कृत्य स्वास्थ्य है और आमोद-प्रमोद की दृष्टि से तो उपयोगी होते ही हैं साथ ही वायु एवं जल को प्रदूषण से बचाते हैं एवं पर्यावरण को शुद्ध बनाए रखने में सहायक भी होते हैं।

3.1.3 संस्कृत साहित्य में पर्यावरण संरक्षण

- आदि कवि वाल्मीकि रामायण से लेकर संस्कृत रचनाकारों ने अपने प्रकृति प्रेम को किसी न किसी रूप में दर्शाया है

देववाणी संस्कृत संसार की प्राचीनतम भाषा और वांग में जगत का प्राचीनतम ही नहीं विशालतम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण साहित्य है संस्कृत वांग में का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि संस्कृत विद्वानों ने जिस सूक्ष्म दृष्टि से पर्यावरण के प्रतिप्रत्येक क्षेत्र को चित्रित किया है इस सूक्ष्म दृष्टि से पर्यावरण प्रदूषण के प्रति भी यह संस्कृत आचार्य सजग थे। संस्कृत साहित्य के दो रूप हैं वैदिक साहित्य और लौकिक साहित्य। वैदिक साहित्य मूलतः धर्म प्रधान साहित्य है और उसमें यज्ञ व देव स्तुतियों की ही अधिकता है पर लौकिक साहित्य प्रधानतया लोक व्रत प्रधान है। आदि कवि वाल्मीकि की रचना रामायण से लेकर आज तक लिखा जा रहे साहित्य में संस्कृत रचनाकारों ने अपने प्रकृति प्रेम को किसी न किसी रूप में और किसी न किसी प्रसंग में अवश्य दर्शाया है।

- महाकवि कालिदास को प्रकृति से अगाध प्रेम था

महाकवि कालिदास को प्रकृति से अगाध प्रेम था। रघुवंश महाकाव्य, मेघदूत, कुमार संभव, ऋतु संहार, अभिज्ञान शाकुंतलम में प्रकृति के नाना रूपों तथा वृक्ष वनस्पतियों का मानव सापेक्ष सूक्ष्म वर्णन देखने को मिलता है। महाकवि कालिदास अभिज्ञान शाकुंतलम के मंगलाचरण में भगवान शिव से पांच तत्वों की रक्षा के लिए प्रार्थना करते हैं इसमें विधाता की आदि रचना जल, अग्नि, सूर्य, चंद्र, आकाश, सर्वबीज प्रकृति धरित्री, प्राण स्वरूप-वायु की अष्टमूर्ति शिव से रक्षा की प्रार्थना की गई है। वन देवता के रूप में अधिष्ठित वृक्ष ससुराल जाती हुई शकुंतला को आशीर्वाद देते हैं-हे शकुंतला तुम्हारा मार्ग कल्याण मय हो रास्ते में बीच-बीच में कमलों से खिले सरोवर हों, धूप से बचने के लिए रास्ते के दोनों ओर छायादार वृक्ष हों तथा शांत शीतल सुगंधित हवा चले जिससे मार्ग में तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट ना हो। क्या वर्तमान समय में ऐसे सुरम्य वातावरण के लिए पुनः प्रयास नहीं किया जा सकते ताकि हमें भी शीतल व सुगंधित हवा मिल सके।

- प्रकृति के साथ तादाम्य पर्यावरण संरक्षण है

कालिदास का यह नाटक प्रकृति की अनन्य आत्मीयता, वृक्ष, लता, पशु पक्षियों के सहज स्नेह व्यवहार, को प्रकट करने में पूर्णतया सफल रहा है। शकुंतला को विदा करते समय लता रोती है। वृक्ष विलाप करते हैं। हिरण आँसू ढलकाते हैं। अपनी स्नेह भरिता शकुंतला के आसन्न विरह में मृग शावक उसका आंचल नहीं छोड़ता है। प्रकृति से तादाम्य की यह पराकाष्ठा है। प्रकृति के साथ यह तादाम्य ही पर्यावरण संरक्षण है जो अत्यंत सहज एवं स्वाभाविक है।

3.1.4 बौद्ध एवं जैन साहित्य में पर्यावरण

- बुद्ध पूर्णिमा पर्यावरण संरक्षण का बड़ा धार्मिक पर्व है।

बौद्ध साहित्य का विश्व के प्रमुख धार्मिक साहित्य में एक विशेष स्थान है। यह साहित्य बुद्ध एवं उनके धर्म से संबंधित है। बौद्ध मितवा लंबी पीपल की पूजा करते हैं क्योंकि महात्मा बुद्ध ने इसी वृक्ष की शीतल छाया में बुद्धत्व लाभ प्राप्त किया था इसी कारण यह बोधि वृक्ष अर्थात ज्ञान का प्रकाश देने वाला वृक्ष है जिसे काटना या उसे पर कुल्हाड़ी का वार करना भी पाप समझा जाता है। पीपल की पूजा अन्य अवसरों पर भी होती है। भगवान बुद्ध का जन्म बुद्ध पूर्णिमा के रूप में मनाया जाता है। पर्यावरण संरक्षण का इससे बड़ा धार्मिक पर्व और क्या हो सकता है यदि प्रत्येक बुद्ध पूर्णिमा को उनके अनुयाई एक पीपल का वृक्ष या अन्य कोई भी वृक्ष लगे तो यह धरती फिर से हरी भरी हो जाएगी।

3.1.5 जैन साहित्य

- जैन धर्म में पर्यावरण सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया है

जैन धर्म पूर्ण रूप से अहिंसा पर आधारित है। अहिंसा महावीर स्वामी की शिक्षा और जैन धर्म के सिद्धांतों का मूल मंत्र है। मन, वचन और कर्म से किसी के प्रति अहित की भावना ना रखना ही वास्तविक अहिंसा है। अहिंसा में विश्वास रखने वाले लोग पेड़-पौधों को नष्ट करने की कल्पना भी नहीं कर सकते। जैन धर्म में पर्यावरण सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया है। महावीर स्वामी का पहला उपदेश आचरांग में संकलित है जिसमें जीवों की रक्षा करने की बात कही गई है। महावीर स्वामी ने स्पष्ट निर्देश दिए हैं कि पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, वनस्पति और षटकाय जीव हैं साक्षात प्राण धारी जीव। इन्हें अपने ढंग से जीने देना धर्म है इन्हें कष्ट पहुंचाना या नष्ट करना हिंसा है पाप है अहिंसा परम धर्म है और हिंसा महापाप महावीर स्वामी के उपदेश का सार यही है कि वनस्पति जगत के प्रति करुणा, सहृदयता, कृतज्ञता और क्षमा याचना का भाव प्रत्येक मनुष्य में होना चाहिए ताकि प्रकृति को संरक्षण प्रदान कर हम पर्यावरण को सुरक्षित रख सकें।

3.1.6 मलयालम साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण

मलयालम के प्रमुख साहित्यकार जिनकी रचनाएँ प्रकृति संरक्षण के लिए आवाज़ उठाती हैं-

- एस.के. पोट्टेकाट-ओरु देशत्तिंटे कथा।
- वैकोम मुहम्मद बशीर-भूमियुडे अवकाशीकल।

- अयप्पा पणिक्कर-काड एविडे मक्कले [कविता]
- एन वी कृष्ण वारियर-मरंग्लुम वल्लिकलुम [कविता]
- ओ.एन.वी. कुरुप - भूमिक्कोरु चरम गीतम।
- कडमनिट्टा रामकृष्णन-कुरत्ति, काट्टालन, कुंजें मुलप्पाल कुडीक्क्यस्त।
- अम्बिकासुतन मंगाड-चिन्नमुन्डी [कहानी संग्रह], एनमगजे [उपन्यास]।
- सुगाताकुमारी : कवि और पर्यावरण संरक्षणकर्ता जिन्होंने केरल की शांत घाटी को बचाने के लिए लड़ाई लड़ी। वे एक मलयाली कवि और कार्यकर्ता थीं जो मुख्य रूप से पर्यावरण से संबंधित मुद्दों पर काम करती थीं। वनपर्वम-वनपर्वम' शीर्षक वाली इस किताब में ओ.एन.वी. कुरुप, वायलोपिल्ली श्रीधर मेनन, कडमनिट्टा रामकृष्णन, अयप्पा पणिक्कर, देशमंगलम रामकृष्णन, डी विनयचंद्रन, विष्णु नारायणन नंबतिरि और सुगातकुमारी टीचर की कविताएँ थीं। इन सभी कवियों ने हरित आंदोलन को अपना समर्थन देने के लिए जंगल पर कविताएँ लिखीं। ओ.एन.वी की 'काड' या जंगल और विनयचंद्रन की 'काडिनु आना एंतु पेरिडुम' (मैं जंगल का क्या नाम रखूँगा) किताब की उल्लेखनीय कविताओं में से थीं।

3.1.7 हिंदी साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन का उद्‌भव एवं विकास

छिति जल पावक गगन समीरा / पंच तत्व मिल बना शरीरा

- पर्यावरण का प्रभाव व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास को प्रभावित करता है

ये पंच महाभूत मानव जीवन के आधार हैं। इनके अभाव में जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती और जो मानव जीवन से जुड़ा है वही साहित्य में प्रतिबिंबित होता है। हिंदी साहित्य में तो प्रकृति नाना रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज़ कराती आई है। यहाँ प्रकृति सहचरी रूप में भी है और उपदेशिका रूप में भी, कभी शांत रूप में है, तो कभी ध्वंसात्मक रूप में। प्रकृति कभी अनुपम सौंदर्य बिखेरती है, तो कभी अपने विराट स्वरूप से अचंभित कर देती है। हिंदी साहित्यकार भी प्रकृति की प्रेरणा से ही अपनी सर्जना को पल्लवित और पुष्पित करते आए हैं। रचनाकार तो हमेशा ही प्रकृति प्रेमी रहे हैं। पर्यावरण का प्रभाव व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास को प्रभावित करता है। तो भला साहित्य इससे कैसे अछूता रह सकता है?

- प्रकृति संरक्षण एवं पर्यावरण के प्रति साहित्य सदैव साधक रहा है

प्रकृति के संरक्षण एवं पर्यावरण के प्रति साहित्य सदैव साधक रहा है। हिंदी साहित्य में जल संरक्षण, प्रकृति संरक्षण व पर्यावरण विनाश से उत्पन्न भयावहता को साहित्यकारों ने अनेक उदाहरण प्रस्तुत कर जनता को सचेत करने का प्रयास किया है। ये रचनाएँ कहीं प्रकृति को सहचारी के रूप में देखती हैं, तो कहीं उन्हें संरक्षण प्रदान करने के लिए उन्हें देवता के रूप में, तो कहीं पर्यावरण संतुलन की वजह से उसके दूरगामी प्रभावों के प्रति सोचने को बाध्य करती हैं तथा मानव जीवन में उसकी उपयोगिता को देखते हुए इसका संरक्षण आवश्यक मानती हैं। आदिकाल से लेकर समकालीन हिंदी साहित्य प्रकृति प्रेम, पर्यावरण संरक्षण, संवर्धन के संदर्भों से भरा पड़ा है।

विद्यापति गंगा स्तुति के माध्यम से अपनी आस्था व्यक्त करते हैं। पैर से जल छू जाने पर माँ गंगा से क्षमा याचना करते हैं-

एक अपराध छेमब मोर जानी \ परसल माय पाय तुअ पानी।

कबीरदास जी की पंक्तियों का हम प्रकृति संरक्षण के सन्दर्भ में अर्थ लगा सकते हैं। संकेत रूप में ही सही 'जल ही जीवन है' का संदेश देती हैं ये पंक्तियाँ-

काहे रे नलिनी तू कुमिलानी \ तेरे ही नालि सरोवर पानी
जल में उत्पति जल में बास जल में नलिनी तोर निवास

अर्थात कबीर दास की आत्मा रूपी कमल से पूछते हैं कि ईश्वर रूपी जल में रहकर भी तुम क्यों कुंभ हाल गई हो अगर इस अर्थ को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जल संकट को दृष्टि में रखकर देखें तो यह पद बिल्कुल सटीक बैठता है कि हमारे चारों तरफ पर्याप्त जल होते हुए भी हम पीने योग्य जल के संकट से गुजर रहे हैं। कारण हम अपनी पवित्र नदियों को विषप्त करते जा रहे हैं। अब भी समय रहते अगर जल संरक्षण पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया तो हमारा जीवन भी जल के बिना कुम्हला जाएगा। जल की रक्षा हमें हर हाल में करनी होगी क्योंकि वह उन पांच तत्वों में से एक है जिनके कारण सृष्टि का निर्माण हुआ है।

जल संरक्षण और जल संचयन के महत्व को दर्शाता है रहीम दास का प्रस्तुत दोहा-

रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून
पानी गए न ऊबरे मोती मानुष चून

- जल की रक्षा हमें हर हाल में करनी होगी

कृष्ण भक्त कवि सूरदास ने भी गंगा को मुक्ति दायिनी, परम पवित्र तथा वरदान देने वाली बताया है-'परम पवित्र मुक्ति की दाता, भागीरथी भई वर दैन'

इसी प्रकार तुलसीदास जी रामचरितमानस के प्रसंग में गंगा, जमुना व सागर की अभ्यर्थना के माध्यम से प्राकृतिक शक्तियों के प्रति विश्वास, आस्था और अनुराग द्वारा पर्यावरण स्वच्छता का संदेश देते हैं। रामचरितमानस में सभी जगह प्राकृतिक सौंदर्य व उनके संरक्षण के उदाहरण भरे पड़े हैं। भरत जल संरक्षण के लिए कुआँ भी खुदवाते हैं-

भरत कूप अब कहिहहीं लोगा। अति पावन तीर्थ जल जोगा

पर्यावरणीय सामंजस्य से कैसा अनुपम सुख व शांति प्राप्त होती है व प्रेम स्पन्दन स्फुटित होता है, इसकी अभिव्यक्ति कविवर तुलसीदास की इस चौपाई से होती है-

फूलहि फरहिं सदा तरु कानन, रहहिं एक संग गज पंचानन
खग मृग सहज वयरु बिसराई, सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई

रीतिकालीन कवियों में बिहारी, पद्माकर, देव, सेनापति ने भी प्रकृति में सौंदर्य को देखा और परखा है। मैथिली शरण गुप्त के साकेत में चंद्र ज्योत्सना की छटा बड़ी ही

मनोहारी है-

चार चंद्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल थल में
स्वच्छ चांदनी बिछी हुई है अवनि और अंबर तल में

साहित्यकारों ने प्रकृति को कभी आलंबन रूप में चित्रित किया है तो कभी सहचरी के रूप में उसे प्यार किया, कभी उसमें अनन्य शक्ति का वास देकर आश्चर्य चकित और मुग्ध हुए तो कभी मातृशक्ति के रूप में उसकी पूजा की, कभी उन्हें सुख-दुःख की छाया प्रकृति में दिखाई पड़ी तो कभी उसे संसार का सर्वश्रेष्ठ गुरु मानकर उससे सीखने का प्रयत्न किया।-

- साहित्यकारों ने प्रकृति को कभी आलंबन और कभी सहचरी के रूप में चित्रित किया है

पर्वत कहता शीश उठाकर, तुम भी ऊँचे बन जाओ।
सागर कहता है लहरा कर, मन में गहराई लाओ।
समझ रहे हो क्या कहती है, उठ-उठ, गिर-गिर तरल तरंग।
भर लो, भर लो अपने मन में, मीठी मीठी मृदुल उमंग।
पृथ्वी कहती धैर्य न छोड़ो, कितना भी हो सिर पर भार
नभ कहता है फैलो इतना, ढक लो तुम सारा संसार।

माना जाता है कि जब इस सृष्टि की शुरुआत हुई थी तब चारों ओर पानी ही पानी था। जयशंकर प्रसाद जी की प्रस्तुत पंक्तियाँ इसी तथ्य को उजागर करती हैं-

नीचे जल था, उपर हिम था एक तरल था एक सघन।
एक तत्व की प्रधानता, कहो उसे जड़ या चेतन।

- प्रकृति चित्रण की विविध शैलियाँ आधुनिक हिंदी साहित्य की विशिष्ट उपलब्धि है।

निश्चित ही समष्टि का कण-कण जलधारा से स्पन्दित है। जल से सिंचित बीज, पौधे, पुष्पित, पल्लवित और फलित होते हैं। भूमि शस्य श्यामल बनती है, हरीतिमा ओढ़े धरती सबको अकर्षित करती है। प्रकृति चित्रण की विविध शैलियाँ आधुनिक हिंदी साहित्य की विशिष्ट उपलब्धि है। छायावाद की मूल आत्मा प्रकृति और प्रेम ही है। छायावादी कवियों ने मनसा, वाचा, कर्मणा प्रकृति की ही आराधना की है। प्रकृति प्रेमी सुमित्रानंदन पंत तो प्रकृति की छाया छोड़ने को तैयार ही नहीं थे-

छोड़ द्रुमों की मृदु छाया तोड़ प्रकृति से भी माया
बाले तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन

- जब तक हम प्रकृति को संरक्षण प्रदान करते हैं तब वह हमारे लिए जीवन दायिनी बनकर हमारा पोषण करती है।

परंतु आज हम ठीक इसके विपरीत जा रहे हैं, प्रकृति की कोमल छाया को छोड़कर भौतिकता के गर्त में धंसे जा रहे हैं। आज के हालात तो ये हैं कि भौतिक प्रगति और सम्पन्नता की होड़ ने आज प्रकृति को दूषित करके रख दिया है। किसी भी वस्तु के सृजनात्मक और ध्वंसात्मक दो रूप होते हैं। इसी प्रकार जब तक हम प्रकृति को संरक्षण प्रदान करते हैं तब वह हमारे लिए जीवन दायिनी बनकर हमारा पोषण करती है। परन्तु जब हम उसका विनाश करते हैं तो वह ध्वंसात्मक रूप ग्रहण कर हमारा विनाश

करती है। वर्तमान समय में कहीं अधिक वर्षा से बाढ़, तो कहीं कम वर्षा से सूखा, कहीं तूफान से तबाही तो कहीं भूकम्प, ये सभी रूप प्रकृति का ध्वंसात्मक रूप ही हैं। हमारे साहित्यकार प्रकृति के इस रूप को दिखाकर हमें चेतावनी देना चाहते हैं कि प्रकृति संरक्षण में ही हमारी भलाई है।

आदिम युग में जब मनुष्य सभ्यता और संस्कृति के आलोक से वंचित था, तब प्रकृति ही उसके जीवन का आधार थी। आज हम जैसे-जैसे सभ्य और वैज्ञानिक होते जा रहे हैं, अपने जीवन आधार को नष्ट करते जा रहे हैं। प्रकृति से छेड़छाड़ का दुष्परिणाम ही आज प्रदूषण के भयावह रूप में परिवर्तित हो रहा है। 'कामायनी' में कवि ने जड़ यांत्रिक सभ्यता के विरुद्ध आवाज़ उठाई है-

प्रकृति शक्ति तुमने यंत्रों से सबकी छीनी
शोषण कर जीवनी बना दी जर्जर झीनी।।

समकालीन कवियों ने अपनी कविता में पर्यावरण के बिगड़ते संतुलन और प्रकृति के नाना रूपों पेड़-पौधों, चिड़िया, पहाड़, नदी, समुद्र, हवा, पानी, वर्षा, गर्मी-सर्दी, फल-फूल आदि को लेकर उन्हें नए संदर्भों के बीच रखकर अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। इन कवियों की रचनाओं में प्रकृति कोई अमूर्त सत्ता नहीं है बल्कि प्रकृति और मनुष्य का एक अटूट रिश्ता है। किसी एक का अकेले में कोई अस्तित्व नहीं है। यही कारण है कि समकालीन कवियों ने प्रकृति और मनुष्य के रिश्ते को बड़ी ही सजगता के साथ चित्रित किया है। साथ ही वे प्रकृति के क्षरण और पर्यावरण प्रदूषण की भयावहता के दूरगामी प्रभावों के प्रति चिंतित दिखाई देते हैं। रघुवीर सहाय ने प्रकृति और पर्यावरण को गहरी ऐन्द्रिकता के साथ अपने काव्य में बख़ूबी चित्रित किया है। उनकी कविताओं में पर्यावरण संबंधी चिंताएँ निहित हैं। कवि को यह चिंता सताती रहती है कि पहाड़, जंगल, मिट्टी जैसे घटते नैसर्गिक संसाधनों के कारण प्रकृति केवल किताबों या स्मृति मात्र बनकर न रह जाए

- प्रकृति से छेड़छाड़ का दुष्परिणाम ही आज प्रदूषण के भयावह रूप में परिवर्तित हो रहा है।

वे पहाड़, जंगल, मिट्टी के मैदान हरेञ्इनकी विशालता का कोई गुणगान
अब सुनाई नहीं पड़ता

प्राचीन एवं मध्यकालीन छायावाद तक जहाँ हमें प्राकृतिक सौंदर्य व उसके अमूर्त रूप के दर्शन हुए वहीं समकालीन हिंदी कविता तक आते-आते प्रकृति के संरक्षण के प्रति चिंता व जागरूकता दिखलाई पड़ती है। क्योंकि वर्तमान समय में प्रकृति का दोहन बड़े पैमाने पर हो चुका है और अनवरत हो रहा है। कवि को यह चिंता सता रही है कि अगर यही क्रम जारी रहेगा तो आगे क्या होगा। सामाजिक सरोकारों से जुड़े भवानी प्रसाद मिश्र आज के पेड़ पौधों की स्थिति का वर्णन इस प्रकार से करते हैं-

- वर्तमान समय में प्रकृति का दोहन बड़े पैमाने पर हो चुका है

कहीं नहीं बचे हरे वृक्ष। न झील सागर बच्चे हैं ना नदियाँ
पहाड़ उदास हैं और झरने लगभग चुपआँखों में घिरता है अंधेरा घुप
आसमान में चक्कर काटते पंछियों के दल नज़र नहीं आते

क्योंकि बनाते थे जिन पर वे घोंसले वे वृक्ष या कट चुके हैं या सूख चुके हैं।

प्रकृति का यह नियम रहा है कि वह हमारी ज़रूरत को पूरा करने में पूर्ण सक्षम है परंतु वह मनुष्य की बढ़ते लालच को पूरा नहीं कर सकती। मनुष्य की इसी लालची वृत्ति ने प्रकृति को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। आज जहाँ औद्योगिक उन्नति और वैज्ञानिक प्रगति ने मानव को सुविधा संपन्न बनाया वहीं उसके दुष्परिणाम भी स्वयं मानव को ही भुगतने पड़ रहे हैं। कवि भविष्य के प्रति चिंतित हैं इसलिए अपने परिवेश और प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों तथा उससे जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों के प्रति चिंता व्यक्त करते हैं। समकालीन कवि रामदास मिश्र की पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं-

- मनुष्य की लालची वृत्ति ने प्रकृति को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है

ओह कैसी हवा चल रही है आजकल
कि अमराई के सारे बौर देखते-देखते झुलस जाते हैं
बच्चे पैदा होते हैं विकलांग हो जाते हैं
अन्न खाने से पहले ही अपच करने लगता है
नदियाँ अपना जल लिए दिए ख़ुद ही प्यासी रह जाती हैं।
बादल आकर बिना बरसे, जल लिए लौट जाते हैं
धरती के रस को पीती हुई बालियान फसलों के कंधों पर
लाशों की तरह लटक जाती हैं हवाएँ हवाएँ
आँसू गैस भर गई है हर आंख में

भोगवादी संस्कृति, वैज्ञानिक चमत्कारों की अंधी दौड़ में कंक्रीट के जंगल खड़े करके दम गोटू वातावरण तथा विषाक्त होते जल संसाधन, जलवायु परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग के ख़तरे एवं चुनौतियाँ, हाल के वर्षों में पृथ्वी के तापमान में वृद्धि के परिणाम स्वरूप हरी-भरी पृथ्वी का विनाश हमारे देश को किस दिशा में पहुँच रहा है यह एक चिंतनीय विषय है। जंगल कटने से हमारी आयुर्वेद संबंधित वनस्पतियां भी धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं। 'आयुर्वेद' कविता में यह चिंता कुछ इस तरह व्यक्त हुई है-

आयुर्वेद की महक प्रकृति है
वनस्पतियाँ तना, छाल, फूल पत्तियाँ
हर्र, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, तुलसी पीपल
पर्यावरण ही आयुर्वेद
जो डूब रहा है सभ्यता के उत्तर औद्योगिक समुद्र में।

साहित्यकार मानव को चेताना चाहते हैं कि यदि उसने अपनी मनमानी को नहीं रोका तो एक दिन इस धरती का न जाने क्या हाल होगा-

- जंगल काटने से हमारी आयुर्वेद संबंधित वनस्पतियां धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं।

यह मनमानी यदि नहीं रुकी
तो पृथ्वी तापग्रस्त होगी
मिट जाएगा जीवन का क्रम इस धरती से

हम सभी भारतवासियों का दायित्व है कि हम अपनी प्राकृतिक सम्पदा को संरक्षण प्रदान करें और उसका सदुपयोग भी उचित मात्र में ही करें। हमारा परिवेश जिस तेज़ी से प्रदूषित होता जा रहा है, भविष्य के लिए ठीक नहीं है। आज अनेक कीटनाशकों और दवाईओं के अत्यधिक प्रयोग के कारण ज़मीन की उर्वरा शक्ति समाप्त होती जा जा रही है। ज़मीन में पैदा होने वाले खाद्य पदार्थों में पहले जैसी मिठास नहीं रह गयी है। इस बात पर चिंता व्यक्त करते हुए कुमार कृष्ण 'ज़मीन' कविता में लिखते हैं-

मैं लाल-पीले सेब को टुकड़ों में काटकर \ चखता हूँ ज़मीन का स्वाद \ वह पहले मीठी \ बाद में खट्टी लगती है \ अपना स्वाद बदल रही है ज़मीन

ज़मीन का स्वाद बदलना पर्यावरण के लिए शुभ नहीं है। कवि इस बात पर लोगों का ध्यान आकृष्ट कर उन्हें जागरूक होकर सोचने के लिए बाध्य कर देते हैं। पृथ्वी की उर्वरा शक्ति को बचाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों की जगह जैविक खेती को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

- वैदिक संस्कृति को अपनाकर आने वाली पीढ़ी को स्वस्थ जीवन का वरदान देना

इक्कीसवीं सदी की दहलीज़ पर खड़े मनुष्य को यह फैसला करना है कि वे वैदिक संस्कृति को अपनाकर आने वाली पीढ़ी को स्वस्थ जीवन का वरदान देना चाहते हैं या उनके पैरों के नीचे की ज़मीन को ही छीनना चाहते हैं। कवि त्रिलोचन अपने उद्‌गारों को अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं-

इस पृथ्वी की रक्षा मानव का अपना दायित्व है, \ इसकी वनस्पतियाँ चिड़ियाँ और जीव जंतु \ उसके सहयात्री हैं, इसी तरह जलवायु और सारा आकाश उसकी रक्षा में मानव की या तो रक्षा है उन्हीं सर्वनाश अधिक दूर नहीं।

ऐसे ही कवि विश्वनाथ प्रसाद भी चिन्तित हैं। अगर समय रहते हम सब इस स्थिति से निपटने के लिए कोई सख़्त कदम नहीं उठाते हैं तो कल इस धरती पर जीना दूभर हो जायेगा। आने वाली पीढ़ियाँ और प्रकृति के सभी तत्व हमें बुरा - भला कहेंगे-

इन्हें बचाओ ! इन्हें बचाओ !
कल को निकलने वाले अंकुर तुम्हें गालियाँ देंगे। \ कहेंगे
कितने नपुंसक और पागल थे वे लोग
जिन्होंने हमारी सृष्टि नष्ट कर दी

हमारे साहित्यकार हमें यह बात समझाना चाहते हैं कि पर्यावरण संरक्षण व्यक्ति का प्राकृतिक, सामाजिक दायित्व है। साहित्य वह सशक्त विधा है जो जनसाधारण के मन मस्तिष्क को बड़े ही सहज भाव से छू लेती है। यदि लोग साहित्यकार की रचनाओं में उद्धृत पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन की भावनाओं को अपने जीवन में उतार लें तो पर्यावरण संरक्षण के प्रयास सहज एवं प्रभावी हो जाएंगे। पर्यावरण और जीवन के मध्य साहित्य एक सशक्त सम्यक तथा सौहार्दपूर्ण कड़ी है। अपने विभिन्न रूपों एवं विधाओं के माध्यम से वह जनमानस को पर्यावरणीय संस्कारों से ओत-प्रोत करता है।

- पर्यावरण और जीवन के मध्य साहित्य एक सशक्त सम्यक तथा सौहार्दपूर्ण कड़ी है।

आदिकालीन हिंदी साहित्य से लेकर आधुनिक व अद्यतन साहित्य तक प्रकृति के प्रति एक प्रेम आदर, आस्था, संरक्षण, चेतावनी के विभिन्न भाव उपस्थित हैं। कबीर, तुलसी, पंत, निराला, दिनकर, अज्ञेय से लेकर समकालीन कवियों ने जो प्राकृतिक चित्रण किया है उसमें एक कल्याण की भावना निहित है। प्रकृति लोक शिक्षिका के रूप में जीवन की वास्तविकता भयावहता व सुंदरता का संकेत देती हैं। विश्व की मंगल कामना करने वाले हिंदी साहित्यकार पर्यावरण संतुलन के दूरगामी प्रभाव के प्रति सोचने को बाध्य कर, असुरक्षित भविष्य से बचाव के लिए पर्यावरणीय संरक्षण की अलख जगाने का संदेश दे रहे हैं। अगर साहित्य द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलकर हम सब प्रकृति को संरक्षण प्रदान करें तो निकट भविष्य में भारतीय संस्कृति की-सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतुनिरामयाञ्सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत।। की महान कल्याणकारी भावना सत्य चरितार्थ होगी।

3.1.8 पारिस्थितिक विमर्श साहित्य में बनाम व्यवहार में

- प्रकृति से बैर लेकर मनुष्य कुछ नहीं गढ़ सकता।

प्रकृति से बैर लेकर मनुष्य कुछ नहीं गढ़ सकता। यह धरती पादपों, कीट-पतंगों, पशु-पक्षियों और मनुष्यों की साझी है, किसी का एकाधिकार नहीं है। विकास कैसा हो इसके लिए यह उदाहरण काफ़ी होगा-एक समय चीन के चेयरमेन रहे माओ ने फ़सल बचाने के नाम पर देश की साली गौरैया मरवा दीं। परिणाम फ़सल में बढ़ोत्तरी नहीं था बल्कि सालों तक भुखमरी से जूझता हुआ चीन और करोड़ों लोगों को मौत की नींद में सुला देने वाला अकाल था। गौरैया की समाप्त होने के दो साल के भीतर चीन अकाल और भुखमरी की कगार पर खड़ा हो गया। यह ठीक है कि गौरैया फ़सल से अपना हिस्सा लेती थी लेकिन बदले में वह उन कीड़े-मकोड़े को भी तो खा जाती थी जो नुकसानदेह थे। नतीजा यह हुआ कि चीन में पैदावार तेजी से घटने लगी और जब तक तानाशाह को यह समझाया जाता कि गौरैया बेकसूर थी, वह अपने इस निर्णय से ढाई करोड़ लोगों की जान ले चुका था।

- पर्यावरण एक विज्ञान है उसके साथ क्रांति मत करो

क्या इस सत्य कथा से भारत को कोई शिक्षा मिलती है? यह कहानी तो हमारे पर्यावरण पाठ्य पुस्तकों का हिस्सा होनी चाहिए। पहाड़े की तरह दोहरा-दोहरा कर बताया जाना चाहिए कि पर्यावरण एक विज्ञान है उसके साथ क्रांति मत करो अन्यथा प्रकृति किसी न किसी रूप में बदला लेकर अपने अनुरूप समस्थिति पैदा कर ही लेती है। वस्तुतः हम सीखते, नहीं नकल करते हैं और यही प्रवृत्ति हमारी शिक्षा व्यवस्था को आयातित बना रही है। हमारी शिक्षा प्रणाली की बहुत बड़ी ख़ामी यही है कि हम प्रयोग नहीं करते बल्कि पुराने संदर्भों को ही दोहराते रहते हैं। हम व्यावहारिक नहीं है फिर भी हमारी प्रगतिशीलता हमें बुद्धिजीवी होने का दंभ दे रही है। हम रट्टू तोता बन चुके हैं। हमें वर्तमान की नब्ज़ पकड़ना भी नहीं आता। होना तो यही चाहिए कि जो कुछ हम पढ़ते हैं उसे व्यवहार में लाना होगा। पारिस्थितिक विमर्श अगर हम पढ़ रहे हैं तो उसे व्यवहार में उतारना होगा, उसे अमल करना होगा। केवल तब जाकर पारिस्थितिक विमर्श का हमारा पठन, चिंतन, मनन सफल होगा।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

औद्योगिक क्रांति के बाद मानव ने प्रकृति का जो अत्यधिक दोहन किया है, उसका प्रभाव पूरे पर्यावरण पर पड़ा है। पृथ्वी, जल, वायु और जीव-जंतु सभी प्रभावित हो चुके हैं। यह सब इंसान की करनी है। औद्योगिकीकरण और विज्ञान के विकास के कारण प्राकृतिक संसाधन नष्ट हो गए हैं। मनुष्य को अब यह समझ में आ रहा है कि उसने जितना प्रकृति का नुकसान किया है, उससे कहीं ज्यादा नुकसान प्रकृति हम इंसानों को दे सकती है, अगर वह अपने प्रचंड रूप में आ जाए। इस विचार ने अब इंसान को चिंतित कर दिया है, लेकिन फिर भी वह लालच के कारण अपनी गलत आदतों से बाज नहीं आ रहा है। ऐसे समय में जो लोग समाज और पर्यावरण के प्रति जागरूक होते हैं, वे चुप नहीं रह सकते। साहित्यकार भी उन पक्षियों की तरह होते हैं, जो जंगल में आग लगने पर शोर मचाते हैं, क्योंकि उन्हें डर होता है कि यह आग पूरे जंगल को नष्ट कर सकती है। कवि और लेखक समाज की समस्याओं और संकटों को देखकर अपनी कलम से जागरूकता फैलाने का प्रयास करते हैं।

आजकल के पर्यावरण संकट पर कई साहित्यकारों ने अपनी आवाज़ उठाई है। उनका उद्देश्य जनमानस में पर्यावरणीय चेतना को जागृत करना है। चाहे वह उपन्यास हो, कहानी हो या कविता, सभी विधाओं में पर्यावरण के प्रति जागरूकता फैलाने वाले लेखक सामने आए हैं। इस पुस्तक के आगे के हिस्सों में पर्यावरणीय मुद्दों पर आधारित उपन्यास, कहानियाँ और कविताएँ शामिल की गई हैं, जिनका हम अध्ययन करेंगे।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन के उद्भव एवं विकास पर प्रकाश डालिए।
2. पर्यावरण नैतिकता का बोध विषय पर एक टिप्पणी लिखिए।
3. साहित्य की विभिन्न विधाओं में पारिस्थितिक विमर्श विषय पर एक निबंध लिखिए।
4. हिंदी साहित्य में पर्यावरण के विभिन्न पहलू' विषय पर एक लघु लेख लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा

5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण - डॉ. सुमन सिंह।
9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र - मेघा सिन्हा।
10. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस. डॉ. एस आर जयश्री।

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 2

वीरेंद्र जैन और उनका उपन्यास 'डूब'

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- वीरेंद्र जैन के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचय प्राप्त करता है
- जल, जंगल और ज़मीन से जुड़ी संवेदनाओं से परिचित होता है
- पर्यावरण नैतिकता का बोध होता है
- 'डूब' उपन्यास के कथ्य और शिल्प से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

आज हिंदी उपन्यास यथार्थ की ज़मीन पर खड़ा है मानव जीवन की जटिलता को उसके यथार्थ रूप में संप्रेषित करने के लिए उपन्यास एक सशक्त और जनप्रिय विधा के रूप में हमारे सम्मुख प्रतिष्ठित हुआ है। जीवन को उसके सही रूप और परिप्रेक्ष्य में समझ कर इसे समझाने का कार्य उपन्यासकार कर रहे हैं। आज की ज्वलंत समस्याओं को उजागर कर उससे उभरने के उपायों को इंगित करना वे अपना कर्तव्य समझते हैं। आज विश्व भर में ग्लोबल वार्मिंग और पर्यावरण प्रदूषण को लेकर सभी परेशान दिखलाई पड़ते हैं। दिन-ब-दिन साफ़ पानी मिलना बड़ा ही मुश्किल होता जा रहा है,वायु मलिन होती जा रही है, भूमि कराह रही है,कुओं का गला सुख गया है,नदियों में कीचड भर गया है,शांति कहीं भंग हो गयी है,चारों तरफ़ शोर शराबा है, जंगल कटते ही जा रहे हैं,पहाड़ गायब होते जा रहे हैं। कुल मिलाकर कर कहें तो हमारा पर्यावरण पूरी तरह दूषित हो चुका है।

पर्यावरण प्रदूषण की इसी वैश्विक समस्या को केंद्र रखकर अनेकानेक उपन्यासों की रचना हुई। दूषित होती प्राकृतिक सम्पदा के प्रति चिंता और इसके निवारण के प्रयास इन उपन्यासों में दृष्टिगोचर होते हैं। विकास के नाम पर विनाश और विस्थापन पर आधारित है वीरेंद्र जैन का उपन्यास 'डूब'। प्रस्तुत इकाई में 'डूब' उपन्यास की मूल संवेदना पर चर्चा हुई है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

किसान जीवन की त्रासदी,राजनैतिक हथकंडे, लडैइ गाँव, विस्थापन,राजनीतिक चेतना

Discussion / चर्चा

वीरेंद्र जैन का व्यक्तित्व और कृतित्व-

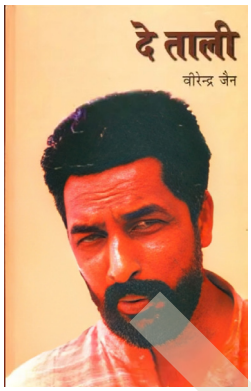

हिन्दी के जाने माने साहित्यकार हैं वीरेंद्र जैन

उपन्यास

- सुरेखा पर्व (1978)
- अनातीत (1983)
- प्रतीक : एक जीवनी (1983)
- शब्द-बध (1987)
- सबसे बड़ा सिपहिया (1988)
- डूब (1991)
- शुभस्य शीध्रम(1992)
- पार (1994)
- पंचनामा (1996)
- दे ताली (2003)
- गैल और गन (2004)

लघु उपन्यास

- उनके हिस्से का विश्वास(3 लघु उपन्यास,1988)
- स्का हुआ फैसला(2 लघु उपन्यास, 1989)
- तलाश(1992)
- प्रतिदान(3 लघु उपन्यास, 1994)
- पहला सप्तक(7 लघु उपन्यास)

कहानी संग्रह

- बायीं हथेली का दर्द(1989)
- मैं वही हूँ(1990)
- बीच के बारह बरस

व्यंग्य संग्रह

- रावण की राख(1982)
- किस्सा मौसमी प्रेम का(1988)
- पटकथा की कथा(1992)
- बहस बीच में(2006)
- रचना की मार्केटिंग

चित्रकथा

- पितृभक्त कुणाल(1984)
- तिगड़मबाज और साधूदुखभंजन(1985)

बाल कथाऐं

- तुम भी हँसो(1987)
- बात में बात में बात(1989)
- मनोरंजक खेल कथाऐं(1991)
- खेल प्रेमी मामाश्री(1991)

पुरस्कार और सम्मान

- वर्ष 1987 में प्रकाशित मध्य प्रदेश के लेखकों के उपन्यासों में सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'शब्द बद्ध' के लिए मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से वागीश्वरी पुरस्कार(1988)
- वर्ष 1988 में प्रकाशित उपन्यासों में श्रेष्ठ उपन्यास 'सबसे बड़ा सिपहिया' के लिए हिन्दी अकादमी, दिल्ली की ओर से साहित्यिक कृति पुरस्कार(1990)
- वर्ष 89-90 में लिखी चालीस वर्ष तक की आयु के उपन्यासकारों की पांडुलिपियों में से सर्वश्री राजेन्द्र यादव, डॉ निर्मला जैन और डॉ विश्वनाथ त्रिपाठी द्वारा सर्वश्रेष्ठ घोषित 'डूब' के लिए वाणी प्रकाशन की ओर से प्रेमचन्द महेश सम्मान(1991)। -
- वर्ष 1989 में प्रकाशित दिल्ली के लेखकों के बाल साहित्य में श्रेष्ठ 'बात' में बात में बात के लिए हिन्दी अकादमी, दिल्ली की ओर से बाल साहित्य पुरस्कार (1992)।

- वर्ष 1989, 90, 91 में प्रकाशित हिन्दी उपन्यासों में से सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'डूब' के लिए मध्य प्रदेश साहित्य परिशद् की ओर से अखिल भारतीय वीरसिंह देव पुरस्कार (1993)।
- वर्ष 1994 में प्रकाशित कथा साहित्य में सर्वश्री नामवर सिंह, कृष्णा सोबती, विष्णु खरे, मनोहर श्याम जोशी और विश्वनाथ प्रसाद तिवारी द्वारा सर्वश्रेष्ठ घोषित उपन्यास 'पार' के लिए-श्रीकांत वर्मा स्मृति पुरस्कार(1995)।
- वर्ष 1993 में प्रकाशित दिल्ली के लेखकों के बाल साहित्य में श्रेष्ठ 'तीन चित्रकथाऐं' के लिए हिन्दी अकादमी, दिल्ली की ओर से बाल साहित्य पुरस्कार (1996)।
- उपन्यास के क्षेत्र में निरन्तर, रचनात्मक और सक्रिय योगदान के लिए अखिल भारतीय नेताजी सुभाषचंद्र बोस स्मृति सम्मान (1989)।
- मध्य प्रदेश के लेखकों की वर्ष 94 से 96 के बीच प्रकाशित कृतियों में सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'पंचनामा' के लिए पहला 'निर्मल पुरस्कार'(1997)।

1. 'डूब'-कथ्यपरक अवलोकन

'डूब' एक भारतीय गाँव का समाधि लेख है। वीरेन्द्र जैन किस प्रकार समकालीन भारतीय यथार्थ को सहजता, सूक्ष्मता एवं समग्रता में देख पातें हैं, इसका एक सुखद साक्ष्य है 'डूब'। 'डूब' की कथा स्वाधीन भारत की सुपरिचित कथाओं की एक झलक है। उपन्यासकार ने उस पहाड़ी अंचल को अपने विजन का आधार बनाया है जो स्वतंत्र भारत की विद्युत परियोजनाओं के तहत 'डूब' क्षेत्र के अन्तर्गत आ जाता है। 'डूब' मध्यप्रदेश के एक पिछड़े अंचल की पीड़ा को शक्त रूप में प्रस्तुत करने वाला उपन्यास है। आख्यान का केंद्रीय लडैई गाँव। बेतवा नदी पर बन रही राजघाट बाँध परियोजना का क्षेत्र उत्तर प्रदेश से मध्य प्रदेश तक फैला है। झाँसी, ललितपुर, गुना आदि जिले इसके प्रभाव क्षेत्र हैं। प्रसिद्ध प्रचीन उद्योग नगरी चंदेरी के पास है 'डूब' आख्यान का केन्द्रीय गाँव लडैई। बेतवा के किनारे बसा, तीन तरफ़ पहाडियों से घिरा और शेष समाज से कटा लडैई गाँव। लडैई गाँव के छोटे से इतिहास के साथ हैं वहाँ के विभिन्न वर्ग और परिवार-साहूकार और पुजारी, किसान और ठाकुर। झाँसी की रानी की पराजित सेना के सिपाहियों द्वारा बसाए गए गाँव लडैई के इर्द-गिर्द घूमती है कथा। गाँव ही नायक है।

■ 'डूब' मध्यप्रदेश के एक पिछड़े अंचल की पीड़ा को शक्त रूप में प्रस्तुत करने वाला उपन्यास है

'डूब' आख्यान के चार केन्द्रीय चरित्र हैं-किसान सुकिया अमृत सिंह यानी माते, तेजस्विनी पवित्र एवं सनदरी चमेली उर्फ गोराबाई, डाक्टर अट्ठ साव और रामदुलारे। परम्परागत रूप से बसे गाँव में जब भूकंप के बाद पहाड़ की जगह बदली तब पानी की किल्लत हुई। इससे तराई में बसने का सामूहिक विचार हुआ। भूमि पूजन और हवन हुआ। परिवेश के प्रति आदर सम्मान के भाव के साथ प्रार्थना पूर्वक गुरीला गाँव बसाया गया। कण-कण में एक पवित्र सत्ता के वास की स्मृति से सम्पन्न समाज गाँव कैसे बसाता है, इसका संक्षेप में वर्णन है उपन्यास में।

■ 'डूब' आख्यान के चार केन्द्रीय चरित्र हैं

औपनिवशिक सत्ता का हस्तांतरण गाँव वालों के रवैए को एकदम बदल देता है। तभी हुआ राजघाट बाँध परियोजना का ऐलान। नेहरूजी ने बिजली,, उद्योग, विकास की महिमा बखानी। इलाके में नई आशा का उदय हुआ। लेकिन लडैई वालों को क्या मिला? उन्हें कहा गया कि तुम्हारा गाँव तो डूब क्षेत्र में आ गया है। आने ही वाला है। अतः तुम्हारे यहाँ स्कूल बंद। गाँव खाली कराया जाने वाला है। गाँव उजड़ेगा वहाँ बाँध पर काम करने वाले इंजीनियर, ओवरसियर, और मज़दूर बसेंगे। अस्सी करोड़ खर्च होंगे तब जाकर उत्तर प्रदेश- मध्य प्रदेश को बिजली मिलेगी।

- औपनिवशिक सत्ता का हस्तांतरण गाँव वालों के रवैए को एकदम बदल देता है

बरस-दर-बरस बीतते गए। न गाँव के लिए कोई विकास कार्य की सुविधा, न उन्हें शीघ्र विस्थापित कर कहीं बसाया जाता है। सैकड़ों गाँवों की जिन्दगी स्थगित हो जाती है। अनिश्चितता में जीने के लिए मज़बूर गाँव वाले। ठहरी हुई जिंदगी में बढ़ती हुई सड़न। लूट, फरेब, मक्कारी, जालसाजी। मुआवजा मिलने की धीमी प्रक्रिया।

एक सरकार है जो बेतवा पर बाँध बनाना चाहती है। एक गाँव है जो बाँध नहीं चाहता। गाँव में एक आदमी बाँध नहीं चाहता। शुरु से आखिर तक वह अपने सत्य की सत्ता से टकराता चलता है। यह वीरेन्द्र जैन का 'माते' है। आदमी से दोगुनी जिन्दगी जीने वाला। गाँव वालों में मातबर और अनिवार्य सा आदमी। 'माते' एक विकास विरोधी चरित्र है और यह जमाना विकासवाद और प्रगतिशील विकास की कामना है। 'माते' इस विकास पर थूकता चलता है। माते उम्रदराज और केन्द्रीय सूत्र है। ऐसे विकास विरोधी चरित्र और एक आधुनिकतावादी विकासवादी यूग में। प्रगति के एक रास्ते को एकमात्र रास्ता मानने वाले हमारे दिमाग में माते अचानक 'रूढ़िवादी' प्रतिक्रियावादी पात्र बन जाता है।

- 'माते' एक विकास विरोधी चरित्र है, जो किसी हद तक स्वयं वीरेन्द्र जैन हैं,

'डूब' के केन्द्रीय पात्र 'माते' पर सुधीश पचौरी लिखते हैं-'माते' वीरेन्द्र जैन का एक विचित्र सा चरित्र है, यह एक टेढ़त सा, बाँका सा चरित्र लगा। पढ़नेवाले के लिए भी रूठा हुआ। मुझे लगता है माते किसी हद तक स्वयं वीरेन्द्र जैन हैं, जो दिल्ली में भी 'सभ्य' नहीं हुआ है, और माते की तरह क्षुब्ध रहता है।'

बेतवा, राजघाट और बुंदेलखंड के आसपास जो कुछ हो रहा है, वह एक देशव्यापी छल का हिस्सा है। इसलिए एक आंचलिक पृष्ठभूमि पर रचे जाने के बावजूद उपन्यास का परिदृश्य देशव्यापी है, इनकी चिंताएँ समूचे भारत की चिंताऐं हैं। 'डूब' के कैनवास को मोटे तौर पर तीन खानों में बाँटा जा सकता है। पहला काल 1947 से पहले शुरु होता है। इसके बाद प्रथम प्रधान मंत्री और उनके योजना के सपनों में विभाजित किया जा सकता है। तभी तो चुनावों के दौरान लडैई को विकास व प्रगति के बड़े-बड़े सपने दिखाए जाते हैं। इंदिरा गाँधी के काल में उपन्यास के अन्तिम हिस्से को समेटा जा सकता है। तीसरे काल में पहुँचते-पहुँचते लडैई के सपने विखंडित दिखाई देते हैं। प्रथम योजना काल में दिखाए गए सपनों में उग आते हैं विस्थापन, गमन, घुटन, षड्यंत्र, आत्मपीड़न। जब लडैई इंदिरा काल में दाखिल होती है ऐसा लगता है लडैई जिस बिन्द

- उपन्यास का परिदृश्य देशव्यापी है, इनकी चिंताऐं समूचे भारत की चिंताएँ हैं

से चली थी, लौटकर वहीं पहुँच जाती है। छह-छह, सात-सात पंचवर्षीय योजनाऐं और आठ-आठ, नौ-नौ चुनाव उसके लिए अनजाने ही रहे। एक मायने में वह ज़रूर जागरूक होती है क्योंकि उसके विकास या बाँध के निर्माण के नाम पर लूट शुरु हो चुकी है। सूदखोरों के जाल का फैलाव हो चुका। कई लोग गाँव से पलायन कर चुके। माते जैसे लोग यह देखते-सुनने के लिए रह गये हैं लडैई गाँव में कि निर्माण राजघाट वाँध का तटबंध टूट गया है। जलप्लावन का खतरा पैदा हो जाता है। आसपास के तमाम गाँवों को खाली करा दिया जाता है। और यह सब घटना है 15 अगस्त के रोज़। माते का आक्रोश अपनी सीमा का उल्लंघन कर जाता है।

'डूब' इतिहास और समाज के बदलावों को 'देखना' नहीं है बल्कि एक सौ पाँच साल के माते के माध्यम से इतिहास के साथ मुठभेड़ है-समय की नदी पर बना ऐसा बाँध है, जहाँ पानी रुक गया है और बाँध की दीवारों में दरारें बन गई हैं। 'माते' एक व्यक्ति या परिवार नहीं है, बुन्देलखण्ड का एक बनता और बिगड़ता हुआ गाँव है, जिसे औद्योगिक विकास के चपेट में डूब जाना है। माते 'डूब' उपन्यास का ऐसा केन्द्रीय पात्र है जिसे भुलाया नहें जा सकता। आगे पीछे दूर तक देखता माते-एक छायादार वृक्ष की तरह हरेक दुःखी प्रताडित को अपनी शरण में लेता भारतीय किसान। स्वार्थी महत्वाकांक्षाओं और शोषण चक्र की क्रूरताओं के बीच माते मानवीय गरिमा के अद्भुत स्मरणीय चरित्र है। 'माते' 'डूब' का मुख्य पात्र है जो 'दो-दो जीवन की उम्र स्वाहा करनेवाले गाँव के भीष्म पितामह की तरह हैं।

संक्षेप में कह सकते हैं कि 'डूब' का कथानक नीचे से ऊपर की ओर नहीं चलता। वह आरम्भ से अन्त की और विकासात्मक ढंग से नहीं दौड़ता। वह जहाँ का तहाँ रहता है। ठहरे पानी की तरह। यह कोलाज जैसा है। यह कथा शुरु से आखिर तक एक लहराते गुस्से का फल है। विकास के प्रति। एक ऐसा विकास जो गाँवों को उजाड़ देता है। 'विकास' की इस अवधारणा को 'डूब' के आगमन से झटका लगा। इन नए विचार में 'मनुष्य' की जगह धीरे-दीरे 'धरती' को दी जाने लगी है। धरती बचेगी तो हम भी बचेगे। यही उत्तर-आधुनिकतावादी पर्यावरण विमर्श का आधारभूत सिद्धांत है। 'डूब' बड़े साहस और बेबाकी से भारतीय समाज के वर्तमान की कथा कहता है।

■ धरती बचेगी तो हम भी बचेंगे।

'डूब' का अंत एक अधूरेपन के साथ होता है जहाँ माते विचलित हैं, अनिश्चय की स्थिति में हैं, स्वयं को ठगा हुआ महसूस करते हैं। इससे 'डूब' के आशाजनक सांकेतिक अंत की कलात्मकता नष्ट हो जाती है और एक निराशाजनक सपाट अंत पाठक को निराश करने वाला सिद्ध होता है।

2. विस्थापन की समस्या

वीरेन्द्र जैन के 'डूब' को विस्थापितों की महागाथा कहा जाए तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं। इस उपन्यासों के पात्रों का दुखः दर्द और संवेदना इस तरह से उभरकर सामने आई है कि वह मात्र उनकी संवेदना न रहकर उन समस्त भुक्त भोगियों

की संवेदना बन जाती है, जो कहीं भी आधुनिक प्रगति के सोपान कहे जाने वाले बड़े बाँधों या कारखानों के कारण कहीं विस्थापित हो रहे हैं। ऐसे विस्थापितों का तो यह उपन्यास महाकाव्य बनकर ही उभरा है। इस तरह यह उपन्यास विकास की पश्चिमी और भारतीय विचारधारा का स्पष्ट अंतर भी सामने लाता है। राजेन्द्र यादव का वक्तव्य यहाँ उल्लेखनीय है- 'डूब' मेरे लिए विकास और विस्थापन की समस्या पर गहराई से विचार करने का एक बेहद डिस्टर्बिंग प्रस्थान बिंदु है।' 'डूब' स्वातंत्र्योत्तर भारत के ग्राम्यांचल की संघर्ष-गाथा है। इसमें सामन्ती उत्पादन-सम्बन्धों की जड़ता और स्वातन्त्र्योत्तर विकास की विकलांगता एक साथ उपस्थित है। यह उपन्यास विकास के उस मॉडल पर प्रश्नचिह्न लगाता है, जो विकास के नाम पर विनाश को आमन्त्रण देता है, विस्थापन को आमन्त्रण देता है।

- 'डूब' स्वातंत्र्योत्तर भारत के ग्राम्यांचल की संघर्ष-गाथा है

'डूब' की पृष्ठभूमि बुंदेलखंड अंचल का ग्राम्य समाज है। दिल्ली और भोपाल में बैठे हुए योजनाकारों की मेज पर और उनके दिमाग में जो नक्शा पसरा हुआ है उसमें सिर्फ बेतवा नही है, बुंदेलखंड स्थित राजघाट है और उससे अधिकतम संभव लाभ 'सोख' लेने का प्रपंच है। इस नदी, घाट और अंचल के आसपास रहने वाले लोगों, उनके समाजों, उनकी परम्पराओं, प्राथमिकताओं ज़रूरतों की जगह इस नक्शे में नहीं है। योजनाकारों ने वर्षों पहले इस राजघाट पर बाँध बनाने की एक महत्त्वाकांक्षी योजना बनाई। उसके बाद साल पर साल बीतते चले गए, विभिन्न चरणों में योजना बदलती रही और ऊपर से नीचे तक दलालों और साहूकारों की फौज बड़ी होती चली गई। हाँ, इस इलाके के आम आदमी को कुछ हासिल हुआ तो बस बदहाली और विस्थापन का एक न खत्म होने वाला सिलसिला। 'डूब' इसी बदहाली और विस्थापन की व्यथा कथा हैं विस्थापित समाजों को भटकाव की जो अंतहीन नियति झेलनी होती है, उसे लडैई के माते जानते हैं। विस्थापन की तलवार लटकी हुई है ज्यों की त्यों पर विकास अब भी नहीं होगा- मुआवजे के इंतजार में कई वर्ष और बैठना पड़ेगा।

- 'डूब' बदहाली और विस्थापन की व्यथा कथा हैं

3. विकास के नाम पर विनाश :

वीरेन्द्र जैन का उपन्यास 'डूब' 1991 में प्रकाशित हुआ। इससे पहले उनके सबसे 'बड़ा सिपहिया, 'शब्दबद्ध', 'प्रतीकः एक जीवनी', 'अनातीत और सुरेखा' जैसे उपन्यास प्रकाशित हो चुके थे। लेकिन उपन्यासकार के रूप में उनकी खास पहचान डूब से बनी। यह उपन्यास वर्तमान विकास मॉडल पर सवाल उठाता है, जिसमें कमजोर, पिछड़े और दलित लोगों को विस्थापित कर बड़े-बड़े बाँधों से बिजली बनाई जाती है, जो केवल अमीरों को फायदा पहुंचाती है। इसमें विकास और प्रगति के बीच के अंतर को उजागर किया गया है। उपन्यास यह सवाल उठाता है—विकास की कीमत हमेशा गरीब ही क्यों चुकाएं?

- विकास और प्रगति के बीच के अंतर को उजागर किया गया है

उत्तर-आधुनिकता के दौर में कई उपन्यास ऐसे लिखे गए जो समाज के व्यापक मुद्दों को पूरी तरह नहीं छू सके, जो उपन्यास विधा से अपेक्षित था। अधिकांश हिन्दी

उपन्यास शहरी और कस्बाई जीवन तक सीमित रहे, और बहुत कम लेखक ग्रामीण जनजीवन से जुड़ सके। ऐसे समय में वीरेन्द्र जैन का उपन्यास 'डूब' (1991) विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह उपन्यास स्वातन्त्र्योत्तर भारत के ग्रामीण जीवन की संघर्ष गाथा है, जिसमें सामंती व्यवस्था की जड़ता और स्वतंत्रता के बाद के विकास की खामियों को उजागर किया गया है। स्वतंत्रता संग्राम से लेकर इंदिरा गाँधी के आपातकाल तक की पृष्ठभूमि में यह उपन्यास सूदखोरी, कर्ज, धार्मिक शोषण, वर्ण व्यवस्था, बेदखली, मुआवजा, और चुनावी राजनीति जैसे मुद्दों पर आधारित समाज की तस्वीर पेश करता है, जहां ठहराव की जकड़न और बदलाव की पीड़ा दोनों दिखाई देती हैं।

- 'डूब' स्वातंत्र्योत्तर भारत के ग्रामीण जीवन की संघर्ष गाथा है,

'डूब' उपन्यास विकास के उस मॉडल पर प्रश्नचिह्न लगाता है, जो विकास के नाम पर विनाश को निमंत्रण देता है। वृहत्तर भारतीय यथार्थ को समेटे यह उपन्यास आरम्भ से अन्त तक एक व्यापक राष्ट्रीय रूपक की रचना करता है। विकास, विस्थापन और भूमि के बेदखली के प्रश्नों का विस्तार 'डूब' में है। 'डूब' पर विचार व्यक्त करते हुए प्रमुख समीक्षक सुधीश पचौरी जी लिखते हैं-'भारतीय गाँव कितने भूमि-पूजक हैं, यह उपन्यास इस सूचना का अध्ययन बन जाता है और यही इसकी ताकत है। लेखक प्रायः विवरण और व्याख्या में कथावाचक की तरह घूमता है और पृष्ठ दर पृष्ठ चरित्रों की वाणी को अपनी बना कर, अपनी को चरित्रों की बना कर, प्रचलित यथार्थवादी ढाँचे को बराबर तोड़ता-फोड़ता रहता है।'

'डूब' उपन्यास में हम बार-बार एक भूख, असंवेदनशील और मनुष्य द्रोही प्रशासन की ऊपर से थोपी गई विकास नीती की विनाश लीला देखते हैं और देखते हैं ग्रामीण जनों का उस अनीति के प्रति एक ठंडा प्रतिरोध। बड़े बाँध, बड़े नगर, बड़े बाजार, बड़ी सरकार, बड़ी सड़कें सब मिलकर आधुनिक हो उठने का पूरा इन्तजार था इस विकास में। किसी ने प्रश्न नहीं उठाया कि इस प्रक्रिया में उजडने की प्रक्रिया से उत्पन्न दुःख कैसे होंगे। उपन्यास का नाम और उसके परिच्छेद (पहली डुबकी, दूसरी डुबकी, तीसरी डुबकी) भी रचनागत अभिव्यंजना है।

- भूख, असंवेदनशील और मनुष्य द्रोही प्रशासन की ऊपर से थोपी गई विकास नीती की विनाश का चित्रण

4. आत्मालाप-प्रलाप शैली

आत्मालाप प्रलाप शैली 'वस्तु' के क्रमिक विस्तार को ठोस करने की जगह, उस पर की गई प्रतिक्रियाओं से हमें उसकी तस्वीर दिखाती है। यही आत्मालाप, कहीं संलाप, कहीं प्रलाप कहीं दौड़ होता है। 'डूब' के लगभग सभी पात्र इस आत्मालाप प्रलाप शैली द्वारा प्रतिक्रियाऐं व्यक्त करते जाते हैं। सभी पात्र बौराए हुए से अपने आपसे बतियाते रहते हैं। इनमें भी सर्वाधिक 'माते' बर्राते हैं। प्रलाप-संलाप का यही अर्थ है जैसे वह अपने-आप से बात करता हो। हर पात्र टिप्पणीकार सा बन जाता है।

- लगभग सभी पात्र आत्मालाप-प्रलाप शैली द्वारा प्रतिक्रियाऐं व्यक्त करते जाते हैं

'डूब' उपन्यास के समृद्ध यथार्थ संसार से गुजरते हुए एक असुविधा का सामना बार-बार करना पड़ा। इस उपन्यास के पात्र देर तक बोलते हैं, अर्थात आत्मालाप-प्रलाप करते हैं। कही बात को फेर-फेरकर बोलते हैं। कभी संवाद के रूप में, कभी सोच के

रूप में। इससे उपन्यास के बहाव में ठहराव सा आ गया है। किन्तु इससे उपन्यास के गठन में शिथिलता आई है और पठनीयता भी कुछ बाधित हुई है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

'डूब' में लडैई गाँव का वर्तमान एक अखबार की ख़बर के समान स्पष्ट होता है। यह वर्तमान आज़ादी के ठीक बाद सरपंची के चुनावों से शुरु होता है और 'डूब' की अन्तिम पंक्ति लिखी जाने के दिन तक जारी रहता है। इस वर्तमान में स्थितियों के अंबार हैं, तो सपनों के टूटने के बाद की पथराई चुप्पी भी है। इस अख़बार में एक लडैई गाँव का वर्तमान मात्र नहीं है, बल्कि आज़ादी के बाद का समूचा ग्रामीण भारत अपनी विपन्नता के साथ खड़ा है। उपन्यास वर्तमान विकास के मॉडल पर उँगली उठाता हैं जिसमें कमज़ोर, पिछडे, दलित लोगों को उजाड़ कर विशालकाय बाँधों से बिजली तैयार की जाती है जो अमीरों को और अमीर बनाने के काम में आती है 'डूब' की ख़ासियत यह है कि वह विकास की अब तक चली आ रही अवधारणा और उपलब्धियों पर ही प्रश्नचिह्न लगाता है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. 'पर्यावरण नैतिकता का बोध' विषय पर एक टिप्पणी लिखिए।
2. 'डूब' उपन्यास में पारिस्थितिक विमर्श विषय पर एक निबंध लिखिए।
3. वीरेंद्र जैन के व्यक्तित्व कृतित्व पर प्रकाश डालिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य - डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक

7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ. सुजाता बिष्ट।
2. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
3. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
4. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
5. कवि जो विकास है मनुष्य का - ए. अरविन्दाक्षन।
6. अरुण कमल : एक मूल्यांकन - डॉ. संध्या मेनन।
7. निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी जीवन - डॉ. संध्या मेनन।
8. भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण - डॉ. सुमन सिंह।
9. पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र - मेघा सिन्हा।
10. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ. सुमा एस, डॉ. एस आर जयश्री।

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 3

समकालीन हिन्दी उपन्यास और पारिस्थितिकीय संकट- रोहिणी अग्रवाल (लेख)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- हिंदी उपन्यासों में पारिस्थितिक विमर्श से परिचित होता है
- पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक बनाता है
- पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने वाले कार्यक्रमों से परिचय प्राप्त होता है
- पारिस्थितिक विमर्श से सम्बन्धित उपन्यासों को समझता है
- रोहिणी अग्रवाल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के बारे में जानता है

Background / पृष्ठभूमि

आर्थिक विकास की अंधी दौड़ और मानव के विलासिता पूर्ण जीवन ने प्राकृतिक संसाधनों की बहुत-बहुत ही नुकसान पहुँचाया है। जनसंख्या के अनुरूप मानव की आवश्यकताएँ बढ़ती गईं, बढ़ती गईं और इन आवश्यकताओं ने सुरसा की तरह मुँह फैलाना शुरू कर दिया। प्रकृति इसकी कीमत चुकाती रही। आज हमारी भूमि, हमारी प्रकृति, हमारी नदियाँ, हमारा आकाश सब के सब बीमार पड़ गए हैं। 'विकास' की फैक्ट्री से निकलने वाले धुएँ और कचरे से प्रकृति के घटकों का दम घुट रहा है। ऐसे में अपनी साहित्यिक कृतियों, लेखों के माध्यम से रचनाकारों ने वस्तुस्थिति को समझाने और सुधार के लिए जागरूकता फैलाने का प्रयास किया है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

विकास, आधुनिकीकरण और पर्यावरण, समकालीन उपन्यास, जल, वायु, स्वास्थ, कोयला खनन, परिवेश सरकारी प्रयास, ख़ुद की पहल

Discussion / चर्चा

रोहिणी अग्रवाल हिन्दी की चर्चित लेखिका और गज़ब की पाठक हैं। वे न केवल हिन्दी साहित्य, बल्कि भारतीय और विदेशी साहित्य में भी गहरी रुचि रखती हैं। कहानियाँ लिखते-लिखते उन्होंने आलोचना में कदम रखा और वहीं अपनी पहचान बनाई। उनके वर्षों के अध्ययन और अनुभव ने उनकी आलोचना में सृजनात्मकता और जीवंतता का अनोखा मिश्रण जोड़ा। लेकिन उनकी रचनात्मकता कभी ठहरी नहीं। आलोचक के रूप में सीमित होने के बजाय, उन्होंने संस्मरण और कविता की ओर रुख किया। वे स्त्री-विमर्श की सशक्त आवाज़ होने के साथ-साथ घुमक्कड़ स्वभाव और वक्तृता कला में भी माहिर हैं।

- स्त्री-विमर्श की सशक्त आवाज़

9 दिसम्बर 1959 को पंजाब में जन्मी रोहिणी अग्रवाल की कर्मस्थली है रोहतक, हरियाणा। हिन्दी-अंग्रेज़ी- पत्रकारिता में मास्टर्स डिग्री भी यहीं से ली, हिन्दी में पी. एच.डी. भी यहीं से की, और यहीं महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय में सैंतीस वर्ष तक अध्यापन करने के दौरान अपने को री-इन्वेंट करते हुए कविता-कहानी-आलोचना में रचा भी अपने कृतित्व के लिए पुरस्कृत- सम्मानित भी हुई। 1987 से 2019 तक चार बार हरियाणा साहित्य अकादमी से सम्मानित होने के अलावा स्पन्दन आलोचना सम्मान (2010), रेवान्त मुक्तिबोध सम्मान (2016), वनमाली कथा-आलोचना सम्मान (2017), चड़म्पुषा सांस्कृतिक सम्मान (2017), डॉ. शिव कुमार मिश्र स्मृति सम्मान (2017), डॉ. रामविलास शर्मा स्मृति सम्मान (2018) और नारी शक्ति सम्मान (2019) से विभूषित भी हो चुकी हैं।

- अनेक पुरस्कारों से सम्मानित

प्रकाशित कृतियाँ : आलोचना : हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिला (1992), एक नज़र कृष्णा सोबती पर (2000). इतिवृत्त की संरचना और संरूप (2005), समकालीन कथा साहित्य : सरहदें और सरोकार (2007), स्त्री लेखनः स्वप्न और संकल्प (2011), साहित्य की ज़मीन और स्त्री मन के उच्छ्वास (2014), हिन्दी कहानीः वक़्त की शिनाख्त और सृजन का राग (2015), हिन्दी उपन्यास का स्त्री पाठ (2015), साहित्य का स्त्री स्वर (2016), हिन्दी उपन्यासः समय से संवाद (2016), कथालोचना के प्रतिमान (2020), कहानी का स्त्री-समय (2023), उपन्यास में सदी का अक्स (2023), कहानी :घने बरगद तले (1987), आओ माँ, हम परी हो जायें (2012), कविता लिखती हूँ मन (2023)। सम्पादित पुस्तकें : मुक्तिबोध की प्रतिनिधि कहानियाँ (2013), उषा प्रियंवदा की प्रतिनिधि कहानियाँ (2018)।

- आलोचना साहित्य कहानी, उपन्यास आदि विधाओं में साहित्य सृजन

समकालीन हिंदी उपन्यास और पारिस्थितिकीय संकट और रोहिणी अग्रवाल

'प्रकृति पर मनुष्य की विजय को लेकर ज्यादा खुश होने की जरूरत नहीं, क्योंकि ऐसी हर जीत हमसे अपना बदला लेती है। पहली बार तो हमें वही परिणाम मिलता है जो हमने चाहा था, लेकिन दूसरी और तीसरी दफा इसके अप्रत्याशित प्रभाव दिखाई पड़ते हैं जो पहली बार के प्रत्याशित प्रभाव का प्रायः निषेध कर देते हैं। इस तरह हर

कदम पर हमें यह चेतावनी मिलती है कि हम प्रकृति पर शासन नहीं करते, जैसे कोई विजेता विदेशी लोगों पर शासन करता है। हम प्रकृति पर इस तरह शासन नहीं कर सकते जैसे हम उसके बाहर खड़े हों, क्योंकि मांस, रक्त और मस्तिष्क सहित प्रकृति से जुड़े हुए हैं और उसी के बीच हमारा अस्तित्व है। प्रकृति पर हमारी उस्तादी का मतलब सिर्फ इतना है कि दूसरे प्राणियों के मुकाबले प्रकृति को जानने और उसके नियमों को सही ढंग से लागू करने की सामर्थ्य हममें ज्यादा है। समय बीतने के साथ-साथ हमारा प्रकृति के इन नियमों के बारे में ज्ञान भी बढ़ता जाता है; और उसी के साथ प्रकृति के पारंपरिक स्वरूप में हस्तक्षेप करने के तात्कालिक और दूरगामी परिणामों के बारे में हमारी समझ भी बढ़ती जाती है। यह ज्ञान जितना आगे बढ़ेगा, उतना ही मनुष्य को प्रकृति के साथ अपनी अविभाज्यता का ज्ञान होगा। उसी के साथ मस्तिष्क और पदार्थ, मनुष्य और प्रकृति, चेतना और शरीर से संबंधित अंतर्विरोध की प्रकृतिविरोधी व्यर्थता का अहसास होगा।'

- हर कदम पर हमें यह चेतावनी मिलती है कि हम प्रकृति पर शासन नहीं करते

'डायलेक्टिक्स ऑफ नेचर' पुस्तक में विज्ञान और टेक्नोलॉजी के विकास के साथ प्रकृति से बड़े पैमाने पर छेड़खानी करने की पूँजीवादी प्रवृत्ति के दुष्परिणामों के प्रति चेताते हुए फ्रेडरिक एंगेल्स-'समयांतर, फरवरी 2012 से उद्धृत विज्ञान, प्रौद्योगिकी और सूचना तकनीक के जरिए मनुष्य जिस तेजी से लंबी और ऊँची छलाँग लगाते हुए लगातार दूरियाँ तय कर रहा है, और उसी अनुपात में प्रकृति के साथ अ-प्राकृतिक मुठभेड़ करते हुए जिन उपलब्धियों पर इतरा रहा है, वही वेश बदल कर विभीषिका और त्रासदी के रूप में कब उसके सामने आ जाएँ, वह नहीं जानता। लेकिन न जानने का 'भोलापन' भोक्ता होने की त्रासद अनिवार्यता को नहीं मिटा सकता क्योंकि बकौल मार्क्स 'प्रकृति कभी अकेले एक व्यक्ति का नहीं, बल्कि आर्थिक उत्पादन में मिल कर काम करने वाले मनुष्यों का सामना करती है। इसी तरह एक व्यक्ति भी प्रकृति का सामना नहीं करता, बल्कि समाज के द्वारा संगठित रूप में उसका सामना करता है।'

- "प्रकृति कभी अकेले एक व्यक्ति का नहीं, बल्कि आर्थिक उत्पादन में मिल कर काम करने वाले मनुष्यों का सामना करती है

इसलिए इसमें कोई दो राय नहीं कि प्रकृति तथा मनुष्य के बीच गहराता पारिस्थितिकीय संकट एक चिंतनीय मुद्दे के रूप में समूचे विश्व के सामने आ खड़ा हुआ है। ज्यादा कृषि भूमि पाने की ललक में वनों की अंधाधुंध कटाई, नदियों की गति और दिशा में मनमाना परिवर्तन, मिट्टी में क्रमशः विकसित होती अनुर्वरता और उसे अधिक उपजाऊ बनाने की हड़बड़ी में रासायनिक खादों का बेशुमार प्रयोग, औद्योगीकरण और शहरीकरण, खनिज उत्खनन के नाम पर प्रकृति का ज़रूरत से ज्यादा दोहन, पर्यावरण प्रदूषण, मौसम में परिवर्तन, समुद्र का अम्लीकरण, ओजोन परत का क्षय, जैव विविधता का क्रमिक ह्रास-मनुष्य के सभ्य होते चले जाने का बर्बर इतिहास है।

- प्रकृति मनुष्य की कार्यस्थली मात्र नहीं बल्कि जीवनीशक्ति भी है

पारिस्थितिकीय संकट को लेकर पिछले डेढ़ दशक में लिखे गए जिन चार महत्वपूर्ण उपन्यासों पर प्रस्तुत आलेख में विचार किया गया है, वे हैं-मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ (महुआ माजी, 2012), 'रह गईं दिशाएँ इसी पार' (संजीव, 2011), एक ब्रेक के बाद (अलका सरावगी, 2008) 'तथा कठगुलाब' (मृदुला गर्ग, 1996)।

1. 'अब इस इनसानी खोल से किस महामानवी खोल में, किस महाकाश में छलाँग लगाने और किस चाँद-सितारे को छू लेने का इरादा है मेरे दोस्त' (संजीव, रह गईं दिशाएँ इसी पार, पृ. 169) बनाम 'प्रकृति जीवों के बिना अमूर्त है। वह जगती है जीवों द्वारा और जीव जगते हैं चेतना से' (वही, पृ. 102)

रप 'रह गईं दिशाएँ इसी पार' संजीव का बहुत बड़े फलक का उपन्यास है। व्यक्ति के रूप में संजीव की अपनी प्रत्यक्ष चिंताएँ हैं और स्पष्ट धारणाएँ भी जिस कारण जीव-वैज्ञानिकों द्वारा क्लोनिंग और जेनेटिक्स के क्षेत्र में की जाने वाली अभूतपूर्व उपलब्धियों को वे मानवीय संबंधों के जटिल संसार में पनपने वाली विकृतियों की संज्ञा देते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों द्वारा जीवन और मृत्यु, काम और प्रजनन, पदार्थ और अध्यात्म की रहस्यमयी गुत्थियाँ सुलझा लेने की कोशिशें उन्हें शेखचिल्ली के हवाई किले अधिक जान पड़ते हैं क्योंकि गोपनीयता में ही प्रकृति और मनुष्य का आंतरिक सौंदर्य प्रगाढ़तर होकर खिलता है। संजीव गंभीर शोधार्थी हैं और घोर यथार्थवादी भी। वे सौंदर्यान्वेषी रोमांटिक कवि भी हैं और आदर्श की स्थापना के लिए मनुष्य और प्रकृति के बीच अंतःसूत्रों की तलाश और व्याख्या करने वाले दार्शनिक भी। चिंतन की इस पूरी प्रक्रिया के दौरान मानवीय विडंबनाओं और प्रतिकूलताओं से टकराते हुए वे अनास्था या नकारात्मकता के किसी भी बिंदु पर विघटित नहीं होते क्योंकि जीवन के प्रति आस्था और जिजीविषा उनके भीतर की सकारात्मकताओं को सतत जिलाए रखती है। लेकिन ऊपरी तौर पर वे बेहद व्यथित दीखते हैं और क्षुब्ध भी मानो दसों दिशाएँ सर्वहारा होकर मनुष्य को लील लेने को आतुर हैं। इसलिए उनकी प्रत्येक रचना का प्रस्थान बिंदु बनता है यही एक सवाल कि अपनी ही विकृतियों और दुर्बलताओं से निरंतर क्षरित होता मनुष्य क्या नष्ट होने के लिए अभिशप्त है? क्या मृत्यु ही उसकी जीवन-यात्रा का अंतिम पड़ाव है? जाहिर है इसीलिए 'रह गईं दिशाएँ इसी पार' में संजीव जिस पात्र-अतुल बिजारिया उर्फ जिम-को अपना प्रवक्ता बनाते हैं, वह कोई सामान्य व्यक्ति नहीं, टेस्ट ट्यूब बेबी है। अपने जन्म से जुड़े रहस्यों को पहले-पहल उसने किस रूप में लिया होगा, उपन्यास नहीं बताता, लेकिन अब एक बीस-वर्षीय युवक के तौर पर वह जिस उन्मादपूर्ण एकाग्रता के साथ वैज्ञानिक प्रयोगों में लगा हुआ है, और कृत्रिम गर्भाधान से जुड़ी तमाम खोजों को संपन्न करा कर प्रकृति के विरुद्ध वैज्ञानिक प्रयोगशाला में प्रजनन पर निरंकुश सत्ता स्थापित कर लेना चाहता है, वह उसे जिज्ञासु वैज्ञानिक/शोधार्थी की अपेक्षा मनोरोगी अधिक बनाता है। अनास्था, निःसंगता, अजनबीपन जिम की परिचालक शक्तियाँ हैं और विचित्रता उसका परिचय जो जिम के निजी म्यूजियम के प्रतीकार्थ में कथा में स्पष्टतर होता चलता है। दरअसल जिम का लक्ष्य है विश्वामित्र की तरह एक समानांतर प्रतिसंसार की रचना करना। इसलिए म्यूजियम उसकी कार्यस्थली है और उसके मस्तिष्क का अक्स भी। यहाँ सुकुमार राय द्वारा बनाए गए विचित्र चित्रों की मृण्ययी अनुकृतियाँ हैं जिनमें प्रमुख हैं-मछली की देह पर हाथी का मस्तक, मुर्गे का धड़ और बैल का मुंड, मच्छर पर चस्पाँ जिराफ की गर्दन। यहाँ भेड़ की क्लोनिंग-कन्या डॉली अपने पूरे संदर्भों के साथ विराजमान है तो

- 'रह गईं दिशाएँ इसी पार' संजीव का बहुत बड़े फलक का उपन्यास है।

1952 में प्रथम लिंग परिवर्तन करने वाले जार्ज जोगन्सन और उनका स्त्री रूपांतरण क्रिस्टी भी; संकर नस्लें और उभयलिंगी प्राणी हैं तो टीशू कल्चर से उपजाए गए फल भी। शिव-पार्वती का अर्धनारीश्वर रूप है तो मत्स्य कन्याएँ और परियाँ भी। और हैं कार्बन चेन्स, गुणसूत्रों की सीढ़ियाँ उतरते इनसान के आदिम पुरखे, बिग बैंग, ब्लैक होल्स, आकाशगंगाएँ, धूमकेतु, सूर्य से निकलती ज्वालामयी पृथ्वी और अन्य ग्रह। सृष्टि के विकास क्रम को जानने की अदम्य इच्छा से कहीं ज्यादा बड़ी है सृष्टि के विकासक्रम की धारा को मोड़ कर अपनी मुट्ठी में बाँधने की लालसा। इसलिए जिम एक बार नहीं, दो बार प्रकृति को चुनौती देता है। लारा के पिता का क्लोन बनाने के लिए लारा के गर्भाशय का उपयोग; और शहनवाज का लिंग परिवर्तन। इस बिंदु पर आकर संजीव के लिए लेखकीय तटस्थता बनाए रखना दुष्कर हो जाता है। वे तुरंत कथा में हस्तक्षेप करते हैं, कभी नैतिकवादियों की आर्त पुकार(क्षोभ और असहमति को व्यंग्य की तीखी धार बना कर संजीव जिस शब्दावली का प्रयोग करते हैं, वह देखते ही बनती है। पिता का क्लोन बनाने के लिए पिता के स्टेम सेल को अपने गर्भाशय में प्रत्यारोपित कर 'क्रांति' कर देने के अतींद्रिय उत्साह से भरी लारा के पास अपने कृत्य के जस्टीफिकेशन के लिए भावनात्मक तर्क हैं-'आप दुर्लभ नस्ल की प्रजातियों को बचाने के लिए खासा परेशान रहते हैं। अगर मैं अपने ईमानदार पिता की नस्ल को बचाना चाहती हूँ तो कौन सा गुनाह कर रही हूँ। मुझे न धर्म की परवाह है, न नैतिकता की। मुझे इस बात का गर्व है कि मैं... पिता जैसी दुर्लभ होती जा रही प्रजाति को बचाने का माध्यम बन रही हूँ।' (पृ. 138) असहमति में सिर हिलाते संजीव लारा से कहीं ज्यादा भावुक हैं। इसलिए उनके पास तर्क नहीं है यह सिद्ध करने कि सभ्यता का कुटिल दुष्चक्र शुरू से ही ईमानदार निष्ठाओं को कुचलता रहा है, लेकिन इसके बावजूद ईमानदार कर्तव्यपरायण मनुष्य प्रजाति लुप्त नहीं हुई है; कि सत् और असत् का द्वंद्वात्मक संबंध ही सृष्टि कर निरंतरता की कुंजी है। दूसरे, वे प्रति-तर्क भी नहीं करते कि पिता का क्लोन बना लेने से ही क्या गारंटी है वह 'लुप्तप्राय प्रजाति' पुनः व्यवस्था के दमन-चक्र का शिकार नहीं होगी? इसके विपरीत वे लारा के परिवार की हाय-हाय में अपना सुर मिला कर संबंधों और नैतिकता की दुहाई देने लगते हैं-'तुम्हारा यह कदम घोर अनैतिक और अधार्मिक है।' (पृ. 138) ; कि 'बाप रे! रिश्तों का क्या होगा? प्रलय आ जाएगा प्रलय!' (पृ. 128) करुणा और हताशा का नर्तन! शाहनवाज उर्फ शहनाज के संदर्भ में संजीव अपनी निःसंगता किंचित बचा पाए हैं लेकिन शायद इसलिए कि शहनाज को उन्होंने मूलतः त्रिशंकु के रूप में कन्सीव किया है। इसलिए लिंग परिवर्तन करा कर स्त्री बनने के बाद उसके 'विकास क्रम' को दर्शाने हेतु जिन घटनाओं का संयोजन किया गया है, वे उसे निजी तौर पर मीडिया की हाइप पर जीती स्टार सैक्स-वर्कर के रूप में रिड्यूस कर देती हैं और वैज्ञानिक उपलब्धियों के तौर पर 'एक नॉक आउट चूहा' भर बना देती हैं। उल्लेखनीय है कि इन दोनों प्रकरणों में विज्ञान ने मनुष्य की गरिमा का ही नहीं, उसके अस्तित्व का भी क्षरण किया है।) बन कर तो कभी क्लोनिंग की पूरी प्रक्रिया को उपहास का पात्र बना कर ('इन्फैक्ट क्लोनिंग कर

क्या रहा है-अलैंगिक प्रजनन...! मेरे जैसे बोका मनुष्य के बचे-खुचे आनंद को काहे के लिए छीन रहे हो?' संजीव, रह गईं दिशाएँ इसी पार, पृ. 129)।

संजीव सीधे-सीधे क्लोनिंग की व्यर्थता को लेकर डिबेट का आयोजन नहीं करते, बल्कि नवउदारवादी अर्थव्यवस्था के धन-कुबेरों की ययाति-ग्रंथि के बरक्स इसकी वैधता का परीक्षण करते हैं जिसे उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभावों और दबावों ने नए मूल्य के रूप में विकसित किया है। ययाति-ग्रंथि यानी अजरत्व की कामना! यानी काल के प्रवाह को थाम कर चिर युवा बने रहने की अभीप्सा! क्लोनिंग यदि इसका एकमात्र विकल्प है और तीसरी दुनिया की गरीबी के चलते ह्यूमन क्लोनिंग के प्रयोगों हेतु इनसानों को उपलब्ध कराना और ह्यूमन क्लोन को गर्भ में प्रत्यारोपित करना जरा भी कठिन कार्य नहीं तो क्या सिर्फ इसीलिए इसे सही ठहरा दिया जाए? नहीं, विशाल-जेनेटिक्स पर शोध कर रहे वैज्ञानिक-की भूमिका में उतर कर संजीव बेहद द्वंद्वग्रस्त हो उठे हैं। वैज्ञानिक शोध यदि आर्थिक संरक्षण देने वाले धन कुबेरों के निहित स्वार्थों की पूर्ति का जरिया बन गया तो? एक अहम सवाल! विशाल की भूमिका से उबर कर संजीव पुनः सर्जक बन जाते हैं और रचते हैं विस्नू बिजारिया की विकृत लालसाओं का संसार जहाँ अपने ही संसाधनों से चलाए जा रहे अनाथालय और स्कूल के सभी बच्चों को उसने 'अस्तित्व अनुसंधानशाला' के गिनी पिग में बदल डाला है। अपनी तिक्त असहमति दर्ज कर संजीव एक बार फिर वैज्ञानिक विशाल बन कर अपने जनून-जेनेटिक्स-में डूब जाना चाहते हैं, लेकिन असमय बुढ़ा गई रोग जर्जर डॉली (पहला क्लोन) प्रयोग की विफलता के दंश से ज्यादा एक अनुत्तरित सवाल बन कर सामने खड़ी हो गई है कि 'क्या हमने अपने प्रयोगों से क्लानों की उम्र को समय की तेजी से नहीं भर दिया है? ...हम अगर इसे न रोक पाए तो प्रयोगों की क्या सार्थकता रही?' (पृ. 119) तब जनून और यथार्थ बोध गलबहियाँ डाल कर ही सामने नहीं आते, बल्कि एकमेक होकर धुएँ में विलीन हो जाते हैं-व्यर्थता का तीखा कड़वा अहसास! जिंदगी मानो ऊबाऊ आवृत्तियों को दोहराते चले जाने की यांत्रिकता! न नए का रोमांच! न अज्ञात को एक्सप्लोर करने का आनंद! स्पष्टता और ज्ञान का अतिरेक क्या एक सीमा के बाद वीरानगियों और निरर्थकता की सृष्टि करने लगता है? या यह नग्न कर दी गई प्रकृति का अपनी शर्म ढाँपने के लिए किया गया प्रतिकार है? 'क्या होगा वह दिन जब हर इनसान डी.एन.ए. कार्ड लटका कर चला करेगा, परिचय-पत्र की तरह जो बताएगा कि वह किस रोग का संभावित शिकार है, उसका आई.क्यू. क्या है... वह फलाँ-फलाँ कार्य के लिए योग्य है और फलाँ-फलाँ कार्य के लिए अयोग्य।' (पृ0 81) और फिर डर कर अपने आप से ही सुझावनुमा सवाल-'क्यों न जींस के बदले डेस्टिनी पर ही सोचूँ?' द्वंद्व! और द्वंद्व! निर्जनता का निष्क्रिय पोषक नहीं, आत्मसाक्षात्कार और आत्मपरिष्कार की प्रक्रिया का प्रथम चरण!

'सत्य को धुँधला ही रहने देना चाहिए'-संजीव एक धर्मोपदेशक की तरह अपनी मान्यता उकेरते लगते हैं और पीटर (पीटर 'सिंथेटिक ह्यूमन' है। उसकी माँ ने वीर्य बैंक से वीर्य लेकर कृत्रिम गर्भाधान के सहारे उसे जन्म दिया है। दस वर्ष की अवस्था में माँ

की मृत्यु के साथ उसने संबंध ही नहीं खोया, जीवन के प्रति आस्था और अनुराग दोनों को खो दिया है। अब 'भटकते प्रेत' की तरह वह निरंतर अपने अनदेखे पिता को ढूँढ़ रहा है, एक मारक कसक और कचोटते सवाल के साथ कि 'उसने मुझे जन्म क्यों दिया? माना कि स्पर्म बैंक में स्पर्म देकर वह निवृत्त हो गया, जैसे पेशाब-पाखाना किया, फ्लश किया, निवृत्त हो गए।' (पृ. 163) लेकिन क्या प्रजनन एक बायलॉजिकल परिघट ना मात्र है? वह एक सामाजिक जिम्मेदारी, सांस्कृतिक मूल्य और मानवीय संबंधों का आदि-स्रोत नहीं जहाँ संतान के साथ-साथ पलती है आत्मीयता, विश्वास, सद्भाव और सौहार्द की धरोहर? प्रजनन से ज्यादा जरूरी और जिम्मेदारी भरा दायित्व क्या संतान का पालन-पोषण नहीं जो उसे एक संवेदनशील विवेकशील मनुष्य बना सके? विज्ञान यदि इस दायित्व का वहन नहीं कर सकता तो प्रकृति उसे अपना राजदार क्यों बनाए?) तथा घरघुसरा (घरघुसरा विज्ञान की उपलब्धि और पराजय का अद्भुत उदाहरण है। हर आहट से डर कर घर के कोने-अँतरे में छुप जाने वाले उस लंबे-चौड़े युवक की भय-ग्रंथि को जीतने के लिए डॉ. सिंह-हारमोन्स स्पेशलिस्ट-घरघुसरा पर प्रयोग करते हैं। सफल प्रयोग! भय से मुक्ति! लेकिन इतनी निर्भीकता कि गरजता-उफनता समुद्र भी घरघुसरा को डरा नहीं पाया। परिणामस्वरूप लहरों को रौंदने की कोशिश में वह स्वयं जान से हाथ धो बैठा। 'एक संपूर्ण इनसान होने के लिए आदमी में डर, शर्म, चोरी, झूठ, ईर्ष्या, लोभ, द्वेष जैसे विकारों और कुंठाओं का होना भी जरूरी है। माने सम्यक भय, सम्यक शर्म, सम्यक मिथ्या वगैरह वगैरह।' (पृ. 206) संजीव बलपूर्व क अपनी निष्पत्ति प्रस्तुत करते हैं कि जो प्राकृतिक है, उसका अ-प्राकृतिक दमन क्यों?) के उदाहरणों के जरिए प्रकृति के प्रतिरोध को दर्ज करते हैं। लेकिन उनका प्रवक्ता जिम सत्य को अनावृत्त करते चलने का हठ पाले हुए है। माँ की मृत्यु के बाद उसने निजी म्यूजियम में काँच के जार में सहेज कर रखा है माँ का गर्भाशय और फेलोपियन ट्यूब। इससे पहले काँच के ऐसे ही एक और जार में सहेज लिया है एबार्शन के बाद नवें महीने के पूर्ण विकसित भ्रूण का मांस पिंड, और उस पर चस्पाँ कर दिया है एक लेबल-बालभोग। क्या यह जिम के भीतर सुरसुराती पैशाचिक प्रवृत्ति है? पूर्ववर्ती उपन्यासों में अपने नायकों के प्रति एक रोमान भरा अनुराग महसूसने वाले संजीव यहाँ जिम के प्रति खासे निष्ठुर हैं। अलबत्ता कई-कई बार अजय के रूप में स्वयं को प्रतिस्थापित कर एक ऐसी बहस का आगाज करते हैं कि जिम अपनी तमाम विकृतियों के साथ पाठकीय वितृष्णा का शिकार बन सके। वे भरसक प्रयास करते हैं कि जिम की तथाकथित क्रांतिकारिता स्वेच्छाचारिता का रूप लेकर उभरे। मसलन विवाह संस्था को 'मुसीबत' और दंपति को 'बाड़े में बंद गाय और साँड' की संज्ञा देना; और रिश्तों-संवेदनाओं के परंपरागत ढाँचे और सोच से बाहर विकृत समझे जाने वाले रिश्तों-संवेदनाओं को सहानुभूतिपूर्वक देखने और उनका मानसिक अनुकूलन करने की जरूरत पर बल देना-'ये ब्राह्मा-सरस्वती, यम-यमी, ईडीपस-उसकी मदर-एक तरह से देखिए तो एन्क्रोचमेंट्स हैं, दूसरी तरह से देखिए तो साधारण मामला। बस, ऊपरी अर्थ-क्रस्ट की तरह थोड़ी सी संवेदनाओं की परत बिछा दी गई है, वही रिश्ते हैं, भावनाएँ हैं, बाकी नीचे तो वही आदिम अनुर्वर पत्थर है और

उसके नीचे पिघला हुआ लोहा।' (पृ. 221)

लेकिन जिम अपने स्रष्टा के हाथ की कठपुतली बनने से इनकार कर देता है। जिस समय लेखक-पाठक-अजय सब उसे समवेत स्वर में 'मानसिक रोगी' घोषित कर चुके होते हैं, उसी समय सेल्फ रेवीलेशन की प्रक्रिया से गुजरता हुआ वह स्वयं को नायक के रूप में प्रकट करता है। नहीं, बड़बोली दावेदारी के साथ नहीं, एक सघन-संवेदनात्मक तरल दृष्टि के साथ संबंधों की जटिलताओं को समझने और बचाने की नैतिक जिम्मेदारी का बोध! तब जिम की निःसंगता संवेदनहीनता के पर्याय के रूप में नहीं, कमल के रूपक में उभर कर सामने आती है। निर्लिप्त और कर्मयोगी-यही है जिम। उसका म्यूजियम और तमाम वैज्ञानिक खोजें जीवन, विज्ञान और प्रकृति के अंतःसंबंधों को जानने की कोशिशें बन जाती हैं। प्रवंचना से उपजे पीटर का क्षोभ जिम की भी निजी अनुभूति है, लेकिन यही उसका कुल परिचय और जीवन का सार नहीं। जिम ने धुरीहीन, जड़विहीन होने के अपने आक्रोश को थिरा लिया है। वह विज्ञान की उपज है, प्रकृति की नहीं, और जान लेना चाहता है कि विज्ञान 'सिंथेटिक इनसान' की इस नस्ल के पोषण के लिए कितनी दूर तक सहायक सिद्ध होगा। डॉली की अकाल मृत्यु, लारा की हत्या, शहनवाज की दुर्गति, पीटर की विक्षिप्तावस्था और विज्ञान की बैसाखियों पर चलता विस्नू बिजारिया-जिम जान गया है कि प्रकृति के साथ हर संघर्ष में विज्ञान औंधे मुँह गिरा है। अब संजीव और देर तक जिम से रूठे नहीं रहते। 'अरे!' मानो वे हर्षातिरेक से नाच उठे हैं। तब अपने क्रिएटिव डेस्क पर तेजी से रचनारत होकर वे जिस एक महत्वपूर्ण घटना की सृष्टि करते हैं, वह प्रकृति और विज्ञान को नायिका और खलनायक की भूमिका में उतार कर जिम के साथ-साथ लेखकीय दृष्टि को भी एक स्पष्ट दिशा देती है। जिम की माँ एलिस बदहाल अवस्था में घर में प्रविष्ट हुई हैं; जीवन और मृत्यु के बीच झूलते हुए वह बताती है कि विस्नू के क्लोनों ने मिल कर उसका बलात्कार किया है। प्रकृतिरूपा माँ इस उत्पीड़न को खामोश सहने को अभिशप्त है, लेकिन मातृरूपा प्रकृति क्या प्रतिशोध नहीं लेगी

फूलों की घाटी से अपनी इस नई जिंदगी की शुरुआत करने का संकल्प उसने बेहद भावनात्मक ढंग से अपनी डायरी में कलमबद्ध भी किया है कि 'हम हवा-पानी की चौकीदारी करेंगे। धरती को नष्ट होने से बचाएँगे। हम नफरत को खत्म करेंगे। हम एकमन होकर जी सकते हैं। ऋग्वेद के सहसूक्त की तरह हम सहमना होकर चलेंगे, सहमना होकर बालेंगे और एक समान ह्रदय वाले जाने जाएँगे। ...मैं इस धरती पर अपना छोटा सा ही सही, लेकिन स्वर्ग बना सकूँगा। हम जहाँ चलेंगे, वहाँ खुशबुएँ रह जाएँगी। हम जहाँ बहेंगे, वहाँ हमारे प्रवाह का स्वर गूँजेगा। हम अपने आसपास के वृक्षों, हवाओं, पानी और सारे लोगों की सारी वेदनाएँ समेट लेंगे। हमारे मन दर्पण की तरह साफ होंगे। मैंने आदिवासियों के जीवन को पास से देखा है। उसमें जो सामूहिकता की, सबके सुख-दुख अपने मानने की सुंदरता है, उसे हम अपने जीवन में उतार लेंगे। मुझे पता है कि ये सब लोग मेरा साथ देंगे।' (पृ0 212) लेकिन 'उन सब' लोगों

को विश्वास में लेकर अपने सपने और संकल्प को साझा करने का अवसर नहीं देतीं लेखिका उसे। क्या इसलिए कि 'एटलस श्रग्ड' (आयन रेड) उपन्यास से प्रेरणा लेकर एक समानांतर दुनिया की परिकल्पना करना आसान है, उस दुनिया को पूरे वैभव, सार्थकता और जीवंतता के साथ 'बसाना' मुश्किल? क्या इसलिए कि इस नई समानांतर दुनिया के सृजन के लिए जिस विजन की अनिवार्यता है, वही लेखिका के पास नहीं? कहना न होगा कि इसीलिए गुरुचरण दास की अकाल मृत्यु एक सपने की भ्रूण हत्या के रूप में चौंकाती और क्षुब्ध करती है।

गुरु की डायरी में उसके सहयोगी के रूप में एक जगह भट्ट का नाम दर्ज है। बेशक भट्ट के भीतर का सौंदर्यान्वेषी घुमक्कड़ उसे गुरु के सपनों से जोड़ता है। गुरु का संसर्ग उसे भारहीन होने की प्रतीति देता है और दुनियावी फंदों से मुक्त होने का साहस भी। लेकिन निर्द्वंद्व होकर निर्णय लेने का साहस उसमें नहीं। मन की सीमा जानने के लिए अपने भीतर जितना धँसता है, उतना ही उलझता चलता है क्योंकि वहाँ उसने प्रलोभनों और विवशताओं के कीचड़ में लिथड़े आत्मतुष्ट भट्ट को देखा है। तो क्या विशिष्ट बनने का छद्म ओढ़ कर वह अपने को ही ठगता रहा है? तो क्या गुरु अपने सहयोगियों के इस 'सच' को जानता था? उसकी डायरी में दर्ज अवसाद के पीछे क्या विश्वास भंग की यही पीड़ा नहीं थी जिसने उसकी जिजीविषा को ही कुतर दिया?

यहाँ एक सवाल यह भी उठता है कि आखिर लेखिका ने रंगनाथन की सदाशयता को आवेश में और भट्ट की स्वप्नाकुलता को भौतिकता में बाँध कर क्यों विघटित किया है? क्या उपभोक्तावाद का दबाव इतना प्रचंड है कि वे चाह कर भी 'एटलस श्रग्ड' की कल्पना नहीं कर सकतीं? तो क्या गुरुचरण की मृत्यु नई पारिस्थितिकीय सभ्यता के विकास की संभावनाओं की मृत्यु है? नई पारिस्थितिकीय सभ्यता यानी विकास का ऐसा मॉडल जो सिर्फ भौतिक समृद्धि पर आधारित न हो, बल्कि मनुष्य और पर्यावरण की चिंता उसके केंद्र में हो। क्या उपन्यास की सार्थकता एक शोकगीत के रूप में इस तथ्य को रेखांकित करने में ही है कि 'जितने सपने यह देश देखेगा, वे सपने देश के तमाम भट्ट लोगों के ही सपने होंगे।' (पृ. 215) साहित्येतिहास की सुदीर्घ परंपरा साक्षी है कि शोकगीत कभी मृत्यु की विजय-पताका नहीं बना। वह अंत तक प्राणपण से संघर्ष का निनाद और जीवन का राग रहा है। उपन्यास की दारुण परिणति को लेकर दुखमिश्रित हैरत इसलिए भी अधिक है कि इससे पूर्व अपने पहले ही उपन्यास 'कलिकथा वाया बाइपास' में लेखिका प्रकृति की चेतावनी न सुनने के कारण उपजे दुष्परिणामों की फैंटेसी कर चुकी हैं। ('अचानक संसार में प्रकृति के पाँचों तत्व-मिट्टी, जल, आग, आकाश और हवा-गड़बड़ा गए। ...दुनिया के सबसे ताकतवर देश में पेड़-पौधे मरने लगे-इस तरह जैसे धरती के अंदर किसी ने जहर घोल दिया हो। हवा में ऑक्सीजन की इतनी कमी हो गई कि लोगों के लिए साँस खींचना दुष्कर होने लगा। सारा, धरती का पानी सूखने लगा और बादलों रहित आकाश इस तरह तपने लगा जैसे रेगिस्तान की रेत। ...दुनिया के सारे देशों में पेट्रोल से चलने वाली हर चीज तुरंत बंद कर दी

गई क्योंकि पृथ्वी के चाँद की तरह हवारहित बन जाने के पीछे सबसे बड़ा खतरा पेट ्रोल-डीजल-गैस और कोयले से चलने वाली चीजों का था। बिजली का उत्पादन एकदम रोक दिया गया। इसका नतीजा यह हुआ कि सारे कल-कारखाने रुक गए। खासकर खाद बनाने वाले और रसायन बनाने वाले कारखानों को तुरंत बंद करने के आदेश विश्व की सरकारों ने जारी किए। ...सारी मोटर गाड़ियाँ बेकार हो गईं। बड़ी-बड़ी इमारतों में लिफ्ट न चल पाने के कारण और पानी न पहुँच पाने के कारण उनमें रहना असंभव हो गया। अब सबसे सुखी सबसे गरीब आदमी बन गया जिसे धरती पर ही रहने और पैदल चलने की आदत थी। सबसे जरूरी काम खाने के लिए अनाज-फल-सब्जियाँ उगाना हो गया और इस काम को जानने वालों की तनख्वाह सबसे अधिक हो गई। पृथ्वी को बचाने का अब एक ही तरीका था कि आदमी का श्रम सारी मशीनों की जगह ले और यह श्रम अधिक से अधिक हरियाली के उत्पादन में लगे-ऐसी हरियाली जिसमें किसी तरह के रसायन का प्रयोग न हो। अब पेड़-पौधों से उत्पन्न होने वाली आक्सीजन ही इस पृथ्वी को बचा सकती थी। यह सूचना दुनिया में फैलाने के लिए न कंप्यूटर, टी.वी. और अखबार की जरूरत थी, न हवाई जहाज, जलयानों और रेलों की। यह बात ऐसी थी जिसे बच्चा-बच्चा तक अपने अंदर समझ गया था। लोगों ने यह भी समझ लिया था कि जिन सुविधाओं का भोग करने की उन्हें आदत पड़ गई थी, वे ही उनके कष्ट का कारण हैं। जिस-जिस ने जितनी सुविधा भोगी थी, उसे उतना ही कष्ट हुआ। बाकी लोग जैसे रहते आए थे, उसी तरह रहते रहे। ऐसे लोग जो अपने गाँवों के अमूल्य हवा-पानी-आकाश को छोड़ कर शहरों में नरक जैसा जीवन बिताने आए थे, मुक्त हो गए।' अलका सरावगी, कलिकथा वाया बाइपास, पृ. 214.215)

'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास का अंत आत्मतुष्ट जड़ता और दृष्टिहीनता के जिस बिंदु पर होता है, वह 'रह गई दिशाएँ इसी पार' का विलोम रचता है। 'रह गईं दिशाएँ इसी पार' उपन्यास की सबसे बड़ी शक्ति यही है कि इसके रोम-रोम में बसा आशावाद त्रासदी के मर्मांतक आघात को छिन्न-भिन्न करता चलता है। इसलिए गुरु की तरह स्वप्नद्रष्टा और भावुक न होते हुए भी जिम मृतप्राय संबंधों, मूल्यों, संस्कृति और मानवीय अस्तित्व को बचाने के लिए कमर कस लेता है। 'आस्थाहीन होकर हम कैसे रह सकते हैं? रिश्ते न भी हों तो भी हमें ईजाद कर लेने होंगे ...ईश्वर न भी हो तो ईश्वर भी।' (संजीव, रह गईं दिशाएँ इसी पार, पृ. 309) यह एक छोटी लकीर के मुकाबले गाढ़ी और बड़ी लकीर उकेरने की कोशिश है-अर्थगर्भित! दिशागर्भित! क्या यही मन की सीमाएँ जान कर असीम हो जाने का रहस्य नहीं?

3.वह अपने प्यार की गहराई को समझती है तो साथ ही हिरु के माता-पिता की आँखों में उभरे डर के भीतर तैरती मछली को भी देख सकती है। लापता होना उसका 'पलायन' नहीं, भावी पीढ़ी को विकृतिजन्य शारीरिक-मानसिक परिताप से बचाने का संकल्प है। मनुष्यता के पाप का प्रायश्चित। महुआ माजी के पास ऐसा एक भी पात्र नहीं जिसके सहारे चार सौ पृष्ठों में फैली इस समाजवैज्ञानिक शोध को उपन्यास का

दर्जा दिया जा सके। जाहिर है साहित्यकार समाजवैज्ञानिक की तरह तथ्यों को एकत्रित करके और उनका बौद्धिक विश्लेषण कर किन्हीं निष्कर्षों तक पहुँचने की प्रक्रिया को अपना गंतव्य नहीं मान सकता। दरअसल बोध के स्तर पर यह सारी प्रक्रिया उसके भीतर चलती रहती है जो उसकी संवेदना, दृष्टि, कल्पना और सर्जनात्मकता को भावनात्मक ऊँचाई देकर कलम के जरिए भीतर के लोक को बाहर उतारने की व्याकुलता देती है। कलम से उसे न तर्क देने हैं, न आप्त वचन। चित्रकार की तरह कलम को कूची की तरह प्रयुक्त करते हुए जीवन का चित्रा चित्रित करना है-किसी एक खास पल, खास जन, खास स्मृति/घटना, खास भूभाग से जुड़ा गतिशील जीवन-चित्र-जिसके भीतर मानस में पलने वाली जटिल मानवीय प्रकृति भी है और बाहरी प्रभावों से मुठभेड़ करती विवेकशीलता भी। पाठक को लेखकीय हस्तक्षेप जरा भी पसंद नहीं। न उसकी ओर से की जाने वाली बयानबाजी, न तथ्यों-जानकारियों की पोटली। वह सिर्फ और सिर्फ पात्र को तलाशता है जो अपने निजी वैशिष्ट्य और गंध के साथ उसे भी अपना सहयात्री होने का अहसास दिला कर एकात्म बना सके। इसलिए साहित्य में सामाजिक समस्याएँ अपनी प्रत्यक्षता/लाउडनैस खोकर विडंबना की कचोट भरी अनुभूति के रूप में उपस्थित होती हैं। साहित्यकार समाजवैज्ञानिक की तरह पाठक से उन समस्याओं पर चिंतन-मनन की अपील नहीं करता, शूल की तरह यह आवश्यकता उसके कलेजे में पिरो कर उसकी भावनाओं का उदात्तीकरण करता है। चूँकि साहित्य सेल्फ एक्सप्लोरेशन की बीहड़ यात्रा है, इसलिए एक कौम, एक प्रजाति, एक मुद्दे पर बात करते हुए भी यह मूलतः एक व्यक्ति-चरित्र की कथा होने का आभास देता है। कहना न होगा कि इस समूची प्रक्रिया में लेखक द्वारा बटोरी गई तमाम सूचनाओं की ठोस प्रस्तुति बेमानी हो जाती है। अलबत्ता अनुभूति बन कर वे व्यक्ति-चरित्र सपनों, दर्द के रिश्तों और संघर्ष की जमीन को रचते हैं। हिंदी में इन दिनों शोध आधारित लेखन का जादू रचनाकारों के सिर चढ़ कर बोल रहा है, लेकिन तथ्य को कला और कला को उदात्त जीवन बनाने की सर्जनात्मकता उनमें प्रायः नहीं है। संजीव यदि एक बेहतर अपवाद के रूप में याद किए जा सकते हैं तो सर्जनात्मकता के अभाव में अपनी रचनाओं को डाक्यूमेंट्री फिल्म में विघटित कर देने की दुर्बलता मधु कांकरिया के उपन्यास 'सेज पर संस्कृत' और शरद सिंह के उपन्यास 'पिछले पन्ने की औरतें' में खास तौर पर देखी जा सकती है।

'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास लेखिका की प्रीमेच्योर डिलीवरी का नमूना है। 'विकिरण, प्रदूषण और विस्थापन से जूझते आदिवासियों की गाथा' कहने के लिए वे सगेन और आदित्यश्री जैसे प्रवक्ताओं की कल्पना जरूर करती हैं (झारखंड क्षेत्र के लेखक रणेंद्र, जिन्होंने इसी क्षेत्र की राक्षस जनजाति को केंद्र में रख कर 'ग्लोबल गाँव के देवता' उपन्यास भी लिखा है, 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास की समीक्षा करते हुए सगेन और आदित्यश्री को आइडेंटिफाई करते हैं। उनके अनुसार 'जोआर' (झारखंडी ऑर्गेनाइजेशन अगेंस्ट रेडिएशन) से जुड़े घनश्याम बिरुली सगेन हैं और फिल्मकार श्रीप्रकाश आदित्यश्री हैं। स्वयं महुआ माजी ने स्वीकार किया है कि इन दोनों

वास्तविक पात्रों के अतिरिक्त मेधा पाटेकर सुमेधा पाणिकर नाम से उपन्यास में आई हैं और जेवियर डॉयस जॉन डॉयस के नाम से। देखें 'नया ज्ञानोदय' जून एवं जुलाई 2012 अंक), लेकिन उनके व्यक्तित्वको एक विशिष्ट रचाव नहीं दे पातीं। विकिरण प्रभावित क्षेत्र की फिल्म बना कर व्यवस्था, समाज और स्वयं पीड़ितों को जागरूक करने का महत उद्देश्य इन दोनों जुझारुओं का सपना है, लेकिन मिशन को पैशन बना देने वाली इन्टेंसिटी की बजाय एक खास तरह की निःसंगता उन्हें अंत तक 'बाहरी तत्व' बनाए रखती है। ध्यातव्य है कि आदित्यश्री और सगेन की तरह इस्सा और निशीना शिंजो ('वियतनाम को प्यार') भी फिल्में बना कर मानव-निर्मित त्रासदी (एटम बम और नापाम बम से होने वाले भीषण नर-संहार) के पीछे सक्रिय साम्राज्यवादी ताकतों के निहितार्थों को पूरे विश्व तक संप्रेषित कर देना चाहते हैं। यह अपने दर्द को बाँट कर मुक्त होने की युक्ति भी है और दर्द का रिश्ता कायम कर विश्व-बंधुत्व का प्रसार करने की कोशिश भी। इस मिशन को पालने के बाद 'बम की संतान' शिंजो एक बार फिर 'जिंदा' होने के अहसास से भर कर आठवर्षीय बच्चे की तरह एक टाँग पर कुदक्के मार कर चलने लगता है; नापाम बम की शिकार वियतनाम की लड़की मिस दान थान्ह की यातना में उसे अपना अतीत, वर्तमान, भविष्य सब दिखाई पड़ रहा है। नहीं, एक और शिंजो को जिंदा लाश बना कर जिंदगी का मखौल नहीं बनाने देगा वह। मिस दान थान्ह व्यक्ति रूप में एक इकाई है जिसकी यातना के साथ गहरा रिश्ता जोड़ कर उसने अपने भीतर के भावनात्मक शून्य को भर लिया है। दान हर पीड़ित का प्रतिरूप है जिसे बर्बर अमानुषिक इरादों से बचाने के लिए उसे सिर पर कफन बाँध कर निकल पड़ना है। मिस दान थान्ह ने भावनात्मक सुरक्षा देकर उसे मोहग्रस्त किया है, लेकिन प्रतीक दान ने मोह के बंधनों को काट कर अकेले निःसंग भाव से अपने कर्म पथ पर बढ़ते रहने का हौसला भी दिया है। राग और विराग की अंतर्लीन लहरियों में निरंतर अपने को खोजता और माँजता है शिंजो-स्वप्न और संकल्प को संवेदनात्मक अंतर्दृष्टि के सहारे एकमेक कर लेने वाला पैशन! शिंजो की तुलना में सगेन और आदित्यश्री इकहरे पात्र हैं। चूँकि उनका लक्ष्य मुग्ध भाव से लेखिका द्वारा एकत्रित सूचनाओं को यथास्थान प्रत्यारोपित करना है, इसलिए उनके सारे प्रयास पाठक के तईं 'यूरेनियम पर्यटन' से ज्यादा कुछ नहीं रहते। इसे घनश्याम बिरूली, जेवियर डायस और श्रीप्रकाश जैसे यथार्थ जीवन के सक्रिय कार्यकर्ताओं की संघर्षशीलता का अवमूल्यन और विघटन भी कहा जा सकता है। फिर उपन्यास किस मुँह से लार्जर दैन लाइफ का दावा कर सकता है?

इस कड़ी में लंदन से रिसर्च करने आई प्रज्ञा को भी लिया जा सकता है। आदित्यश्री और सगेन आदि के साथ हजारों हैक्टेयर में फैले जंगल के एक खास हिस्से का पर्यटन करते हुए सगेन की जुबानी 'हो' आदिवासी जनजाति की सांस्कृतिक विशिष्टताओं से परिचित होने, आदित्यश्री द्वारा बनाई गईं विकिरण-पीड़ितों की फिल्में देखने, और सगेन के मोआर की गतिविधियों को जानने के बाद वह स्वयं अपनी आँख से विकिरण पीड़ितों को देखना चाहती है। यह बिंदु सैम-सान ('हिरोशिमा के फूल') और शिंजो ('वियतनाम को प्यार') की तरह आत्मविस्तार का बिंदु बन कर प्रज्ञा के चरित्र को औदात्य देने की

संभावनाओं से भरपूर था, लेकिन लेखकीय कन्सर्न का अभाव उसे प्रतिबद्ध सामाजिक कार्यकर्ता/मनुष्य का रूप न देकर आत्मरतिग्रस्त स्नॉब के रूप में विघटित कर देता है। प्रमाणस्वरूप उसकी दो प्रतिक्रियाएँ द्रष्टव्य हैं। एक, यूरेनियम विकिरण प्रभावी क्षेत्र का दौरा (पर्यटन) करते समय सगेन अपने साथियों को बताता है कि उनके पैरों से लिपट कर जो सफेद धूल उनके संग-संग चल रही है, वह दरअसल यूरेनियम कचरा है जो आदिवासियों की जिंदगी और साँस में घुल मिल कर उन्हें निरंतर रेडिएट करता रहता है। पाँच सदस्यों के उस दल में पहली और आखिरी प्रतिक्रिया प्रज्ञा की है-'अब क्या होगा? मेरे पास तो एकस्ट्रा जूते भी नहीं हैं।' (पृ. 375) बेशक यह प्रज्ञा की तात्कालिक प्रतिक्रिया है, लेकिन इसके भीतर पलता भय और रेडिएशन से आत्मरक्षा का भाव उसे अंततः 'बाहरी' व्यक्ति ही बनाए रखता है। इसलिए शोध के दौरान वह मरंग गोड़ा न रह कर जमशेदपुर रहने और 'पर्सनल कांटैक्ट' की बजाय गौण स्रोतों से जानकारी जुट ाने के विकल्प को अपने शोध और स्वास्थ्य दोनों के लिए बेहतर मानती है।

दूसरी प्रतिक्रिया मरंग गोड़ा के स्थानीय लोगों से मिलने के बाद की है-'मामले को जितना गंभीर समझ कर मैं यहाँ आई थी, शायद उतना नहीं है। स्वस्थ लोग भी तो हैं यहाँ।' (पृ. 354) जाहिर है तब प्रज्ञा के व्यक्तित्व का जो खाका उभरता है, वह दूसरों की पीड़ा का इस्तेमाल करके अपनी रोटियाँ सेंकने वाले वर्ग की आत्मरतिग्रस्तता का प्रतिनिधित्व करता है। पाठक ऐसे संवेदनहीन पात्र से कैसे तादात्म्य स्थापित करे? वह तो बल्कि उसकी भविष्य की योजनाओं को उससे पहले ही पढ़ लेता है कि इस शोध कार्य के बलबूते विदेश में अच्छी नौकरी का जुगाड़ कर वह पहला मौका मिलते ही यहाँ से भाग खड़ी होगी। इसलिए जब वह आदित्यश्री के सामने चुग्गा फेंकती है तो पाठक को जरा भी आश्चर्य नहीं होता-'लंदन में जाकर साथ रहेंगे हम। तुम चाहो तो शादी भी कर लेंगे। ...इस शोध के आधार पर मुझे तो नौकरी मिल ही जाएगी। सोचो श्री सोचो। क्या शानदार जिंदगी होगी हमारी।' (पृ 393)।

प्रज्ञा का विलोम रचता है 'हिरोशिमा के फूल' का सैम सान। पारिवारिक व्यवसाय के सिलसिले में सप्ताह भर के लिए हिरोशिमा आया यह युवक ओहात्सू के सौंदर्य में बंध कर उनके घर पेइंग गेस्ट की हैसियत से रुका है, लेकिन ढाँपने की तमाम कोशिशों के बाद भी कोनों-अँतरों से उघड़ पड़ती विकिरण पीड़ितों की त्रासदी ने उसे बार-बार 1945 में लौटने को बाध्य किया है। 'चौदह साल हो गए हैं उसे (एटम बम को) गिरे, लेकिन उसका काम अभी तक चल रहा है। इस बीच हम खामोश बैठे दूसरे बम के गिरने का इंतजार कर रहे हैं। हम जानते हैं कि वह बम हिरोशिमा को तबाह करने वाले बम से हजार गुना ज्यादा शक्तिशाली होगा, लेकिन क्या हमें इसकी परवाह है?' (पृ. 103)। साम्राज्यवाद का इतना क्रूर चेहरा! सैम सान व्यवसायी है, अतः न नीरो का दृष्टांत जानता है, न कालिगुला का मिथक, लेकिन एक अमरीकन की हैसियत से स्वयं को हंता समझते हुए वह भरी-पूरी जिंदगी उजाड़ने के अभिशाप से स्वयं को ग्रस्त पाता है। 'एक तरह से मैं यहाँ हिरोशिमा में आकर बड़ा हुआ हूँ। एक तरह से नहीं, बल्कि कई तरह से।' (पृ. 86) जिस अमरीका को ताकत, समृद्धि और गरिमा का पर्याय मान कर वह

आज तक इतराता रहा है, उस विश्वास की बुनियाद क्या इतनी खोखली है? हिरोशिमा यदि अमरीका की विकृत सोच और खूँखार प्रकृति का परिणाम है तो वही उसके पापों का प्रायश्चित भी हो सकता है। 'तुम्हारे जरिए मैंने हिरोशिमा का अर्थ जाना है। यह वह चीज है जिसे ज्यादा लोग नहीं जानते। मैं कुछ एक लोगों को बताऊँगा। यही कुछ मैं इस समय कर सकता हूँ कि लोगों को बताऊँ।' वह अपने मेजबान दंपति को कहता है जो उसकी हर अनुकंपा और आर्थिक सहायता को विनम्रतापूर्वक अस्वीकार करते हुए उसे 'घर' बनाने में मशगूल गिलहर को दाना डालने का निवेदन करता है, बस। सैम सान जान गया है कि यह दंपति सैम को इसलिए अपनी पीड़ा की परिधि से बाहर नहीं करना चाहते कि वह अमरीकी है(उल्लेखनीय है कि पूरे उपन्यास में मेजबान युका-सान अमरीकी युवक सैम को साम-सान कह कर ही बुलाती है। यह जापानी शिष्टाचार का नमूना ही नहीं है, बाहरी व्यक्ति को आत्मीय बनाने की सांस्कृतिक विशिष्टता का एक उदाहरण भी है।), बल्कि इसलिए कि घावों को दिखा कर दूसरों की दया नहीं पाना चाहते वे। उनमें इतना गहरा आत्मसम्मान है और प्यार बाँटने का इतना औदार्य की मृत्यु के मुँह में फँस कर शारीरिक रूप से विकृत हुआ फ्यूमियो सौंदर्य और औदात्य का विराट रूपक रचता है। क्या 'हम कठपुतलियों की दुनिया में रहते हैं?' आत्मग्लानि से रुद्ध है सैम। मेजबान दंपति के जीवन-सौंदर्य में सन्निहित सत और शिव ने अतिक्रमण के जरिए उसका भी उदात्तीकरण कर दिया है-'मैं जीना चाहता हूँ। मैं युवा हूँ। मुझे कोई बटन दबाने वाला अफसर बुहार नहीं सकता।' यह उसका प्रतिरोधात्मक संकल्प है और आत्मविस्तार की सर्जनात्मक भावभूमि भी। जाहिर है प्रज्ञा और सैम-सान, महुआ माजी और एदिता मोरिस एक-दूसरे का विलोम रचते हैं। वस्तुतः यही नीलकंठ की भूमिका भी है-विष के संहारक प्रभावों को स्वयं झेल कर शिवत्व का निरंतर प्रसार। महुआ माजी उपन्यास (क्या इसे डाक्यूमेंट्री फिल्म या फीचर रिपोर्ताज कहना बेहतर नहीं होगा?) के शीर्षक में 'नीलकंठ' शब्द शामिल कर भ्रमित बेशक कर दें, लेकिन यह जरूर स्वीकारना होगा कि मरंग गोड़ा को नीलकंठ बनाने का प्रयास उनकी ओर से कभी हुआ ही नहीं।

4. 'लो सोनचिड़ी / वायदा हुआ पूरा / रहेगी जमीन रहेगा पानी / आसमान / आँगन' (अलका सरावगी, एक ब्रेक के बाद, पृ. 172) बनाम 'औरत हूँ मैं... मैं पालना-पोसना, सहेजना-सँवरना चाहती हूँ। मैं सर्जक होना चाहती हूँ' (मृदुला गर्ग, कठगुलाब, पृ0 104)

पारिस्थितिकीय विमर्श यदि प्रकृति और पर्यावरण के साथ मनुष्य के संतुलित समन्वयात्मक संबंध का नाम है तो इसकी परिधि में जैविक विविधता को बचाने की जद्दोजहद के साथ प्रकृतिरूपा स्त्री की गरिमा को बचाने की संवेदनात्मक पहल भी शामिल है। स्त्री अमूमन हर देश-काल में तिरस्कृत रही है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था का उदार मुखौटा न्याय की भरसक कोशिशों के बावजूद स्त्री की अस्मिता को पुरुष निरपेक्ष स्वायत्त मानवीय इकाई के रूप में नहीं देख पाता। प्रकृति की भाँति स्त्री में सहने और सृजन करने की अकूत ताकत है, लेकिन प्रकृति की तरह उसका अत्यधिक दोहन मनुष्य

के लिए घातक हो सकता है। मृदुला गर्ग हिंदी की पहली रचनाकार हैं जो पूँजीवादी सभ्यता और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के भीतर प्रकृति और स्त्री के साथ पुरुष और समाज के अंतर्संबंधों को नए सिरे से जाँचने की आवश्यकता पर बल देती हैं। बेहद सचेष्ट भाव से रचा गया उनका उपन्यास 'कठगुलाब' इको फैमिनिज्म को अपनी दृष्टि से व्याख्यायित करता है। इस प्रक्रिया में मृदुला गर्ग ने कुछेक कथा युक्तियों का सहारा लिया है, जैसे पात्रों का स्याह और सफेद दो कोटियों में विभाजन; प्रत्येक देश-काल, आयु-वर्ग की स्त्री की अलग-अलग व्यथा-कथा कहते हुए भी यह ध्यान रखना कि अंतिम टेक में वह पुरुष-प्रताड़ना की एक-सी ध्वनि बन जाए; अपनी प्रवक्ता तिरस्कृत स्त्रियों-स्मिता, असीमा, मारियान, नर्मदा-को बाँझ दिखाना; तथा पुरुष को अनिवार्य रूप से खलनायक चित्रित करना, हालाँकि अर्धनारीश्वर की परिकल्पना में वे जिस पुरुष-विपिन- को रचती हैं, पह पूरा न सही, आधा-पौना स्त्री तो है ही (स्वयं विपिन स्वीकार करता है कि 'मेरा उस अहसास में भागीदारी कर पाना, जो मेरे साथ की स्त्री महसूस कर रही थी, इस बात का सबूत था कि मेरे भीतर नारीसुलभ गुण अन्य पुरुषों की तुलना में अधिक मात्रा में विद्यमान थे। तभी मैं इतना संवेदनशील था कि स्त्री की संवेदनशक्ति को महसूस कर सकता था।' वही, पृ. 199)। वे प्राणपण से इस तथ्य को रेखांकित करना चाहती हैं कि स्त्री मूलतः स्रष्टा है और मातृत्व उसकी सार्थकता। लेकिन उनकी मान्यता में मातृत्व को गद्‌गद् भाव से महिमामंडित करने वाले परंपरागत भारतीय उच्छ्वास नहीं हैं, वरन सृष्टि के क्रम को आगे बढ़ा कर आत्मविस्तार करने और अपनी गलतियों से सबक लेते हुए नई पीढ़ी का बेहतर संस्कार करने की ललक है। सृजन के अर्थ को संतानोत्पत्ति के रूढ़ अर्थ में देखने की हर संकीर्णता का सख्ती से विरोध करती हैं मृदुला गर्ग। 'संतान पैदा न कर पाने से कोई बंजर नहीं हो जाता। और बहुत कुछ है जिसका सृजन हम कर सकते हैं' (पृ. 242)-'कठगुलाब सृजन की उन संभावनाओं की तलाश है जो मारियान के संदर्भ में शब्दों का संसार रच कर मूर्त हुई है (उल्लेखनीय है कि सभी नारीवादी सिद्धांतकार स्त्रियों द्वारा स्वयं अपना इतिहास लिखने की पैरवी करती हैं ताकि अपने शब्दों के जरिए वे अपने मानस में छिपे रहस्यों और आकांक्षाओं, सपनों और यातनाओं के इतिहास को दर्ज कर सकें। वे पुरुष द्वारा परिभाषित होने की अपेक्षा स्वयं अपने को 'डिस्कवर' करके शब्दों में अपने को परिभाषित करें। ऐलन सिक्सू मानती हैं कि स्त्री लेखन का कंटेट ही नहीं, बल्कि अभिव्यक्ति का माध्यम भी अनिवार्य रूप से पुरुष से भिन्न है। इस भिन्नता का पाठ और विश्लेषण बेहद अनिवार्य है क्योंकि एक ओर यह स्त्री के महत्व को एक विशिष्ट जैविक इकाई के रूप में दर्ज करता है तो दूसरी ओर पितृसत्तात्मक व्यवस्था की सांस्कृतिक संरचनाओं और षड्यंत्रों को समझने का अवसर भी देता है। वे लिखती हैं- किसी जनसभा में स्त्री को बोलते हुए सुनो। वह 'बोलती' नहीं, अपने पूरे शरीर को आगे धकेलती है, वह अपने को भूल कर उड़ान भरती है, उसका समग्र उसकी वाणी में समाता है। वह अपने शरीर के द्वारा अपने भाषण के 'तर्क' को जीवंत करती है। एक खास तरीके से वह जो कुछ कर रही होती है, उसे लिखती या दर्ज करती है क्योंकि वह बोलते समय अपने आवेगयुक्त

और अनचीन्हे प्रवाहों को रोकती नहीं। उसका भाषण जब सैद्धांतिक या राजनीतिक भी होता है, तब भी सरल या एकरेखीय या तटस्थ रूप से सामान्य नहीं होता। वह अपने इतिवृत्त को इतिहास रूप में ढालती है।' (कथादेश, जुलाई 2012 में प्रकाशित विभास वर्मा का लेख 'मेडूसा की हँसी' पृ. 45) मारियान-इर्विंग प्रकरण की नियोजना के जरिए मृदुला गर्ग एलेन सिक्सू की तरह यह मानती प्रतीत होती हैं कि स्त्री की तरल, प्रवाहपूर्ण, विवेकातीत, तर्क-स्वतंत्र, चक्रीय लेखन शैली के समानांतर पुरुष की लेखन शैली अमूमन 'तर्काधारित, विवेकाधीन, सोपानिक या अनुक्रमिक और एकरेखीय' होती है जो जड़ता और ठस्सपने के साथ-साथ पुरुष-अधिनायकवाद को भी रेखांकित करती है।); असीमा के संदर्भ में गरीब बच्चों को बेहतर शिक्षा-सुविधाएँ उपलब्ध कराने वाले स्कूल खोल कर; दर्जिन बीबी के संदर्भ में आत्मदया और अपराध बोध के भय से सिकुड़ी स्त्रियों को आत्मनिर्भरता और आत्माभिमान का पाठ पढ़ा कर; और स्मिता के संदर्भ में बंजर को हरियाने का संकल्प बन कर।

मृदुला गर्ग पर टाइप्ड पात्रों को गढ़ने का आरोप आसानी से लगाया जा सकता है क्योंकि उनके स्त्री पात्र जिस साँचे से तैयार होकर निकले हैं, वह उन्हें 'स्वप्नदर्शिता और भावुकता' से भरपूर बनाता है। यहाँ तक कि पुरुषों को 'हरामी' का खिताब देकर कराटे किक के साथ जब-तब 'ठोक' देने वाली 'उग्र' असीमा बेशक कितने ही दावे क्यों न करे कि 'नारीसुलभ कोमलता और करुणा' से मुक्ति पाकर ही स्त्री जीवित रहते मोक्ष पा सकती है, लेकिन भीतर से बेहद तरल और स्वप्नदर्शी है वह। सिर्फ असीमा क्यों, विपिन की मानें तो 'स्वार्थी से स्वार्थी स्त्री के पास निःस्वार्थ प्रेम कर पाने की सामर्थ्य है। ऐसी पूँजी के होते उदात्तीकरण भला क्यों न होगा? भावनाओं का। अनुभूति का।' (पृ. 200) ठीक इसी तरह उनके सभी पुरुष पात्रों का साँचा भी एक ही है जिसे लेखिका ने नाम दिया है-नर सूअर। जिम जारविस(मनोविश्लेषक जिम जारविस को मनोरोगी के रूप में चित्रित किया है मृदुला गर्ग ने, जो पत्नी स्मिता से चाहता था कि वह प्यार, स्नेह, विश्वास, जरूरत, अपनत्व, दोस्ती, संतोष सबको शब्दों में अभिव्यक्त' करे। 'वह नहीं कर पाती तो उसके पास एक ही विकल्प बचता-सेक्स। उसकी हर चुप उससे उसकी देह को भोगने का नया तरीका ईजाद करवा देती। पहले से ज्यादा तिरस्कारपूर्ण, अपमानजनक और अशालीन।,' मृदुला गर्ग, कठगुलाब, पृ. 49) हो या इर्विंग ह्निटमैन (इर्विंग-मारियान प्रकरण प्रसिद्ध कवि फिट्जेराल्ड और जेल्डा फिट्जेराल्डकथा-प्रकरण की आधुनिक पुनरावृत्ति है जहाँ बौद्धिकता और संवेदना का जीवंत प्रतिरूप बन कर लेखक पति पत्नी की डायरियों को ज्यों का त्यों 'उड़ा' कर पाठकों की सराहना बटोरता है। उल्लेखनीय है कि पत्नी द्वारा न्याय की गुहार लगाए जाने पर न्याय व्यवस्था पितृसत्तात्मक चरित्र अपनाते हुए पुरुष के पक्ष में फैसला सुनाती है क्योंकि पुरुष के साझे हितों की रक्षा सामूहिकता में ही संभव है। जाहिर है तब सीमोन द बउवार का यह कथन बेहद सटीक हो उठता है कि 'अब तक औरत के बारे में पुरुष ने जो कुछ भी लिखा, उस पूरे पर शक किया जाना चाहिए क्योंकि लिखने वाला न्यायाधीश और

अपराधी दोनों ही है।' (स्त्री उपेक्षिता, पृ0 28) मृदुला गर्ग ने मारियान को पुरुष के भावनात्मक बलात्कार के शिकार के रूप में चित्रित किया है। 'जैसे ही यह उपन्यास छप कर आएगा, हम एक और बच्चा बनाएँगे। ...हमारी चेतना और देह, दोनों के मिलन का चिह्न ...फ्लैश ऑव अवर फ्लैश'-इर्विंग के इस वादे में चतुर शिकारी की मुस्तैद घात मौजूद है जो उपन्यास के विषय-इमीग्रेंट स्त्रियों का मानस-में स्वयं न उतर पाने की असमर्थता में मारियान द्वारा रची गई इमीग्रेंट स्त्रियों के मनोलोक को ज्यों का त्यों उपने उपन्यास में उतार लेता है।); गैरी कूपर (गैरी कूपर को 'चिर युवा' या टीन एज पर अटके ऐसे 'छोकरे' के रूप में चित्रित किया गया है जिसका शरीर और दिमाग चाहे जितना परिपक्व हो जाए, भावनात्मक आयु वही बनी रहती है। ऐसे लोगों को अपने सिवाय किसी और की इमोशनल जरूरत समझ में नहीं आती। ऐसे ही पुरुष को लेकर वर्जीनिया वुल्फ ने 'अपना कमरा' में लिखा है कि स्त्री रूपी दर्पण मे स्वयं को कई-कई गुणा बढ़ा-चढ़ा कर देखने के बाद ही चैन से जी पाता है पुरुष। (पृ. 45) चूँकि वह जानता है स्त्री उसकी तमाम भौतिक-भावनात्मक जरूरतों की पूर्ति का केंद्र है, इसलिए उसका उद्धत अहं हीन होने की आशंका मात्र में आक्रामक होकर श्रेष्ठ/समर्थ हो जाने का प्रपंच रचता है। मृदुला गर्ग ने विपिन के जरिए पुरुष की इस बेचारगी का खूब मखौल उड़ाया है-'बेचारा पर-निर्भर पंगु पुरुष अपनी अस्मिता सिद्ध करने के लिए इतनी उछलकूद मचाए रखता है।' (कठगुलाब, पृ. 200) हो या स्मिता का जीजा या नर्मदा का जीजा गनपत (दो भिन्न वर्गों से संबंध रखने के बावजूद मृदुला गर्ग ने इन दोनों पुरुषों को एक-दूसरे का प्रतिरूप बताया है। दोनों पत्नी पर हिंसा और स्त्रियों के यौन शोषण को अपना विशेषाधिकार मानते हैं।)-मृदुला गर्ग हिकारत के साथ इन पुरुष पात्रों पर थूकते हुए एक बड़ा सवाल उठाती हैं कि प्रताड़ना-लांछना करने वाले पुरुष की अनुकंपा और साहचर्य ही क्यों चाहती है स्त्री? क्या इसलिए कि वह उसे बच्चा दे सकता है? लेकिन बच्चे पैदा करने के लिए जब स्पर्म बैंक या टेस्ट ट्यूब बेबी जैसे विकल्प मौजूद हों, तब क्या अहमियत रह जाती है स्त्री के जीवन में पुरुष की? खासतौर पर उन आत्माभिमानी आत्मनिर्भर स्त्रियों के लिए जो मानती हैं कि 'जिंदगी की असल नेमत है औरत की दोस्ती' (पृ. 107) लेकिन मृदुला गर्ग के भीतर का विवेकशील मनुष्य उनके भीतर रची-बसी 'औरत' को धकिया कर सवाल पूछता दीखता है कि क्या लैंगिक इकाई में रिड्यूस होकर व्यक्ति अपनी मनुष्यता को अखंड पा सकता है? क्या स्त्री के शोषण के मूल में लैंगिक विभाजन को प्राकृतिक और जायज ठहराने वाली राजनीति नहीं है जो एक ओर स्त्रियों में अपने ही शरीर और अस्तित्व के प्रति हिकारत का भाव पोसती है तो दूसरी ओर स्त्री के खिलाफ खड़ा कर उनकी सर्जनात्मक शक्तियों को नष्ट करती है। इसलिए अकारण नहीं कि मृदुला गर्ग की स्त्रियाँ आत्ममुग्धता से मुक्त हैं (यह आत्म-मुग्धता फेमिनन वाइल्स की जनक है जो पहले स्त्रियों को 'पुरुष-आखेटक' की काम्य भूमिका में उतरने का न्यौता देती है, और फिर उन्हें मुग्धा, पद्मिनी, शंखिनी आदि नायिकाओं की कोटि में विभाजित कर अंततः पुरुष के विलास की सामग्री ही बनाती है। मृदुला गर्ग उपन्यास में वरजीनिया-मारियान की माँ-के रूप में

ऐसी ही आत्ममुग्धा स्त्री की रचना करती हैं जो न प्रेम-समर्पण-भावनात्मकता के मूल्य को जानती है, न संवेदनात्मक संवेगों के जरिए संबंधों की हार्दिकता को। मृदुला गर्ग आत्ममुग्धता को आत्म-प्रवंचना का पर्याय भी मानती हैं। इसीलिए वरजीनिया किसी 'दुर्लभ' को पाने की तृष्णा में जीवन भर रंक बनी रहती है।) और अपराध बोध से भी। वे मानती हैं कि विशिष्ट लैंगिक भूमिकाओं में स्त्री-पुरुष का विभाजन न उन्हें स्वस्थ जैविक इकाई बने रहने देता है, न संवेदनशील-विवेकशील मनुष्य। पुरुष अपनी समग्रता को अधिनायकवाद में केंद्रित कर ले और स्त्री मातृत्व के बहाने प्रजनन की मशीन बन कर रह जाए-जहाँ संबंधों की ऊष्मा से भरा जीवन नहीं, वहाँ यांत्रिकता, विकृति और विघटन ही शेष बचते हैं। दरअसल नीरजा को गढ़ने के मूल में उनकी यही छटपटाहट सक्रिय रही है। बिना विवाह किए अधेड़ विपिन के साथ रह कर उसे बच्चा देने का अनुबंध स्वीकार करती है मेडिकल साइंस की छात्रा नीरजा-बोहेमियन वृत्ति, प्रयोग का कौतुक या संबंधों के पारंपरिक ढाँचे के प्रति अनास्था-कारण जो भी हो। लेकिन ढाई-तीन बरस के साहचर्य के बाद भी संतान न दे पाना, अनेकानेक मेडीकल टेस्टों से गुजरने के बाद अपनी ही असमर्थता जान कर लगभग विक्षिप्त और हठी हो जाना, मेडीकल विज्ञान की हर संभव तकनीक का सहारा लेकर अपनी बायलॉजिकल अक्षमता को पलटने का संकल्प... पराभव... टूटन... नीरजा विपिन के साथ संबंध नहीं जीती, चैलेंज के साथ दिन ब दिन खुद को छीलती-छलती चलती है। उसकी भरी-पूरी शख्सियत यंत्रा-मानव में तब्दील हो गई है या फिर 'गिनीपिग' में। मौसम का आह्वान, भावनाओं का ज्वार, मदन-गंध से गंधाता विपिन-उसके लिए सब बेमानी हैं। सच और मानीखेज है तो उस एक पल की प्रतीक्षा जब पोस्ट कोयटल टेस्ट और ओव्यूलेशन ट ेस्ट की रिपोर्टें यह तस्दीक करें कि हाँ, अब इस एक खास पल में वह माँ बन सकती है। उसके लिए विपिन नहीं, विपिन का स्पर्म ज्यादा जरूरी है। लेखिका और विपिन दोनों आतंकित हैं नीरजा के इस विघटन से। 'जब सायास, निर्मम बन कर अपने बारे में बेबाक जानकारी दी जाती है, तब न तिलिस्म बचता है, न साहचर्य पैदा होता है' (पृ. 234)-लेखिका अपनी राय देती हैं तो विपिन असीमा के कंधे पर सिर रख कर रो लेना चाहता है। नहीं, अपेक्षाओं के बावजूद स्त्री-पुरुष संबंध का दारुण अंत इस बिंदु पर नहीं हो सकता। दुख से प्रतिस्थापित होकर मनुष्य अपने संवेगात्मक कोश को दि-खाता है, लेकिन तकनीक से प्रत्यारोपित होकर वह संवेगात्मक रिक्ति का ही पर्याय बन जाता है। चयन, वरण, विस्मरण मनुष्य की नेमतें हैं जो यांत्रिकता और जड़ता को छिन्न-भिन्न कर मनुष्य को मनुष्य-निरंतर गतिशील, विकासशील प्राणी-बनाती हैं। इसी मान्यता के कारण विपिन तमाम नैराश्य के बीच भी जीवन के उल्लास को चिह्नित करने में सक्षम है। विपिन को अपना प्रवक्ता बना कर मृदुला गर्ग मानो नीरजा की यांत्रिकताओं को समझा देना चाहती हैं कि 'संयुक्त स्मृति के उन अंशों को जो प्रासंगिक नहीं रहे, हम अस्वीकार नहीं करेंगे तो जड़ हो जाएँगे। सोचने-विचारने, निर्णय लेने लायक नहीं रहेंगे। ...यानी मनुष्य ही नहीं रहेंगे। मनुष्य बने रहने के लिए संयुक्त स्मृति को संपूर्ण नहीं, चयन करके ग्रहण करना होता है। ...तुम अच्छी तरह जानती हो, तुम

केवल अंडकोश या गर्भाशय नहीं हो, जो उसके सक्रिय न होने पर तुम बंजर हो जाओगी। यह सारा नाटक तुम मुझे पीड़ा पहुँचाने के लिए करती हो। पर मुझसे ज्यादा दुख तुम खुद पाती हो। यही होता है। पर-पीड़न की परिणति आत्मपीड़न में ही होती है।' (पृ. 242)

जाहिर है जैव वैज्ञानिक शोध के सहारे प्रकृति के विधान में हस्तक्षेप करना संजीव की तरह मृदुला गर्ग को भी पसंद नहीं। विज्ञान और पूँजी के गठबंधन ने उन्हें चिंतित जरूर किया है, भविष्य के प्रति अनास्थावान नहीं बनाया है। अपने-अपने स्तर पर यथार्थ का अतिक्रमण करते हुए फैंटेसी के सहारे वे एक बेहतर भविष्य की सर्जना करते हैं। उल्लेखनीय है कि बेहतर भविष्य की परिकल्पना के मूल में दोनों के पास 'अर्धनारीश्वर' का कन्सैप्ट है। संजीव की वैज्ञानिक एप्रोच और जानकारी कहीं इस अर्धनारीश्वर को जैव वैज्ञानिक तथ्यों के रूप में उकेरती है जहाँ मादा क्लाउन मछली के मरते ही सबसे सक्षम नर क्लाउन मछली सेक्स बदल कर मादा और अपनी प्रजाति का मुखिया बन जाता है (रह गईं दिशाएँ इसी पार, पृ. 276) तो कहीं समुद्री घोड़े की प्रजनन विशिष्टताओं के आधार पर वे स्त्री-पुरुष के प्रजनन संबंधों में बुनियादी परिवर्तन की फैंटेसी करते हैं- 'यह क्या, इन समुद्री घोड़े महोदय को क्या हुआ। ...क्या याचना करने आए हैं अपनी मादा के पास? पुरुष आया है नारी के पास? नहीं, भर्तृहरि आए हैं पत्नी के पास... भिक्षा? कैसी भिक्षा? ...क्या कहा, डिंब? यह कैसा दान है? ...और मादा ने दया करके डाल दिया है अपना डिंब पुरुष की झोली में। ...अब वह अपने गर्भ में अपने वीर्य से निःशेषित कर रहा है डिंब को। मातृत्व की कैसी पावन छाया है पितृत्व पर! उलट गए हैं मातृत्व और पितृत्व के पारंपरिक विधान। ...गर्भधारिणी नहीं, गर्भधारक। गर्भवती नहीं, गर्भवान।' (पृ. 273) स्त्री-पुरुष के बीच समन्वयात्मक संबंध की कामना के बावजूद मृदुला गर्ग स्त्री की पूर्णता/श्रेष्ठता को मातृत्व से अलगा कर नहीं देखतीं। स्पीशीज के विकासानुक्रम में सेक्स परिवर्तन या भूमिका परिवर्तन के उदाहरण एक सत्य हो सकते हैं, लेकिन इनसान के लिए जो प्राकृतिक नहीं, उसका आरोपण या परिकल्पना ही क्यों? औरत होने से उन्हें कोई गुरेज नहीं। 'दर्द और पीड़ा से घबरातीं तो मर्द क्या, मशीन न होना चाहतीं?' (कठगुलाब, पृ. 107)

मृदुला गर्ग का नारीवाद दो अवधारणाओं के खूँटे से बँधा है। एक, दर्जिन बीबी का जीवन दर्शन कि 'हम औरतें हैं। हमें माफ करना आना चाहिए।' दूसरा, स्मिता की आकांक्षायुक्त पीड़ा कि अमेरिका प्रवास के दौरान 'हमेशा कठगुलाब क्यों याद आता रहा मुझे?' ये दोनों अवधारणाएँ-क्षमाशीलता और सौहार्दपूर्ण तरलता-स्त्री की शक्ति और अपेक्षाओं को एक ही प्लेटफार्म पर समझने की संवेदना देती हैं। 'मैं मर्द नहीं सर्जक होना चाहती हूँ' जैसे उद्‌गार में पुरुष को अ-सृजनशील (अ-संवेदनशील) प्राणी बता कर उसकी अधिनायकवादी स्थिति के प्रति स्त्री के असंतोष को ही नहीं रखतीं, बल्कि स्त्री की संपूर्णता को कठगुलाब में प्रतीकित कर मनुष्य से प्रकृति की इस अद्‌भुत विशिष्ट संरचना को समझने और संरक्षित करने का आग्रह भी करती हैं। स्त्री गुलाब, नीम का पेड़ या किसी भी सामान्य वनस्पति की तरह फूलने, खिलने और मुरझा जाने की

समयबद्ध प्रक्रिया में नहीं बँधी है। कठगुलाब की तरह सृजन की हजारों संभावनाओं से भर कर वह खिलने को तैयार है, लेकिन समय, समाज और सहचर की संवेदनात्मक तरलता और आत्मीयता का संस्पर्श पाकर ही। हर प्रकार की दैहिक-भावनात्मक अवमानना उसकी रागात्मकता को अवरुद्ध कर उसे बंजर बना देगी, जैसे पानी की बौछार के बिना मुट्ठी की तरह कसी कलियाँ धीरे-धीरे भूरी से काली पड़ कर नष्ट हो जाती हैं, काठ में तराशे गुलाबों का अकूत सौंदर्य और खजाना संवेदनशील हाथों में नहीं जाने देतीं। बेशक मृदुला गर्ग स्त्री के उत्पीड़न की कथा कहती हैं, लेकिन उसकी यातना को प्रतिशोध या असृजनशीलता में विघटित नहीं करतीं। वे प्रकृति के साथ तादात्मीकृत हो कर स्त्री को भगिनीवाद के सूत्र में बाँध कर अपनी जातीय अस्मिता को पहचानने और बचाने का संकल्प देती हैं। इस प्रक्रिया में यकीनन हर कदम पर उसकी लड़ाई पुरुष की सत्ता और वर्चस्व से है, लेकिन लक्ष्य भी यहीं से होकर गुजरता है कि अपनी क्षमताओं और संवेदना से पुरुष के अंतर्मन की सूख कर कठोर हुई जमीन को सींच कर नम करना, उसे मनुष्य (अर्धनारीश्वर) होने का संस्कार देना। जिस सरलता से तीन साल की मेहनत के बाद गोधड़ के वंथाल क्षेत्र को स्थानीय महिलाओं की मदद से हरिया दिया है स्मिता और असीमा ने, और उस बंजर क्षेत्र के भूतल जल स्तर को बढ़ा कर पौधों की पच्चीस स्थानीय प्रजातियों के साथ व्यावसायिक लाभ हेतु लहसुन की खेती की जाने लगी है, उस सरलता के साथ पुरुष के भीतर की अधिनायकवादी मानसिकता की कठोर गाँठों को घुला नहीं पाई हैं मृदुला गर्ग। यही नहीं, उनका एकमात्र पुरुष प्रवक्ता-स्त्रीमानस से युक्त विपिन-भी अपनी तमाम कोशिशों के बाद कठगुलाब की तरह सूख गई स्त्री को तरलता की बौछार से हरिया नहीं पाया है। यह अपनी-अपनी ग्रंथियों से न उबर पाने की पीड़ा है? या पितृसत्तात्मक व्यवस्था की कंडीशनिंग और दबाव जो यथार्थ की दारुण भयावहता के आगे आकांक्षाओं को उड़ान भरने का मौका ही नहीं देते? मृदुला गर्ग का इको फैमिनिज्म प्रकृति को स्त्री की शरणस्थली भी बनाता है और कर्मस्थली भी, लेकिन पितृसत्तात्मक व्यवस्था के शिकंजे से मनुष्य की मुक्ति का प्रयास नहीं करता। शायद इसलिए कि वे मानती हैं स्त्री और प्रकृति की मुक्ति तब तक संभव नहीं जब तक अधिनायकवादी मानसिकता से मुक्त होकर स्वयं पुरुष अपने भीतर के 'मनुष्य' का साक्षात्कार न कर ले। विपिन और स्मिता दोनों को प्रकृतिरूपा यानी सत्य, संवेदनपूर्ण, समर्पित चित्रित करती हैं मृदुला गर्ग। इसलिए दोनों की मुट्ठी में कठगुलाब के बीज हैं-बंजर को हरियाने का सामर्थ्य लेकिन दोनों उन बीजों को मुट्ठी में दबाए अपने-अपने तईं अकेले हैं, रिक्त और अपूर्ण। मृदुला गर्ग इस स्थिति को उपन्यास के केंद्रीय सवाल के रूप में प्रस्तुत करती हैं कि सहचर सहमना न हो तो क्या एक की संवेदहीनता अनिवार्यतः दूसरे के भीतर जड़ता का प्रसार नहीं करेगी? इको फैमिनिज्म में प्रकृति और स्त्री (मृदुला गर्ग स्त्री को जैविक इकाई मानते हुए भी पुरुष-प्रकृति से संचालित स्त्री को अपना प्रवक्ता नहीं मानतीं। स्मिता, असीमा, मारियान, दर्जिन बीबी या नर्मदा के जरिए वे जिस स्त्री की बात करती हैं, वह इसेंशियली 'अर्धनारीश्वर' की परिकल्पना को ही जीती है। इसलिए इन स्त्रियों के समूह में विपिन भी शामिल है।)

को समरूपा मानकर उन्हें पुरुष/वर्चस्ववादी ताकतों के शोषण के खिलाफ खड़ा करने की मान्यता को नहीं स्वीकारतीं मृदुला गर्ग। वे स्वीकारती हैं कि प्रकृति बेशक अन्याय का प्रतिकार करने हेतु पूरे समाज और समय से टक्कर ले, स्त्री अपने घावों के साथ-साथ प्रकृति के घावों को सहलाने का बीड़ा भी स्वयं उठाती है। यह मिल-बाँट कर अपने दर्द को कम करने लेने का नुस्खा भी है और अपने ही सहचर या कोख से उत्पन्न संतान की ज्यादतियों का प्रायश्चित भी। लेकिन एक टीस भरी गहरी गूँज के साथ वे पाठकों और समय के लिए इस सवाल को अनुत्तरित छोड़ देती हैं कि स्त्री के घावों पर मरहम लगाने के लिए सहचर पुरुष का संवेदनात्मक हाथ कब आगे आएगा? स्त्री कभी बंजर नहीं रह सकती, लेकिन यदि उसकी कोख बंजर रह गई तो इस नुकसान की क्षतिपूर्ति आखिर कौन करेगा?

5.होना हमेशा दो तरफा होता है / मैं हूँ, इसलिए यह दुनिया है / मेरे होने से ही ये पेड़, पहाड़, नदी / ये चाँद और सितारे हैं / मैं इसमें शामिल भी हूँ / और अलग हूँ' (संजीव, रह गईं दिशाएँ इसी पार, पृ. 290)

सवाल! समस्याएँ! चुनौतियाँ! खतरे! स्खलन! विचलन!सृजन की उड़ान भरने से पहले पाँवों में बेड़ियाँ डाल लेने को आतुर रहती हैं ढेर सी अंतर्निहित दुर्बलताएँ या दुविधाएँ। बहुत आसान होता है निःसंगता का मुखौटा ओढ़ कर 'प्रीच' करना, लेकिन लेखक को तो डूब कर पार उतरना है-अकेले नहीं, अपने समय और समाज के साथ। नैरेटर की भूमिका में भले ही पाठक से मुखातिब होता है वह, लेकिन नायक बन कर उसका, वर्तमान और भविष्य का परिसंस्कार करने का दायित्व भी वही निभाता है। इसलिए तमाम आलोचनाओं और असहमतियों के बावजूद मैं नायक को उपन्यास की सफलता की एकमात्र कसौटी मानती हूँ-ऐसा नायक जो सायास गढ़ा हुआ न हो, जीवन की भट्ठी में तप कर खुद ब खुद कुंदन बन चला हो या संजीव के शब्द उधार लूँ तो एक ऐसा पगला यायावर जिसके होने में पूरे ब्रहमांड के होने का रहस्य छिपा हो-'सारे रिश्तों, नातों, स्थितियों, दिशाओं और काल को पीछे धकेलते हुए जारी है उसका यह सफर। तेरह नहीं, तेरह सौ नहीं, तेरह लाख, तेरह करोड़ नहीं, अरबों-खरबों वर्षों का प्रवासी है वह, उसके आनंद, उसके संताप, उसके संघर्ष और उसकी संप्राप्ति का वाहक।' (रह गईं दिशाएँ इसी पार, पृ. 312) दरअसल नायक लेखक की अंतर्दृष्टि और उपन्यास के क्राफ्ट की संयुक्त संतान है। इसी नायकविहीनता के कारण 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास सोद्देश्यपूर्ण शोधपरक तथ्यात्मक सामग्री के बावजूद औंधे मुँह गिर पड़ता है। वह 'मैला आँचल' (फणीश्वरनाथ रेणु) की तरह पूरे अंचल को नायक होने का श्रेय भी नहीं दे सकता क्योंकि आत्मविस्मरण और आत्मदया का शिकार मरंग गोड़ा नामक यह क्षेत्र शोषण और आँसुओं को अपनी नियति मान कर घुटा बैठा है; दिशाओं को हिला देने वाली चीत्कार नहीं बन पाया है। अलका सरावगी 'एक ब्रेक के बाद' में जरूर नायक गढ़ने की चेष्टा करती हैं, लेकिन उपन्यास के पूर्वार्ध और उत्तरार्ध में गुरु (नायक) को धुर विपरीत दिखाने का कौतुक रचने में ही वे इतनी चुक जाती हैं कि गुरु के साथ बाजार के प्रतिरोध की बड़ी लड़ाई लड़ने का धैर्य नहीं रख पातीं। लेखिका भले ही गुरु पर करिश्माई व्यक्तित्व का आरोपण करती रहें, लेकिन के.वी. शंकर अय्यर और अन्य

स्त्रियों के संपर्क में वह या तो ठस्स है या रसिया। जाहिर है दोनों ही भूमिकाएँ पाठक के साथ उसे तादात्मीकृत नहीं कर पातीं। अलका सरावगी ने गुरु को बड़े-बड़े सपने और दावे दिए है, लेकिन लड़ने का एक छोटा सा अवसर तक नहीं दिया। इसके विपरीत संजीव उन व्यक्तियों और स्थितियों में भी जद्दोजहद की संभावनाएँ ढूँढ़ लेते हैं जहाँ स्वयं पाठक और चरित्र को भी अपेक्षा नहीं होती। उदाहरण के लिए बेला, जिसे प्रतिकूल परिस्थितियों ने बेशक तिनके की तरह बहा कर नेस्तनाबूद कर देना चाहा हो, लेकिन भीतर की जिजीविषा और स्वप्नशीलता ने उसे हर समंदर तैर कर किनारे आ लगने का जीवट दिया है। मछुआरों और मत्स्य पालन उद्योग के सहकर्मियों को अपने हकों के लिए लड़ना सिखाने वाली यह नवयौवना 'एलिस ओशन फूड' जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनी से लोहा लेगी और उसे नाकों चने चबवा देगी, क्या वह स्वयं जानती थी? बेला की रणनीतियाँ जमीनी हकीकतों से उपजी हैं, इसलिए वह जानती है कि 'सिर्फ गुस्से के दम पर इस अन्याय का खात्मा नहीं किया जा सकता। हमें मुक्ति चाहिए इस दरिद्रता से, बेबसी से, हर घड़ी मुँह बाए चली आ रही असुरक्षा से, ...हमें खुद आगे बढ़ कर इसे हासिल करना है। ...जिस तरह पूरे देश के जंगल, पहाड़, नदी और जमीन और संपदा को छीन कर बेचा जा रहा है, उसी तरह हमारे आठ हजार किलोमीटर सागर तट के अधिकारों को हमसे छीन कर बड़ी कंपनियों को बेच दिया जाएगा। अब भी वक्त है, आप चेत जाइए।' (पृ. 195) बेला के प्रति संजीव के पूर्वग्रह और मोहग्रस्तता के कारण उसे लेखक द्वारा गढ़ा गया चरित्र कह कर खारिज किया जा सकता है, लेकिन जिम...? सुरक्षा, सतर्कता, समृद्धि, विलासिता और निरंकुशता की संतान जिम ने पागलपन की हद तक जाकर विवेकशील तर्काश्रिता के सहारे जीवन-सत्य पाया है; मृत्यु की अँधेरी अतल गहराइयों में डूब कर जीवन के लास्य और मोल को समझा है। अनास्था के सहारे उसने आस्था को अर्जित किया है, विज्ञान और तकनीक के सहारे भावनात्मकता की अनंत राशि को। चाक-चौबंद सुरक्षा ने उसके भीतर की असुरक्षा को गहरा कर सुरक्षा के मूल्य को समझाया है तो अपरिभाषित संबंधों में पिसते चले जाने की बाध्यता ने रिश्तों के भीतर छिपे सौंदर्य, सुरक्षा और तरलता को चीन्हने का बोध दिया है। बेशक वह असंवेदनशील वैज्ञानिक है, या इससे भी आगे भावशून्य यंत्र-मानव। लारा, कौशल्या, शाहनवाज उसके भावहीन क्रूर प्रयोगों की मिसालें हैं; और नौ माह के भ्रूण की हत्या की वीडियो रिकार्डिंग अमानुषिकता की नृशंस कथा, लेकिन कौन नहीं जाता कि संज्ञान, आत्मसाक्षात्कार और आत्मोपलब्धि का भासमान आलोक अतल गहराइयों में दबे निबिड़ अँधेरे लोकों में ही विराजता है। 'उस निर्दोष बच्ची (पूर्ण विकसित भ्रूण) की हत्या में मैंने सारे निर्दोषों की हत्याएँ देख लीं और उसकी खामोश चीख में सारी अनसुनी चीखें सुन लीं। ...मैं अपने पिता और चाचा की विरासत नहीं, प्रायश्चित हूँ।' (पृ. 311) अतिक्रमण का यह बिंदु जिम को समूची मानवता से जोड़ता है। तब उपन्यास वर्तमान विभीषिकाओं का यथार्थपरक चित्राण न रह कर एक रूपक बन जाता है-आत्मसाक्षात्कार की अंतर्यात्रा पर निकली एक विराट खोज का रूपक। इसी वजह से उपन्यास हाय-हाय करते हुए इस नोट के साथ खत्म नहीं होता कि 'यह समय देव मलाई

(यूनानी मिथक के अनुसार देव मलाई दिन के समय अपने प्रियतम को आकार में छोटा कर बटुए में बंद कर लेती है और रात के समय उसे 'बड़ा' बना कर उसके साथ रतिक्रीड़ा करती है। अगले दिन फिर वही क्रम-सुबह छोटा करके बटुए में बंद करना और रात को बड़ा बना देना। इस खींचतान में एक दिन उसके प्रियतम की मृत्यु हो जाती है और इस प्रकार लुका-छिपी में उसके हाथ कुछ भी नहीं लगता।) है', बल्कि क्रंदन करती निष्क्रिय बेचारगी को कस कर तमाचा मारता है कि 'इस समय को आदमखोर बनाया किसने?' यह सवाल दूसरों पर उँगली उठाने की प्रक्रिया में अपनी ओर उठी तीन उँगलियों की तीखी चुभन को जीवन का मकसद बनाने की प्रेरणा भी है। खुदगर्जी और हिंसा को मनुष्य की आदिम प्रवृत्ति कह कर नजरअंदाज भी किया जा सकता है, और इसे कायर मनुष्य के अराजक डर का अक्स कह कर व्यक्ति को नैतिक रूप से बलशाली बनाने का बीड़ा भी उठाया जा सकता है। जरूरत है अपने भीतर इतना साहस अर्जित करने का कि प्रचलित मान्यताओं के विपरीत जाकर निशीना शिंजो (वियतनाम को प्यार) की तरह कहा जा सके-'नागासाकी का रहमदिल मसीहा गलत था। इनसान जरूर जानते हैं कि वे क्या कर रहे हैं। मैं यह बात बखूबी समझ गया हूँ।' (पृ. 169) प्रकृति के साथ सामंजस्य बना कर चलने और प्रकृति की रक्षा के जरिए खुद अपनी रक्षा करने के सिद्धांत को सिद्ध करने के लिए संजीव (और अन्य रचनाकार भी) किसी समाजवैज्ञानिक की तरह सीधे-सीधे सलाह नहीं देते कि अपनी अनंत तृष्णाओं का दमन करके ही ऊर्जा संकट, उपभोक्तावाद, हिंसा और आतंकवाद से मुक्ति पा सकता है मनुष्य; कि निरंकुशता नहीं, सहकारिता के सहारे व्यक्ति-व्यक्ति और व्यक्ति-प्रकृति के बीच संतुलित संबंध स्थापित कर सकता है मनुष्य; कि नई पारिस्थितिकीय सभ्यता वैज्ञानिक प्रगति या तकनीकी विकास की विरोधी नहीं, बस इनके अंधाधुंध दुष्प्रयोग की विरोधी है; कि उन्नति की वर्टीकल यात्रा उसका लक्ष्य नहीं, सहअस्तित्व और सौहार्द का हॉरीजॉण्टल प्रसार उसका संकल्प है। यह सब न कहते हुए भी इससे कहीं ज्यादा कह जाते हैं संजीव। टेस्ट ट्यूब बेबी जिम उनका नायक है क्योंकि वे मानते हैं कि मनुष्य का प्रवासी स्वभाव दुर्लभ की खोज में अपनी जड़ों से दूर जाने कहा-कहाँ भटकता है। लेकिन इस भटकन में न यायावरी है, न फकीरी; है तो जय और अधिकार की आदिम लिप्सा जो कभी मूल निवासियों को उनके ही भूखंड से उजाड़ती है तो कभी अपनी संस्कृति का परचम लहरा कर मस्तिष्क को गुलाम बनाने का कुचक्र फैलाती है। दूसरों को छिन्नमूल करने की दुष्टता में स्वयं छिन्नमूल होने की कड़वी प्रतीति भी छिपी है। अधिनायकवादी लिप्सा यह बात नहीं जानती। जानते हैं संजीव और जिम, इसलिए सृष्टि को हरियाने (विकास क्रम को निरंतर उन्नत बनाए रखने) के लिए वे प्रतिकूलताओं के बीच से अपने लिए जीने के अवसर जुटाती प्रतिरोधात्मक शक्ति को अनिवार्य मानते हैं। यह प्रतिरोधात्मक शक्ति सत्ता संस्थानों, वित्तीय निगमों या वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में बनाई या खरीदी नहीं जा सकती; यह हवा-पानी-घास की तरह अनायास बहती-बढ़ती चलती है-मिट्टी के जर्रे-जर्रे में। जिम की नजर में उसके पिता, पितामह, प्रपितामह राजस्थान की तंगहाली और विभीषिकाओं

से घबरा कर कोलकाता भाग आए भगोड़े हैं जो ताउम्र दुधमुँहे बच्चे की तरह अपनी खुराक के लिए दूसरों के हाथ से कौर छीनते रहे हैं। इन भगोड़ों की तुलना में वहीं रह कर अपने और सूखी जमीन के लिए पानी का जुगाड़ करतीं अनाम औरतें कहीं अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि जल, जमीन और जीवन के साथ जुड़ कर वे प्रकृति के संग गलबहियाँ डाले है बेशक आज का हिंदी उपन्यास अपने परंपरागत स्वरूप को छोड़ कर शोध, आलोचना और पत्राकारिता की खिचड़ी से तैयार समाजशास्त्रीय अध्ययन की मुद्रा अख्तियार कर लेना चाहता है, लेकिन नायक के संग-संग उसके अंतर्मन और समय की यात्रा करते हुए जब वह अतिक्रमण की उदात्त छलाँग लगाता है, तब अनायास भावनात्मकता के सहारे अपने सपनों की पोटली खोलने लगता है। जाहिर है सपने न तर्क की कमांड मानते हैं न कार्य-कारण श्रृंखला की अनिवार्यता। वे न सीधे-सपाट एकरेखीय होते हैं, न ठोस और ठस्स। तर्कातीत कल्पनाशीलता से रचे ये सपने जिस चक्रीय लोक की सृष्टि करते हैं, वहाँ पाठक को किरदारों के रूप में अपनी ही अनुकृतियाँ मिलती हैं। उपन्यास यदि शोध-ग्रंथ नहीं, 'रचना' है तो कथारस की जमीन पर सपनों के बीज रोपना उसकी मजबूरी है। तब उपन्यास के बुनियादी क्राफ्ट में परिवर्तन कहाँ? संजीव, मृदुला गर्ग और एक सीमा तक अलका सरावगी यह समझते हैं, इसलिए मनु-श्रद्धा और नूहा की नाव की स्मृतियों के सहारे पाठक को स्व, मनुष्य, प्रकृति और पर्यावरण से जोड़ते हैं। इन चारों का परस्पर सौहार्दपूर्ण संबंध ही तो पारिस्थितिकीय संकट से जूझने का एकमात्र उपाय है।

पारिस्थितिक विमर्श से सम्बन्धित उपन्यास और उपन्यासकार

संजीव के उपन्यास 'धार' और 'सावधान नीचे आग है' में तेजाब की फैक्ट्री से निकलने वाला तेजाब पीने वाले जल में मिल जाने से वहाँ के लोग बीमार पड़ जाते हैं और कोयला खनन पर ये दोनों उपन्यास आधारित है। नासिरा शर्मा के उपन्यास 'कुइयाँजान' में जल की समस्या को चित्रित किया गया है। महुआ माजी का उपन्यास 'मरंग गोड़ा' यूरेनियम खदानों से निकलने वाले विकिरण, प्रदूषण पर आधारित है। कुसुम कुमार का 'मीठी नीम' (2012) प्रकृति को लक्षित कर लिखा गया है। राणेन्द्र का उपन्यास 'ग्लोबल गाँव के देवता' बाक्साईड खनन के दुष्परिणामों को रेखांकित करता है। संजीव कृत 'रह गई दिशाएँ इसी पार' (2011) में वे प्रकृति के साथ मानव जीवन को किस तरह वैज्ञानिकों द्वारा क्लोनिंग और जेनेटिक्स के क्षेत्र में होने वाले विकृतियों का उल्लेख किया है। अभय मिश्र के उपन्यास 'माटी मानुष चून '(2019) में प्रकाशित उपन्यास में फरक्का बाँध के टूटने से आई प्रलय का वर्णन है। आर. राजगोपाल की पुस्तक 'पर्यावरण एवं परिस्थितिकी' (2023) में पर्यावरण के मुख्य बिन्दुओं पर उल्लेख किया गया है। इस पुस्तक में पर्यावरण से संबंधित मुख्य घटनाओं का समावेश हुआ है।

- "माटी मानुष चून'- फरक्का बाँध के टूटने से आई प्रलय का वर्णन

- संजीव-'धार' 'सावधान नीचे आग है', रह गईं दिशाएँ इसी पार
- भगवती शरण मिश्र- लक्ष्मण रेखा (2008)
- नासिरा शर्मा-कुइयाँजान। (2005)
- अलका सारावगी-कलिकथा वाया बाइपास (1998)

- पर्यावरण से संबंधित प्रमुख उपन्यास

- कुसुम कुमार-मीठी नीम (2011)
- रत्नेश्वर सिंह-रेखना मेरी जान (2017)
- रत्नेश्वर-एक लड़की पानी पानी (2019)
- महुआ मांझी- मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ (2015)
- रणेन्द्र-गायब होता देश, ग्लोबल गाँव का देवता।
- अभय मिश्र-माटी मानुष चून

- पर्यावरण संतुलन समस्त जीवों के अस्तित्व केलिए महत्वपूर्ण

पृथ्वी पर्यावरणीय तत्वों से बनी है। पर्यावरण के विभिन्न घटकों और अवयवों के बीच ही जीवन का अस्तित्व निर्भर करता है। अतः पर्यावरण हमारे चारों ओर उपस्थित प्राकृतिक और अप्राकृतिक परिस्थितियों का योग है। जो मनुष्य को प्रभावित करता है और मनुष्य जिसे प्रभावित करता है। पर्यावरण संतुलन न केवल मानव जाति के लिए बल्कि संपूर्ण पृथ्वी पर पाए जाने वाले समस्त जीवों के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है। पर्यावरण प्रबंध के प्रति मानव की संवेदनशीलता को केवल वर्तमान में ही नहीं बल्कि प्राचीन समय में भी देखा जा सकता है।

- प्रकृति एवं पर्यावरण को सुरक्षित रखना हमारा दायित्व

अगर पर्यावरण के साथ हम खिलवाड़ करेंगे तो जीव-जंतु का अस्तित्व ख़त्म हो जाएगा। प्रकृति ने हमें नाना प्रकार के स्वास्थ संबंधी उपहार दिये हैं और आज हम प्रकृति का इतना दोहन कर रहे हैं कि प्राकृतिक संसाधन बहुत ही सीमित मात्रा में रह गये हैं। अगर हम अभी भी सचेत नहीं हुए तो वह दिन दूर नहीं जब सारे गोचर-अगोचर प्राणी ख़त्म हो जायेंगे। इन्सानी वजूद कायम रखने के लिए प्रकृति एवं पर्यावरण को सुरक्षित रखना जरूरी है।

- लगातार हो रहा प्रदूषण चिंता का विषय है

मनुष्य आज जिन उपलब्धियों पर गर्व कर रहा है वह उपलब्धियां उनके सामने विनाश और त्रासदी बन कर खड़ी है। आज हम ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्यायों से गुजर रहे हैं, लगातार हो रहा प्रदूषण चिंता का विषय है। उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के नाम पर जिन ऊँचाईयों को हम छू रहे हैं वह विनाश की ओर ले जा रही है।

आज मनुष्य इतना उपभोक्तावादी हो गया है कि अपने क्षणिक लाभ के लिए प्राकृतिक तत्वों का विनाश करता है। पूँजीवादी प्रणाली प्रारंभ से लेकर आज तक प्रकृति को दोहन करती आ रही है। उसे केवल मुनाफे से मतलब है मनुष्य पर उसका क्या असर हो रहा है उससे उसका कोई संबंध नहीं है। आज पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश आदि राज्यों में बड़ी-बड़ी खदान, फैक्ट्री या कारखाना स्थापित हो रहा है। इन खदानों या कारखानों से नैसर्गिक तत्वों को निकाला जाता है तब हम एक ओर भौतिक सुख-सुविधाओं का लाभ लेते हैं। इस बात पर हम विचार नहीं करते कि पर्यावरण पर क्या प्रभाव पर रहा है। भारत वर्ष के जितने भी बड़े-बड़े स्टील प्लांट हैं चाहे वह वर्णपुर स्टील प्लांट हो या दुर्गापुर स्टील प्लांट हो, इनसे विषैली गैस निकलती हैं और लोहे के छोटे-छोटे कण निकलते हैं उससे वातावरण को क्षति पहुँचता है और जो गैस निकलता है, उस गैस से वहाँ के लोगों के शारीर में जाकर अनेक तरह की बीमारियाँ पैदा होती है। उसी तरह जहाँ ओपन कोयले का खदान चल रहा है। वहाँ

- स्टील प्लांट से निकलनेवाले विषैली गैस से अनेक तरह की बीमारियाँ पैदा होती हैं

कोयला के छोटे-छोटे कण वातावरण एवं मनुष्य को नुकसान पंहुचा रहे है। उस क्षेत्र के पेड़-पौधों में वृद्धि नहीं हो पाती है और हमेशा मुरझाया रहता है एवं वहाँ के लोगों में ब्रेंकाइटीस नामक बीमारी हो जाती है। जिससे वहाँ के लोगों में साँस लेने में तकलीफ होती है। इसी तरह कल-कारखानों से निकलने वाली जहरीला पानी, हवा वातावरण को दूषित कर देती है, और वहाँ के लोग विभिन्न तरह के रोग से ग्रसित हो जाते हैं।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

आज इंसानों के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती पर्यावरण और आधुनिकीकरण में सामंजस्य बैठाना है। जंगलों की कटाई और पर्यावरण को कुचलकर हम तेज़ी से आर्थिक विकास की दौड़ में दौड़े जा रहे हैं और पारिस्थितिकी तंत्र को क्षति पहुँचाते जा रहे हैं। आज जीवन चक्र को सुरक्षित रखने के लिए पर्यावरण संतुलन बहुत ही ज़रूरी है। पर्यावरण संतुलन के लिए सरकार कई प्रभावी कदम तो उठा रही है, कई फायलें बन रही हैं और बंद हो रही हैं, करोड़ों का बजट बनाकर योजनाएँ बन तो रही हैं, कानून भी बन रहे हैं लेकिन जिस गंभीरता के साथ इन पर अमल होना चाहिए था बस वहीं ढील दी जा रही है। इससे सारे किए-कराये पर पानी फिर जाता है। मामले की नज़ाकत को समझते हुए हमें ख़ुद ही पहल करनी होगी। अपनी प्रकृति को बचाने की। स्कूल से लेकर महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में प्रकृति संरक्षण और पर्यावरण विमर्श शामिल है आखरि किस लिए? मात्र परीक्षा लिखकर पास होने और डिग्री हासिल करने के लिए? हमारी शिक्षा-नीति कुछ ऐसी हो कि पर्यावरण संरक्षण बच्चे- बच्चे के मन में समा जाए और अपने हर जन्मदिन पर एक पौधा लगाए, फूलों की बगिया सजाये और बड़ा होकर एक ज़िम्मेदार नागरिक बन सके। बच्चे ही कर्णधार हैं। अब प्रकृति का संरक्षण उनके ही हाथ में है क्योंकि जो बड़े-बड़े व्यवसायों में लग गए हैं उन्हें उनका लालच प्रकृति संरक्षण के बारे में सोचने ही नहीं देगा।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. हिंदी उपन्यासों में पारिस्थितिक विमर्श पर एक लेख लिखिए।
2. पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने वाले कार्यक्रमों पर एक टिप्पणी लिखिए।
3. पारिस्थितिक विमर्श से सम्बन्धित उपन्यासों पर एक टिप्पणी लिखिए।
4. रोहिणी अग्रवाल के व्यक्तित्व कृतित्व से परिचय।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. अलका सरावगी, 'एक ब्रेक के बाद ', राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2008
2. एदिता मोरिस, हिरोशिमा के फूल, राजकमल पेपरबैक्स, संस्करण 1984
3. एदिता मोरिस, वियतनाम को प्यार, राजकमल पेपरबैक्स, संस्करण 1984
4. महुआ माजी, 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ', राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2012
5. मृदुला गर्ग, 'कठगुलाब', भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, संस्करण 1996
6. संजीव, रह गईं दिशाएँ इसी पार, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 2011
7. कथादेश, जुलाई 2012 अंक
8. नया ज्ञानोदय, जून एवं जुलाई 2012 के अंक
9. समयांतर, फरवरी 2012 अंक

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 4

समकालीन हिंदी कहानियों में पारिस्थितिकी का स्वरूप एवं प्रमुख कहानीकार

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- साहित्यकार काशीनाथ सिंह के बारे में जानता है
- चित्रा मुद्गल से परिचित होता है
- 'जिनावर' कहानी समझता है
- जंगल जातकम कहानी और कहानीकार से परिचित होता है
- भ्रष्ट सत्ता और स्वार्थी लोगों के यथार्थ को समझता है

Background / पृष्ठभूमि

शुद्ध पर्यावरण मानव जीवन का आधार है। पर्यावरण के चारों ओर ही मानव जीवन घूमता है क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर, प्रकाश, वृक्ष सभी छोटे बड़े जीव- जन्तु पर्यावरण के अभिन्न अंग हैं। इन सभी का आपस में गहरा तालमेल है, और जब यही तालमेल गड़बड़ा जाता है तो हमारे पर्यावरण में भीषण समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। वस्तुतः आज यह ही हो रहा है। विकास मात्र को लक्ष्य करके मानव जिन प्रवृत्तियों को अंजाम दे रहा है। उससे सम्पूर्ण पारिस्थितिक सन्तुलन बिगड़ चुका है।

औद्योगीकरण और भूमण्डलीकरण के सकारात्मक पक्षों को नकार मनुष्य में उपभोग वृत्ति ज़्यादा सशक्त हुई। मनुष्य अपनी छोटी सी ज़िन्दगी के अनन्त सुख की कामना में अनन्त काल तक रहने वाली प्रकृति को बिगाड़ने पर तुला हुआ है। वह भूल चुका है कि विकास की नींव स्वस्थ पर्यावरण पर ही केन्द्रित होनी चाहिए। हमारे देश की समृद्ध प्रकृति इंसानी करतूतों से दूषित हो चुकी है। इस भीषण स्थिति को देखकर समाज के प्रति प्रतिबद्ध समकालीन हिन्दी कहानीकार काफ़ी चिन्तित हैं और अपनी लेखनी के ज़रिए पर्यावरण प्रदूषण और पर्यावरण संरक्षण के प्रति लोगों में जन जागरूकता लाना चाहते हैं। प्रस्तुत इकाई समकालीन हिन्दी कहानियों में रेखांकित पर्यावरण चिन्तन पर केन्द्रित है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

परिवेश, प्रकृति से बिलगाव, जंगल और आदमी के बीच रिश्ता, जंगल जातकम, पर्यावरण

Discussion / चर्चा

समकालीन हिन्दी कहानी में पर्यावरण विमर्श को गहराई से समझने के लिए रहीम मियाँ जी का 'अपनी माटी' में प्रकाशित लेख का पाठ करना लाभकारी होगा।

समकालीन हिन्दी कहानी में पर्यावरण विमर्श

- हमारे उपभोग की प्रवृत्ति इतनी बढ़ गई है

पर्यावरण विमर्श आज हमारे लिए अति आवश्यक विषय बन चुका है। हमारे उपभोग की प्रवृत्ति इतनी बढ़ गई है कि इसका सारा प्रभाव प्रकृति पर पड़ रहा है। जल, जंगल, वायु, जमीन, आकाश जैसे प्रकृति प्रदत्त चीजों का हमने इतना दुरूपयोग किया है कि ये सारे आज संकट में आ गए हैं।

प्रकृति का संकट में आना हमारे अस्तित्व के लिए ख़तरनाक है। आज पूरे विश्व में पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर विमर्श की आवश्यकता महसूस की जा रही है। 'डायलेक्टिक्स ऑफ़ नेचर' पुस्तक में प्रकृति से छेड़खानी के दुष्परिणाम बताते हुए फ्रेडरिक एंगेल्स कहते हैं-प्रकृति पर मनुष्य की विजय को लेकर ज्यादा खुश होने की जरूरत नहीं, क्योंकि ऐसी हर जीत हमसे अपना बदला लेती है। पहली बार तो हमें वही परिणाम मिलता है जो हमने चाहा था, लेकिन दूसरी और तीसरी दफा इसके अप्रत्याशित प्रभाव दिखाई पड़ते हैं जो पहली बार के प्रत्याशित प्रभाव का प्रायः निषेध कर देते हैं।

आज के रचनाकारों द्वारा हिन्दी साहित्य के माध्यम से प्रकृति से तादात्मय स्थापित कर प्राकृतिक विध्वंस को रोकने और प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करने की प्रेरणा देते आ रहे हैं। हिन्दी कविता की ही राह पर समकालीन कहानीकारों ने भी अपनी कहानियों के माध्यम से पर्यावरणीय चिंता के साथ-साथ चेतना भी जगाने का काम कर रहे हैं।

समकालीन कहानिकारों की कहानियों में व्यक्त पर्यावरणीय चिंता

- हमारी संस्कृति में प्रकृति हमेशा पूजनीय रही है

भारतीय संस्कृति में वन और वनस्पति का बहुत अधिक महत्व रहा है। ऋषि मुनियों का आश्रम वनों में ही होता था। मानव, वन्य जीव, प्रकृति के बीच पारस्परिक सम्बंध हुआ करता था। वेदों, उपनिषदों आदि ग्रन्थों में मनुष्य के स्वस्थ जीवन के लिए पर्यावरण को महत्व दिया गया है। हमारी संस्कृति में प्रकृति हमेशा पूजनीय रही है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'कुटज' में लिखा है-'यह धरती मेरी माता है और मैं इसका पुत्र हूँ। इसीलिए मैं सदैव इसका सम्मान करता हूँ और मेरी धरती माता के प्रति नतमस्तक हूँ।'

- बीसवीं सदी में वैज्ञानिक प्रगति के कारण प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग बढ़ा

बीसवीं सदी में जब से वैज्ञानिक प्रगति हुई है, प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग बढ़ा है। जनसंख्या वृद्धि, जंगलों की कटाई, प्रोद्योगिकी से फैलते प्रदूषण ने समस्त मानव जाति के स्वास्थ को संकट में डाल दिया है। हरीश अग्रवाल का कहना है-जब से ओज़ोन पट्टी के ह्रास के बारे में पता चला है और अविलम्ब खतरे की घंटी बजी है,

तब से विश्व की सरकारें हरकत में आ गई हैं। लोगों के सामने त्वचा कैंसर, फसलों की हानि, मोतियाबिन्द बढ़ने जैसे खतरे मंडराने लगे हैं।

नदियों पर बड़े-बड़े बाँधों के निर्माण ने नदियों की गति रोक दी है, जहाँ विकास के लिए बड़े-बड़े बाँधों का निर्माण आवश्यक है, वहीं इसके कई दुष्परिणाम देखे जा सकते हैं। जिस देश में नदी को ईश्वर मान कर पूजा जाता है, उसी देश में नदी की ऐसी दुर्गति हो रही है। कारखानों से लेकर घरों तक की सारी वर्जित चीजें नदी में ही फेंकी जाती है। बड़े- बड़े शहरों के कचरों से भरे नाले के मुहाने नदी पर ही जाकर खुलते हैं। एस. हारनोट की कहानी 'एक नदी तड़पती है' में विकास के नाम पर बाँधों के निर्माण एवं उससे लोगों के विस्थापन के साथ ही साथ एक नदी के तड़प कर मरने की व्यथा दिखाई गई है। किस प्रकार कम्पनी के बड़े बाबुओं और नेताओं ने आधुनिक यंत्रों के साथ नदी पर बेरहम आक्रमण शुरू कर दिया और नदी तड़प- तड़प कर मरने लगी। कहानी में लेखक लिखते हैं- नदी धीरे- धीरे कई मीलो तक घाटियों में जैसे स्थिर व जड़ हो गई थी। उसका स्वरूप किसी भयंकर कोबरे जैसा दिखाई देता था मानो किसी ने उसकी हत्या करके मीलों लम्बी घाटी में फेंक दिया हो। अब न पहले जैसा बहते पानी का नदी- शोर था न ही कोई हलचल।

- कारखानों से लेकर घरों तक की सारी वर्जित चीजें नदी में ही फेंकी जाती है

कहानी में सतलज नदी पर बाँध बनाने के लिए लोगों की जमीनें जबरदस्ती खरीदी जा रही थी। गाँव के गाँव विस्थापित कर दिया गया था। सुमन को अब नदी की मीठी आवाज सुनाई नहीं देती। वह देखता है कि नदी किस प्रकार घुट- घुट कर मर रही है। बाँध के वजह से नदी के स्थान पर बहुत बड़ी झील बन गई है। वहाँ कई गाँव समा चुके थे। कहानी में लेखक दिखाते हैं- नदी का सौदा हो गया था। उसका पानी बूँद- बूँद बिक गया था। उसके बहाव, उसकी निरन्तरता और उसके निर्मल जल से सनी लहरों पर कम्पनी का कब्जा हो गया था। न जाने कितनी पीढ़ियों से अपनी- अपनी जमीन पर रचे-बसे लोग, उनके घर- आँगन, बाहर-भीतर स्थापित देवताओं की छोटी-छोटी देहरियाँ, गौशालाएँ, उनकी कच्ची भीतों में सारी पशुओं की रम्भाहटें देखते ही देखते वहाँ दफन हो गई थी।

- बाँध के वजह से नदी के स्थान पर बहुत बड़ी झील बन गई

नदी का एकालाप दादी को आहत एवं परेशान करता था। दादी के लिए नदी के मर जाने की व्यथा, उसके विस्थापन से अधिक था। आज पहाड़ों एवं नदियों को हथियाने के लिए कम्पनी वालों के बीच होड़ मची है। कहानी में दादी को लगता है कि नदी उनसे अनुनय कर रही है कि उसे अमानुषिक कैद से आजाद करवा दें। दादी कहती है- कोई सुरक्षित नहीं है.... न यमुना, कावेरी, कृष्णा न गंगा, गोदावरी,गोमती और ताप्ती। न कारतोया, कोसी, चन्द्राभागा, स्पिति और न चंबल, चिनाव, झेलम और ब्राह्मपुत्रा। महानदी, शिप्रा, नर्मदा और दामोदर भी कहां जीवित रही है। वध कर दिए गए है सभी के। सरयु- सिंधु और सोन सभी घुट- घुट कर मर रही है। तड़प रही है। गायब कर दी गई है। (हारनोट 87)

- आज पहाड़ों एवं नदियों को हथियाने के लिए कम्पनी वालों के बीच होड़ मची है

नदियों पर बाँध बनने से जिस प्रकार नदियों का अस्तित्व संकट में आ गया है, पर्यावरण पर इसका गहरा प्रभाव पड़ रहा है। प्रदीप जिलवाने की कहानी 'भ्रम के बाहर' में भी लेखक ने जलपरी के माध्यम से पर्यावरणीय संकट एवं नदियों के विनाश की पीड़ा को व्यक्त किया है। जिस नदी में साल भर पानी रहता था, बाँध की वजह से अब वह बरसाती नदी बन चुकी है। नदियों पर कारखानों के रासायनिक गंदगी मिलने से नदी दूषित हो गई है। कहानी में जलपरी अपनी व्यथा सुनाते हुए कहती है- कल घूमते-घूमते नदी से आगे तक निकल गई थी, तो वहाँ पानी इतना विषैला था कि मेरी सांसे लगभग बंद हो गई थी। मैं तत्काल पलट कर भाग आई। थोड़ी दूर वापस आई तो कुछ मछलियों ने बताया कि उधर आगे जाकर बहुत सी फैक्टरियों का विषैला रसायन और अपशिष्ट नदी में सीधे जाकर मिलता है, जिससे उस तरफ़ की सारी मछलियाँ पानी में हर साल मर जाती हैं। (जिलवाने 236)

- नदियों पर कारखानों के रासायनिक गंदगी मिलने से नदी दूषित हो गई

विकास की अंधी दौड में इंसान पूरी धरती को अपने तरीके से बनाने, बिगाड़ने या संवारने में लगा हुआ है। इंसान यह भूल चुका है इस धरती पर वह अकेला नहीं है। सृष्टि पर जितना अधिकार इंसानों का है उतना ही अन्य जीवों का भी। इस बात को समझाते हुए कहानी में जलपरी कहती है- विवेक! मनुष्य को यह समझने की सख्त आवश्यकता है कि यह दुनिया सिर्फ़ उसी के लिए या उसी के होने या न होने से नहीं है। यह धरती चींटी और चिड़िया की भी उतनी ही है, जितनी मनुष्य की है। यह धरती बाघ, चीते, हिरण, हाथी, खरगोश की भी है। पेड़ों की भी है, पेड़ पर रहने वाली कीड़ों की भी है। (जिलवाने 236)

- इंसान यह भूल चुका है इस धरती पर वह अकेला नहीं है

आज शहर की नदियाँ नालों में परिवर्तित हो चुकी है। नदी के मरने, उसके तड़पने की आवाज इंसान सुन नहीं रहा है। कहानी में विवेक अपने बचपन की नदी तलाश करता है, जलपरी की तलाश करता है, किन्तु उसे कोई नहीं मिलता। वह सोचता है शायद नदी के मरते ही जलपरी भी मर गई होगी। नदी की ऐसी दशा मनुष्य के द्वारा फैलाए गए प्रदूषण की वजह से है।

- शहर की नदियाँ नालों में परिवर्तित हो चुकी है

जल, जंगल और जमीन पर जबसे कम्पनियों का अधिकार हुआ है, जल, जंगल और जमीन पर आधारित करोड़ों लोगों को अपना व्यवसाय, अपने स्थान छोड़कर विस्थापित होना पड़ रहा है। जल, जंगल और जमीन पर कम्पनीवालों के अधिकार होते ही पर्यावरण के विनाश की प्रक्रिया शुरु हो जाती है। जयश्री राय की कहानी 'खारा पानी' गोवा के समुद्री जीवन पर आधारित उन मछुआरों की कहानी है जिसके समुद्र पर अब कम्पनी वालों का अधिकार हो गया है। समुद्री मछली पर जीवन यापन करने वाले मछुआरों को विस्थापित होना पड़ रहा है। साथ ही बड़े- बड़े जहाजों के कचरे और उससे रीतते तेल की वजह से समुद्र का जल दुषित हो रहा है। समुद्री इको सिस्टम नष्ट हो रहा है। लेखिका यह दिखाती है कि समुद्र किनारे पाँच सितारा होटल बन रहा है। कंक्रीट के जंगल उभर रहे हैं, इसके लिए तटों पर बसे सैकड़ों वर्ष पुराने गाँवों को उजाड़ा जा रहा है। उन लोगों से उनकी सभ्यता, संस्कृति, आजीविका सभी छीना जा

रहा है। सैलानियों के द्वारा फैलाये गए प्रदूषण से समुद्री जीव मर रहे हैं। कहानी में रामा कहता है- कुदरत ने हमें जो दिया था, हम उसी में संतुष्ट थे। सर पर आकाश था, नीचे धरती का बिछौना..... अपने जल, जंगल, जमीन से हमें सब कुछ मिल जाता था, दो वक्त की रोटी, नींद और सुकून.... मगर अब तो सब छीन गया। न गरीबों के सर पर आकाश रहा, न पाँव के नीचे जमीन..... आजादी, उन्नति, आधुनिकता के नाम पर सब झपट ले गए।

- समुद्री इको सिस्टम नष्ट हो रहा है

समुद्र पर अधिकार के लिए सरकार द्वारा नए-नए कानून बनाये जा रहे हैं। स्थानीय लोगों को विस्थापित किया जा रहा है। दया जैसे कई मछुआरों की रोजी-रोटी छीनी जा रही है। तेल के कारोबार से समुद्र प्रदूषित हो रहा है। मछलियाँ मर रही है। लेखिका दिखाती है- सात दिनों से दरिया पानी लिसरा पड़ा है-काले-काले तेल के चकत्तों से भरा हुआ.....कहीं दूर बीच समंदर में तेल का जहाज डूबा है। हजारों लीटर तेल हर क्षण पानी में रिस रहा है, लहरों पर तैर कर किनारे तक पहुँच रहा है, जल के जीव मर रहे हैं।

- तेल के कारोबार से समुद्र प्रदूषित हो रहा है

बड़े-बड़े होटल बनाने के लिए पहाड़ों को बम से उड़ाया जा रहा है। समुद्र में कचरा भर रहा है। प्रकृति में हो रहे ऐसे विनाश को देख दया की पत्नी रो पड़ती है। वह देखती है कि किस प्रकार पहाड़ नंगा खड़ा है। पूरे पहाड़ को दैत्याकार मशीने लील रही है। पहाड़ को साफ कर बड़ी-बड़ी कॉलोनियाँ बनाई जाएंगी। बड़े-बड़े बंगले बनेंगे। कहानी में दया इसका विरोध करता है। वह कम्पनी वालों के खिलाफ आन्दोलन करता है। धरने पर बैठता है, जुलूस निकालता है। अंत में अपने गाँव, अपने दरियों को नष्ट होते देख वह चिपको आन्दोलन की तरह समुद्र से चिपक जाता है। दूसरे दिन उसकी रक्त-रंजित देह जाल से लिपटी मिलती है। किसी विशाल जहाज ने उसके शरीर के दो टुकड़े कर दिए थे।

- बड़े-बड़े होटल बनाने के लिए पहाड़ों को बम से उड़ाया जा रहा है

विकास के नाम पर जिस प्रकार हमने जंगलों का दोहन किया है, इसी का दुष्परिणाम है कि आज हमें चक्रवात, बाढ़ जैसे प्राकृतिक आपदाओं का अधिक शिकार होना पड़ रहा है। 'कजरी और एक जंगल' ऐसे ही पर्यावरण के चिंता को केन्द्रित करती कहानी है, जिसमें जंगल को देवता माना गया है। एक विश्वास है कि यह जंगल लोगों की हर परिस्थिति में जान बचाता है। कजरी अपने पिता के साथ जंगल के मुहाने पर ही एक झोंपड़ी में रहती है। उसे जंगल से बड़ा प्यार है। उसके पिता भी रोज जंगल से सुखी लकड़ियाँ, कुछ फल और फूल लेकर आते हैं। लकड़ियों को बाजार में बेचकर ही उनकी जीविका चलती है। लेकिन इस जंगल पर अवैध व्यापारियों की नजर पड़ गई है, वह जानवरों का शिकार करते हैं, पेड़ों को काटकर तश्करी करते हैं। कजरी इन लोगों को एक बार देखती है और अपने बाबा से कहती है-बाबा देखों, ये लोग जंगल के पीछे ही पड़े हैं, जब देखो तब ये आते हैं और जानवरों को मार देते हैं और फिर उनकी खाल बेच देते हैं। कभी चोरी से पेट काटकर लकड़ियाँ ले जाते हैं। (भार्गव 45)

- विकास के नाम पर हमने जंगलों का दोहन किया

ऐसे अवैध व्यापारियों के चरित्र को कजरी भलीभाँति पहचानती है। वह कहती भी है-''बाबा मैने पहले भी इनकी जिप्सी में हिरणों के कटे सिर, बाल और खून को देखा था। ये लोग बहुत ही खतरनाक है, इनमें दया तो बिल्कुल ही नहीं है।" (भार्गव 45) आज हमने यूज एन्ड थ्रों के कल्चर को अपना लिया है। प्लास्टिक के विकास ने एक ओर जहाँ हमारे जीवन को आराममय बनाया है, वहीं इसने प्रकृति के पूरे संतुलन को बिगाड़ कर रख दिया है। आज इसके इस्तेमाल पर पाबंदियाँ लगायी जा रही है। प्रकृति का यह सबसे बड़ा दुश्मन बनकर उभरा है। कहानी की कजरी को प्लास्टिक का दुर्गुण पता है। इसलिए जब वह अपने स्कूल के पास चाय की दुकान में पड़े प्लास्टिक के कप और उसके आस-पास मारी पड़ी मधुमक्खियों को देखती है तो तब वह सोचती है कि मधुमक्खियाँ ही है जो फूलों के परागकण को हर तरफ बिखेर कर नये पौधे के निर्माण में सहायता करती है, अगर सारी मधुमक्खियाँ मारी गई तब तो प्रकृति का सर्वनाश हो जाएगा, वह चाय वाले के पास जाती है और उनसे कहती है-काका देखो तो इन जूठे कप में हजारों मधुमक्खियाँ मरी पड़ी है, आप इन जूठे कपों को बाहर न फेंककर कहीं अन्दर डाले। वैसे अच्छा तो यही होगा कि आप मिट्टी के कुल्हड़ काम में लें, क्योंकि मिट्टी के कुल्हड़ आसानी से नष्ट किए जा सकते हैं और प्लास्टिक के कप तो नष्ट भी नहीं हो पाते हैं।(भार्गव 46)

- प्लास्टिक प्रकृति के पूरे संतुलन को बिगाड़ कर रख दिया है

कजरी का गाँव और आस-पास के गाँव जब पूरी तरह तूफान के चपेट में आ जाता है और कई गाँव जलमग्न हो जाता है तो कजरी ऐसे तूफान और बाढ़ का कारण भी मनुष्य को ही मानती है, वह कहती है- पता है बाबा, ये जो लोग रातों रात जंगल और पेड़ काट रहे हैं, यह सब इसी वजह से हो रहा है। तूफान तो पेड़ों के बड़े-बड़े चेहरे से ही डरता है। उसने देखा कि लो अब तो कोई खतरा ही नहीं है, क्योंकि गाँव वालों ने तो मूर्खों की तरह सारे पेड़ काट दिए है, इसीलिए उसे अब कोई नहीं रोक सकेगा। तभी तो तूफ़ान की गर्जना, बारिश और तेज हवाओं के साथ मिलकर फिर इतनी आक्रमक हो जाती है, हम चाह कर भी कुछ नहीं कर पाते हैं। पता नही ये गाँव वाले कब जंगल और पेड़ों की महत्ता को समझेंगे। (भार्गव 46-47)

लोग जंगल तो काट ही रहे हैं, विकास के नाम पर सरकार भी उद्योगों के विकास के लिए जंगलों को काटकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को जमीन मुहैया करा रही है। वह बड़े- बड़े पूँजीपतियों से नये-नये समझौते कर जंगल को कम्पनियों के नाम कर रही है। सेज के नाम पर जंगल और पहाड़ को बर्बाद किया जा रहा है, गाँव के गाँव उजाड़े जा रहे हैं, पेड़ काटे जा रहे हैं। सिमेंट और क्रेसर मशीन लगवाकर पर्यावरण नष्ट किया जा रहा है। 'मुरारी शर्मा' अपनी कहानी 'प्रेतछाया' में ऐसे ही गाँव का चित्रण करते हैं, जहाँ विकास के नाम पर जंगल का दोहन किया जाता है। देवधाम के नाम पर पहाड़ में मंदिर की स्थापना की जाती है और देखते ही देखते मंदिर के आस-पास की भूमि पूँजीपतियों के नाम हो जाती है। विधायक भी इस काम में भरपूर मदद करते हैं- विधायक के कहने पर इस सड़क को प्रधान मंत्री ग्रामीण सड़क योजना में डाल दिया गया। जंगल में ही आरा मशीनें लगाकर देवदार के पेड़ों को काट-काट कर स्लीपर बनाए गए। सैकड़ों

- विकास के नाम पर सरकार भी उद्योगों के विकास के लिए जंगलों को काटते हैं

देवदार के स्लीपर गाड़ियों में भरकर रातों-रात गायब कर दिए गए। (शर्मा 47)

कहानी में देवीराम नाम का प्रकृति प्रेमी है। उसी ने गाँव वालों की मदद से 120 बीघे जमीन में बान, देवदार और काफल के पौधे लगवाये थे। यह जंगल उसका घर है और सारे पेड़ उसके बच्चे। किन्तु, आज जिस तरह से विकास के नाम पर मंदिर ट्रस्ट और पूँजीपति वाले पेड़ों को काट रहे हैं, उनकी आँखों से आँसू की धारा बह निकलती है।-'उसने बच्चों से भी बढ़कर इन पेड़ों की देखभाल की थी। वह यह कभी बर्दास्त नहीं कर सकता था कि पैसों के लालाच में अंधा पुजारी हरे-भरे पेड़ों को काट डाले।' (शर्मा 48) कहानी में जंगल को बचाने की मुहिम चलायी जाती है। पूरे गाँव वाले देवी राम की मदद के लिए आ जाते हैं। विमला इन सबमें लीड रोल निभाती है। वह लोगों से खुले तौर पर चुनौती लेती है। देवी राम विमला से कहता है-'भगवान तेरा भला करे बेटी...इस जंगल को मैनें बच्चों की तरह पाला है। अपनी आँखों के सामने इन डाल बुटों को उजड़ते कैसे देखूँ....इन पर कुल्हाड़ी चलते मैं नहीं देख सकता।' (शर्मा 49) सरकार उस जमीन को सीमेंट फैक्टरी लगाने के लिए अनुबंध कर चुकी है। ठेकेदार को तो बस मुनाफे से मतलब है। मंदिर की आड़ में वे जंगल और पत्थर का सौदा कर रहे हैं। विमला मिटिंग में कहती है-ठेकेदार ने मंदिर की आड़ में नाले के पास क्रेशर लगा दिया है। मंगतू प्रधान की जेसीबी दिन रात जंगल में तबाही मचा रही है। सोमू कारदार के टिप्परों पर पत्थर शहर में ले जाकर बेचे जा रहे हैं। और विधायक...वो भी बंजर जमीन को सोने के भाव सीमेंट फैक्टरी को देकर करोड़ों कमाना चाहता है। (शर्मा 50)

- देवीराम एक प्रकृति प्रेमी

सबको पता है कि सीमेंट कारखाना लगता है तो फिर करीब 100 बीघे क्षेत्र में फैले गाँव का उजड़ना तय है, फिर भी कुछ लोग पैसे के लालच में अपनी जमीन बेचने के लिए राजी है। कहानी में पर्यावरणविद अपने भाषण में इसके दुष्परिणाम को बताते हुए लोगों को सचेत करते हुए कहते हैं- दूसरी ओर स्पेशल इकॉनोमिक जोन बनाने की तैयारी की जा रही है... बड़ी- बड़ी कम्पनियों के साथ जल विद्युत परियोजनाएँ और सीमेंट कारखाना लगाने के लिए धराधर एमओयू साईन किये जा रहे हैं। ये सभी कारखाने और परियोजनाएँ इन पहाड़ों के लिए ग्रहण के समान है जो यहाँ की हरियाली को चटकर जाएगी...पहाड़ खोखले हो जायेंगे। (शर्मा 51)

- विद्युत परियोजनाएँ और सीमेंट कारखाने हरियाली नष्ट को करते है

कहानी में गाँव वाले एकत्रित होकर पर्यावरण को बचाने की लड़ाई लड़ते है और कुछ हद तक पेड़ों को काटने से रोक लेते हैं, किन्तु जिसप्रकार इन पूँजीपतियों का साथ सरकार दे रही है, हम अपने पर्यावरण को कहाँ तक बचा पायेंगे, यह तो समय ही बतायेगा। 'जंगल में आतंक' कहानी में तो हरिराण मीणा जंगल की पीड़ा को जंगल की आवाज में ही व्यक्त करते हुए लिखते हैं-मेरी धरती पर जितनी वनस्पतियाँ है, इसकी सतह पर जितना जल है और इसके गर्भ में जितने भी रस व रत्न है, उन सबका अंधाधुँध दोहन किया जा रहा है। लोकतंत्र के रथ पर सवार सत्ता का जिस विकास का ध्वज उठाए पूँजी के बुल्डोजरों की फौज के साथ मुझे रौंदता हुआ बढ़ा चला आ रहा है और उसके पीछे-पीछे पृथ्वी की सारी सभ्यता एक विशालकाय रोडरोलर की मानिन्द

- गाँव वाले एकत्रित होकर पर्यावरण को बचाने की लड़ाई लड़ते है

मेरी छाती पर लुढ़क रही है। (मीणा 27)

- वैज्ञानिक उन्नति एवं जंगल के व्यवसायीकरण ने जंगल का विनाश कर डाला

प्राकृतिक संतुलन का आधार जंगल है, जंगलों के विनाश के कारण ही कहीं अतिवृष्टि तो कहीं अनावृष्टि देखी जा रही है। भूमंडलीय ताप में वृद्धि का कारण भी जंगलों का नाश होना है। वायु की शुद्धता जंगल पर निर्भर है। किन्तु आज वैज्ञानिक उन्नति एवं जंगल के व्यवसायीकरण ने जंगल का विनाश कर डाला है। कहानी में जंगल इस मानव सभ्यता से बार-बार प्रश्न कर रहा है- देखो, पूरा-का-पूरा परबत मेरी देह से उखाड़कर लारियों में भरकर कहाँ ले जाया जा रहा है? मेरी धरती के पेट को क्यों चीरा जा रहा है? मेरी अस्थियों के अंदर सुरंग कौन खोदे जा रहा है? वो देखो, दूर से नजदीक आते हुए मेरी काया को रौंदते बुलडोजर, मेरे मस्तिष्क को खोदती मशीनें, मेरी नशों को छेद-छेद कर किए जा रहे विस्फोट। मेरी छाती पर चलती हुई, समूचे बदन को रौंदती-खूँदती-खोदती- खुखेरती मेरा खून पीती हुई बढ़ी चली आ रही यह फौज किन हमलावरों व लुटेरों की है? (मीणा 31)

हम मानव को जंगल के इस सवाल का जवाब देना होगा। जिस जंगल से हमारा जीवन जुड़ा है आज उस जीवन को ऐशो- आराम देने के लिए हम जिस प्रकार जंगलों का विनाश कर रहे हैं, एक प्रकार से यह हमारा ही विनाश है।

- जंगल का बचा रहना जरूरी है

सूचना क्रांति के युग में चारों तरफ विकिरण का जाल फैला हुआ है। मोबाईल के आने से जहाँ पूरी दुनिया मुट्ठी में आ गई है, वहीं हम पूरी तरह से विकिरण के चपेट में आ गए है। आज मैदान से लेकर ऊँचे पहाड़ियों के घने जंगलों तक मोबाईल टावरों की पहुँच हो चुकी है। विकिरण के कारण जहाँ हम कई बिमारियों की चपेट में आ रहे है, वहीं कई जीवों का जीवन भी नष्ट हो चुका है। एस. आर. हारनोट की कहानी 'भागादेवी का चाय घर' वैश्वीकरण के उपरान्त फैले कम्पनियों के मायाजाल से उत्पन्न पर्यावरणीय संकट की कहानी है। कहानी कम्पनी के आने से नदी, झरने, जंगल के विनाश के साथ-साथ मोबाईल टावर के लगने से फैलने वाले विकिरण के दुष्प्रभाव को बयां करती है। कहानी में भागादेवी कम्पनी वालों का प्रतिरोध करती है। वह इस बात पर जोर देती है कि मनुष्य की रक्षा के लिए हर पशु-पक्षी का जिन्दा रहना जरूरी है। जंगल का बचा रहना जरूरी है। लेखक कहता है- जंगल का बचे रहना जरूरी है। बुरांश का खिले रहना जरूरी है। मोरों का नाचना जरूरी है। बर्फ का गिरना जरूरी है। देवदारूओं का जिन्दा रहना जरूरी है। कितनी सारी जरूरते हैं जिन्हें भागा बचाये रखना चाहती है। ये बचाव आज के क्रूर और हत्यारे होते समय से है। (हारनोट 17)

भागा देखती है कि अब कम्पनी वालों की नजर पहाड़ों पर है। वह पूरे पहाड़ पर टावर बिछाना चाहते हैं। अपने उत्पाद का विस्तार चाहते हैं। इन टावरों के विकिरण से उसके सर पर दर्द होता है। उसे महसूस होता है जैसे कुछ अदृश्य विकिरणें उस पर आक्रमण कर रही है। कम्पनी वाले भागा के शरीर पर विज्ञापन लगवाना चाहते हैं। शरीर पर छपे हर हिस्से के विज्ञापन की अलग-अलग कीमत लगाते हैं। भागा का पति

भी कम्पनी की बातों में आ जाता है। अपने शरीर को विज्ञापन के लिए बेचे जाते देख भागा बाघिन बन जाती है। लेखक लिखते हैं- भागा अपने पति की आँखों में झांकती है। वे गहरे उन्माद, जुनून और मद से भरी हुई है। पुतलियों पर उसे कम्पनी के लोग नाचते दिख रहे हैं। वे भयंकर असुरी मुखौटा पहने हुए तांडव कर रहे हैं। वे सभी को भूमंडलीय बाजारी पैरों तले रौंदते हुए उन विशाल टावरों में लगी उल्टी छतरियों में पसर रहे हैं। (हारनोट 25)

- आज हर कोई बाजारवाद के पीछे भाग रहा है

वह पति को चांटा मारती है और पूरे कम्पनी वालों का विरोध करती है। लेकिन सच तो यह है कि आज हर कोई बाजारवाद के पीछे भाग रहा है। पैसे के लालच में अपनी जमीन और घर के छतों को कम्पनी के हवाले कर देते हैं। इसकी उन्हें मोटी कीमत भी मिलती है।

पारिस्थितिकी के स्वरूप एवं संकट को चित्रित करने वाले प्रमुख कहानीकार :

काशीनाथ सिंह,बटरोही,राजेश जोशी,चित्रा मुद्गल,मृदुला गर्ग आदि

जंगलजातकम काशीनाथ सिंह

काशीनाथ सिंह

- सन् 2011 में 'रहन पर रग्घु ' उपन्यास के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाज़ा

यथार्थवादी प्रगतिशील काव्य धारा के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर है श्री काशीनाथ सिंह। उनका जन्म सन 1937 को बनारस से कुछ दूर जीयनपुर नामक गाँव में हुआ था। पैतृक गाँव में प्रारंभिक शिक्षा के बाद उच्च शिक्षा काशी हिंदू विश्वविद्यालय से प्राप्त की वहाँ से उन्होंने स्नातक, परास्नातक, पी.एच.डी. की उपाधियाँ प्राप्त कीं। वहीं के हिंदी विभाग में अध्यापन भी किया जहाँ वह हिंदी साहित्य के प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष के पद पर कार्य करते हुए सेवा निवृत्त हुए। बहुमुखी प्रतिभा संपन्न काशीनाथ सिंह ने हिंदी साहित्य की कई विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। सन् 2011 में 'रहन पर रग्घु ' उपन्यास के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाज़ा जा चुका है। उनके उपन्यास 'काशी का अस्सी' पर चंद्र प्रकाश द्विवेदी के निर्देशन में एक फीचर फिल्म भी बन चुकी है।

पमुख रचनाएँ-कहानी-संग्रह- लोग बिस्तरों पर 1968

सुबह का डर 1975

आदमीनामा 1978

नयी तारीख 1979

कल की फटेहाल कहानियाँ 1980

प्रतिनिधि कहानियाँ 1984

सदी का सबसे बड़ा आदमी 1986

10 प्रतिनिधि कहानियाँ 1994

कहनी उपखान (सम्पूर्ण कहानियाँ)-2003 (राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली से)

संकलित कहानियाँ 2008

कविता की नयी तारीख 2010

खरोंच 2014 (साहित्य भंडार, चाहचंद रोड, इलाहाबाद से)

उपन्यास- अपना मोर्चा-1972 ञ काशी का अस्सी-2002 ञ रेहन पर रग्घू-2008 महुआ चरित-2012

उपसंहार-2014

संस्मरण- आछे दिन पाछे गए-2004

घर का जोगी जोगड़ा-2006

शोध-आलोचना-हिंदी में संयुक्त क्रियाएं 1976

आलोचना भी रचना है 1996

लेखक की छेड़छाड़ 2013

नाटक- घोआस (प्रथम प्रकाशन : युयुत्सा पत्रिका, कोलकाता-1969; द्वितीय प्रकाशन : रचना प्रकाशन, इलाहाबाद-1975; तृतीय प्रकाशन : प्रारूप प्रकाशन, इलाहाबाद-1982; 2015 ई में साहित्य भंडार, चाहचंद रोड, इलाहाबाद से पुनर्प्रकाशित)[6]

साक्षात्कार- गपोड़ी से गपशप 2013 (संपादक- पल्लव)

संपादन- परिवेश (अनियतकालीन पत्रिका 1971-76)

काशी के नाम 2007 (नामवर सिंह के पत्रों का संचयन)

काशीनाथ सिंह पर केंद्रित विशिष्ट साहित्य

कथा सम्मान, समुच्चय सम्मान, शरद जोशी सम्मान,साहित्य भूषण सम्मान,भारत भारती पुरस्कार

साहित्य अकादमी पुरस्कार

"जंगल जातकम' : कथा सारांश

'जंगल जातकम' कहानी जातक कथा के रूप में एक नीति कथा की तरह हमारे सामने प्रस्तुत होती है। जहाँ जंगल है, जंगल में नाना प्रकार के वृक्ष हैं कहानीकार जब इस जंगल का वर्णन करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो वे सामाजिक समरसता से परिपूर्ण समाज को ही चित्रित कर रहे हों। उन्हीं के शब्दों में- ' आम, महुवे, बबूल, नीम, शीशम, सेमल, पलाश, चिलबिल, बरगद, बाँस और ढेर सारे पेड़ों की बस्तियाँ। इनकी अपनी दुनिया थी, अपनी मजे थे। ये लोग बारिश में नाचते थे, वसंत में गाते थे, हवा में झूमते थे और ओलो और आंधियों का एकजुट होकर सामना करते थे। इनमें आपस में न किसी तरह का झगड़ा था और ना कोई अदावत। एक दूसरे से बेहद प्यार था और मुसीबत में एक दूसरे की मदद की भावना।

- सामाजिक समरसता से परिपूर्ण समाज का चित्रण

लेकिन अचानक एक दिन जंगल की शांति भंग होती है। घमोच के आगमन से, जो बिना बैंट वाले कुल्हाड़ो की फौज के साथ घोड़ी पर बैठकर आया है और घोड़े की लगाम एक अन्य मनुष्य के हाथ में है। कहानी के सभी पेड़ अपनी ख़ुशहाल ज़िंदगी में किसी की भी दख़लंदाज़ी पसंद नहीं करते। वे सब घमोच से वहाँ से चले जाने के लिए कहते हैं लेकिन घमोच अपना पासा फ़ेकता हुआ कहता है कि हम लोग मानवता के लिए आए हैं पेड़ों ! वापस नहीं जाएंगे'।

- एक दिन जंगल की शांति भंग होती है

घमोच का यही कथन आज के सत्ता धारियों के मुखौटे को बेनकाब करता है। मानवता के हित के नाम पर सत्ताधारी सिर्फ अपनी रोटियाँ सेकते हैं। विकास के बड़े-बड़े सपने दिखा कर लोग सत्ता में बने रहना चाहते है। यहाँ फूले गाल वाला तो तोंददार घमोच लालची और भ्रष्ट सत्तातंत्र का प्रतीक है जो 'फूट डालो राज करो' की नीति अपना कर सत्ता में बने रहना चाहते हैं। प्रस्तुत कहानी सत्ताधारियों के स्वार्थी दाव पेचों का भी खुलासा करती है कितनी चिकनी-चुपड़ी बातें बनाकर अपना काम निकाला जाता है। घमोच मनुष्य की बोली कर बाँस को सिखा पढ़ा रहा है कि हम आप लोगों को तो हाथों-हाथ लेंगे। अपने घर, मकान, झोपड़े में रखेंगे। बस्तियों में बसायेंगे, कहीं भी जाएंगे तो आपको अपने साथ ले जाएंगे। यहाँ न आप लोगों को दूसरों के आगे तनकर खड़ा होने का अधिकार है और न किसी को खड़ा होने की लिए एक बीते से ज़्यादा ज़मीन दी गई है। हाँ तो बोलिए आप लोगों को हमारे कुल्हाड़ों का बेंट होना मंज़ूर है?

- सत्ताधारियों के स्वार्थी दाव पेचों का खुलासा वर्णन

जंगल की सबसे सम्मानित पेड़ आर्य को भय सताता है कि कहीं हद वंश बांस शत्रु की बातों में ना जाए क्योंकि शातिर दिमाग वाली व्यक्ति भोले भाले लोगों को ब्लाउस लाकर अपने स्वार्थ की पूर्ति करते हैं जातक कथा शैली में लिखी गई इस कहानी में एक बात और उजागर होती हैं वो ये की मनुष्य और प्रकृति की भी चिराग आत्मक संबंध है लेकिन भौतिक विकास की अंधी दौड़ में लगा हुआ मनुष्य अपने और प्रकृति के बीच के नैसर्गिक संबंध को भुला चुका है। शायद वह नहीं जानता कि जब तक प्रकृति और प्रकृति के घटकों के बीच सन्तुलन है तभी तक मानव का अस्तित्व है क्या उसे नहीं पता कि प्रकृति के पंचमहाभूतों से ही उसका अस्तित्व है। जो प्रकृति से सौहार्द स्थापित

- जातक कथा शैली में लिखी गई कहानी

करता है, उससे मदद माँगता है, वही मनुष्य है। और जो प्रकृति को धमकी देता है, उसे अपने वश में कर लेना चाहता है वो नादाँ तो अपने ही अस्तित्व को चुनौती दे रहा है।

जंगल जातकम की मूल संवेदना

निःसंदेह 'जंगल जातकम ' कहानी वर्तमान समय और समाज की विसंगतियों और विडंबनाओ का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है। एक तरफ़ यह कहानी भ्रष्ट शासन तंत्र की पोल खोलती है और दूसरी तरफ़ प्रकृति से अपना नाता तोड़ते जा रहे मानव को प्रकृति की ओर लौटने की प्रेरणा देती है।

मनुष्य और पर्यावरण का अंतःसम्बन्ध न केवल सतत विकास की प्रक्रिया में अपितु मनुष्यता को बचाए रखने का मूलभूत आधार है। इंसान अपने जीवन की कठिनाइयों और विडम्बना को सुलझाने के लिए वे प्रयास करता है जो दरअसल उसे अतिशय भौतिकतावादी और उपभोगवादी बना डालते हैं। इसलिए अक्सर वह समस्या को सुलझाने में असफल रहता है। यथार्थ से बहुत दूर वह अपने बनाए हुए मानदंडो के आधार पर जीवन को सफल बनाने की चेष्टा लगातार करता रहता है। प्रगति और विकास के नाम पर लगातार प्रकृति का दोहन करते रहना वास्तव में मनुष्य के घृणित लालच और लालसा को दर्शाता है। जिस चीज़ की मनुष्य में हमेशा कमी रहती है, वह है संतोष। प्रकृति के सानिंध्य में जीवन का समुचित रूप में फलना फूलना और अपनी अंधी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति हेतु उसका विनाश करना वास्तव में अपना ही विनाश करना है। इसकी चिंता साहित्य में भी प्रदर्शित हुई है। समय-समय पर लेखकों और कवियों ने प्रकृति के संरक्षण और मनुष्यता के विकास के अंतर्संबंधों को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है।

- प्रगति और विकास के नाम पर लगातार प्रकृति का दोहन करते हैं

'जंगलजातकम' एक सी कहानी है जिसका आधार जातक कथाएँ हैं और इस सन्दर्भ में काशीनाथ सिंह पर्यावरण नाश के दुष्परिणामों का प्रभावशाली चित्रण करते हैं। यह कहानी अपनी संरचनात्मक विशेषताओं में भले ही किसी जातक कथा से समानता रखती है, परन्तु इसकी प्रासंगिकता पूरी तरह से आधुनिक है और इसकी व्यंजना पूर्णतः आधुनिक भाव-बोध को रूपायित करती है। यह कहानी पुराने रचना रूपों का पुनर्संस्कार करके, आधुनिक सन्दर्भों के संयत उपयोग पर बल देती है। जनवादी कहानी की चर्चा जिन कहानियों में आरम्भ हुई थी, यह उन्हें में से एक है।

- पर्यावरण नाश के दुष्परिणामों का प्रभावशाली चित्रण

कहानी का केन्द्रीय भाव मनुष्य की स्वार्थपरता, अहंवादिता के कारण तेज़ी से नष्ट हो रही मानवता है, जिसका दुष्परिणाम सबसे अधिक प्रकृति को भुगतना पड़ रहा है और इसकी चपेट में मनुष्य भी आ रहा है। ये अमानवीय स्थितियाँ वास्तव में पर्यावरण के प्रति असहिष्णुता को दर्शाती हैं। पर्यावरण का नाश केवल प्रकृति का नाश नहीं अपितु सम्पूर्ण वातावरण का नाश है। जब तक पर्यावरण में समन्वय रहता है वहाँ सभी विरोधी प्रतीत होने वाले तत्त्व भी एक दूसरे के साथ मिल-जुल कर रहते हैं। जिसकी जितनी क्षमता है वह उसी मर्यादा में अपना जीवनयापन करता है। जातक कथाओं की

- जिसकी जितनी क्षमता है वह उसी मर्यादा में अपना जीवनयापन करता है

संरचनात्मक विशेषताओं को लिए हुए यह कहानी सभी पेड़-पौधों के स्वभाव के अनुसार उनमें मानवीय वृत्तियों का रूपक रचती है। इसमें सभी वृक्ष अपनी उम्र और काया के अनुसार मर्यादित जीवन व्यतीत करते हैं। प्रकृति का अनुशासित स्वरूप आधुनिक मनुष्य के लिए शिक्षा के समान है।

क्षुद्रताओं के प्रतीकात्मक रूप:- कहानी में 'धमोच' जो वास्तव में मनुष्य की क्षुद्रताओं का प्रतीक हैं। ये अंधी महत्त्वाकांक्षाएं मनुष्य को बरगलाती हैं और जिस प्रकार कहानी में भी प्रदर्शित किया गया है कि अंततः इनका परिणाम 'धमोच' के लिए ही हितकारी होता है, उसमें इंसान का भला कभी नहीं होता है। यह धमोच अपनी प्रबल महत्त्वाकांक्षा में इतना वज़नी हो गया है कि वह जिस शक्तिशाली घोड़े पर बैठा है उसी से उसका वज़न उठाया नहीं जा रहा। सांकेतिक दृष्टि से यह दृश्य वास्तव में भय की सृष्टि करता है जिससे कहानी में तो पेड़ भयभीत हो उठे हैं पर वास्तव में यह भय मनुष्यता के लिए है। 'सांस रोके पेड़ चुपचाप भय से इस आलम को देखते रहे। यह उनकी जिंदगानी का नया अनुभव था।...काले धब्बे पठार को पार कर जंगल में घुसे। गाते बजाते और काफी हहास के साथ। वे कौवे न थे। वे थे बिना बेंट के लोहे के वज़नी फल-कुल्हाड़े। उनकी काफिले के आगे दो जीव थे-एक जो तोंदार धमोच था, घोड़े पर बैठा था और उस की वजह से घोड़ा टट्टू हो गया था, यहाँ तक कि उससे चला भी नहीं जा रहा था।'इस धमोच का स्वरूप इतना विद्रूप हो चुका है कि वह मनुष्य होते हुए भी मनुष्य नहीं रह गया है। अर्थात वे इच्छाएं जो मनुष्य को मनुष्य बनाती हैं उनका अविवेकपूर्ण विस्तार उसे मनुष्यता से ही दूर कर कर देता है। काशीनाथ जी ने मनुष्य और पशु में पर्याप्त अंतर उसके विवेकशीलता के कारण ही बताया है। इसलिए वह पशु को नियंत्रित कर सकता है लेकिन यदि वह स्वयं ही पशुवत हो जाए तो? पेड़ो के पूछने पर उनके बुज़ुर्ग बरगद बताते हैं, 'सौम्य ! जो जानवर की लगाम अपने हाथ में ले, वह मनुष्य है।

- मनुष्य और पशु में पर्याप्त अंतर उसके विवेकशीलता के कारण ही बताया है

इस कहानी में जंगल एक समरस और आत्मनिर्भर समाज के प्रतीक के रूप में प्रसुत किया गया है। परन्तु विकास की एकांगी सोच के कारण सतत विकास की अवधारणा नष्ट हो जाती है। इस कहानी में मनुष्य की स्वार्थपरता और लोभ तथा अज्ञानता के विभिन्न चित्र उभर कर प्रस्तुत हुए हैं जैसे मनुष्य को कोई खरीद नहीं सकता, कोई गुलाम नहीं बना सकता आदि। बावजूद इसके पेड़ उनके स्वागत की बात सोचते है, उनके लिए कंद-मूल आदि भेंट करने की बात करते करते हैं।

- मनुष्य की स्वार्थपरता और लोभ तथा अज्ञानता के विभिन्न चित्र उभर कर प्रस्तुत हुए

बिगड़ी हुई स्थिति से भयभीत पेड़ अपनी सुरक्षा के लिए चिंतित होते हैं। उनकी चिंताओं को मानवीकरणकृत रूप में प्रस्तुत किया गया है। बिना 'बेंट' की कुल्हाड़ियाँ आत्मिक बल के अभाव की सूचक हैं, मूल्यहीनता की प्रतीक हैं, विवेकहीन शक्ति-प्रदर्शन का प्रतीक हैं अतः वे प्रत्यक्ष आक्रमण से वृक्षों से हार जाते हैं परन्तु क्षुद्र चालों के कारण पेड़ों को ध्वस्त कर पाने में सफल हो ही जाते हैं।

- बिगड़ी हुई स्थिति से भयभीत पेड़ अपनी सुरक्षा के लिए चिंतित हैं

कहानी आदमी के जंगल और प्रकृति से आत्मिक रिश्ते की बात करती है। इनका वास्तविक जंगल असली जंगल की प्राकृतिक व्यवस्था से है, वह नहीं जिसे मनुष्य

ने परिभाषित किया है। वह तो आज की कुरूपावस्था के कारण जन्मी व्यवस्था है। वास्तविक अर्थ में जंगल वह है जहाँ व्यक्ति स्वतंत्र है, उसकी स्वतंत्रता पर किसी की क्षुद्रता का शासन नहीं है। चाहे आदमी हो या पेड़ या मशीन, सभी यदि अनुशासित हों तो जंगल मंगलमय हो सकता है। परन्तु जब आदमी की क्षुद्रता पेड़ को पेड़ के खिलाफ़ और मशीन को मशीन के खिलाफ़ भड़काती है, तब केवल नाश ही नाश होता है। इस प्रकार काशीनाथ जी ने इस मर्मस्पर्शी कहानी के माध्यम से बड़े ही रोचक ढंग से एक गंभीर विषय को अंजाम दिया है जो निश्चित ही पर्यावरण के सन्दर्भों को रूपायित करने में मील का पत्थर है।

- "जंगलजातकम' आदमी के जंगल और प्रकृति से आत्मिक रिश्ते की बात करती है

चित्रा मुदगल

जंगल

आधुनिक हिंदी कथा-साहित्य की बहुचर्चित लेखिका चित्रा मुद्गल का जन्म 10 दिसंबर 1944 को चेन्नई, तमिलनाडु में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा पैतृक गाँव उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में स्थित निहाली खेड़ा और उच्च शिक्षा मुंबई विश्वविद्यालय में हुई। चित्रा जी पहली कहानी स्त्री-पुरुष संबंधों पर थी जो 1955 में प्रकाशित हुई। उनके अब तक तेरह कहानी संग्रह, तीन उपन्यास, तीन बाल उपन्यास, चार बाल कथा संग्रह, पांच संपादित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। बहुचर्चित उपन्यास 'आवां' के लिए उन्हें व्यास सम्मान से नवाजा जा चुका है।

मुख्य कृतियाँ :

उपन्यास : एक ज़मीन अपनी, आवां, गिलिगडु, पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा

कहानी संग्रह : भूख, जहर ठहरा हुआ, लाक्षागृह, अपनी वापसी, इस हमाम में, ग्यारह लंबी कहानियाँ, जिनावर, लपटें, जगदंबा बाबू गाँव आ रहे हैं, मामला आगे बढ़ेगा अभी, केंचुल, आदि-अनादि

लघुकला संकलन : बयान

कथात्मक रिपोर्ताज : तहकानों मे बंद

लेख : बयार उनकी मुट्ठी में

बाल उपन्यास : जीवक, माधवी कन्नगी, मणिमेख

नवसाक्षरों के लिए : जंगल

बालकथा संग्रह : दूर के ढोल, सूझ बूझ, देश-देश की लोक कथाएँ

नाट्य रूपांतर : पंच परमेश्वर तथा अन्य नाटक, सद्गगति तथा अन्य नाटक, बूढ़ी काकी तथा अन्य नाटक

सम्मान :व्यास सम्मान (आवाँ)

इंदु शर्मा कथा सम्मान, साहित्य भूषण, वीर सिंह देव सम्मान

साहित्य अकादमी (पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा के लिए)

जिनावर- कथासार- चित्रा मुदगल ने 'जिनावर ' कहानी में मानव और जानवर के बीच के सम्बन्ध को संवेदनात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रकृति और जानवर मानव जीवन की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इनका उपयोग किए बिना मनुष्य जीवित ही नहीं रह सकता लेकिन फिर भी मानव प्रकृति और जानवर दोनों का ही शोषण करता है इसी हकीकत को उजागर करना लेखिका का उद्देश्य है प्रस्तुत कहानी घोड़ी शर्वरीऔर मालिक असलम के बीच के रिश्ते का अनोखा दस्तावेज है। रोजी-रोटी के लिए असलम तांगा चलता था। आँखें खोलते ही तांगा देखा लोरी की जगह घोड़े की हिनहिनाहट सुनी। उन्हीं की टांगों के बीच गुल्ली डंडा खेल कर बड़ा हुआ। अब्बा तांगा चलाते थे। अब्बा के अब्बू तांगा चलाते थे। आगरे की तंग गलियों में। फिर अब्बा परिवार समेत दिल्ली आ गए। पुश्तैनी धंधे के रूप में असलम भी तांगा चलाने लगा।

- घोड़ी शर्वरीऔर मालिक असलम के बीच के रिश्ते का अनोखा दस्तावेज

सब कुछ ठीक-ठाक ही चल रहा था कि अचानक सरवरी रोग से पीड़ित हो जाती है। ज़मीन पर औंधी पड़ी रहती सरवरी। जैसे-तैसे असलम पुचकार कर कर खड़ा करता लेकिन फिर से वह घुटने मोड़ कर लेट जाती। कई तरह के नुस्खे अपनाये। लेकिन सब बे असर रहे। जुम्मन हकीम के पाँव पकड़ लिए कि कोई भी उपाय करे। बस उसकी सरवरी को चंगी कर दे। रोजी-रोटी है। उठकर खड़ी नहीं होगी तो उसके लौंडे लौंडियाँ भूखे मर जाएँगे। जुम्मन मियाँ ने ढांढस बंधाया और उम्मीद दी कि वह धैर्य रखे। मर्ज उनकी पकड़ में आ गया है। ख़ुदा ने चाहा तो हफ्ते भर में उठ खड़ी होगी उसकी सरवरी जुम्मन मियाँ की जड़ी-बूटी के काढ़े पिलाते हफ़्ता और निकल गया। सरवरी के टखनों के छाले पीप उगलने लगे। लक्षण शुभ नहीं थे। बगल के करीम ने उसे सलाह दी की नीम हकीम के चक्कर में पड़ा हुआ वह समय और पैसा नष्ट न करे। जुम्मन मियां के बस का नहीं सरवरी का रोग। फ़ौरन जाकर किसी जानवर के डॉक्टर को दिखाने जा। पैसा ज़रूर खर्च होगा तगड़ा। मगर एक दो सुई लगाते ही शर्तिया उठ खड़ी होगी सरवरी। जुबेदा की झांझें ले जाकर सुनार को बेचकर डॉक्टर की फीस भरी और सुइयाँ लगवाईं सरवरी को। असर ना होते देख, चौथे रोज़ डॉक्टर ने हाथ झाड़ लिए कहा कि सरवरी का रोग बिगड़ गया है। सरवरी को उनके पास पहले ना लाकर उसने भयंकर

भूल कर दी। अब दवा नहीं, कोई चमत्कार ही उसे बचा सकता है। असलम की पहली बीवी पाँच बच्चों को छोड़कर चली गई। दूसरी जुबेदा तीन बच्चे हुए। कुल मिलाकर 8 बच्चे और वे दो लोग। इतने लोगों का पेट पालने का जिम्मा सरवरी का था उसी की मेहनत से असलम के घर का चूल्हा जलता था। एकमात्र कमाई का ज़रिया थी सरवरी। कर्ज़ लेकर अब तक जैसे हो सका इलाज कराया। अब डॉक्टर ने भी जवाब दे दिया। भविष्य अंधकार में दिखने लगा।

- अब दवा नहीं, कोई चमत्कार ही उसे बचा सकता है

असलम की विवशता थी कि एक दिन सरवरी को इस स्थिति में उसे तांगे में लगा देना पड़ता है उसकी टांगें कांपती थीं, आंखों से नदी की धारा बहती थी। असलम सवारी को लिए निकल पड़ता है। इसी बीच तांगा कार से टकरा जाता है, जिससे सरवरी चोटिल हो जाती है और सड़क पर गिर जाती है। कोतवाली बगल में ही थी। मामाला वहाँ तक पहुँच जाता है। रपट लिखवा ली जाती है। दुर्घटना में सरवरी के प्राण पखेरू उड़ जाते हैं। जो लड़की कार चला रही थी उसके पिता ने आकर मामले को रफा-दफा करने के लिए दो हज़ार बतौर हर्जाना दे दिये जिससे कि कोर्ट कचहरी के चक्कर न लगाने पड़े। असलम लड़की के विरुद्ध लिखायी गयी रिपोर्ट वापस ले लेता है।। रात में जब असलम सो रहा होता है तब उसे सरवरी के हिनहिनाने का स्वर सुनाई पड़ता है। वह किवाड़ खोलकर बाहर देखता है लेकिन वहाँ भला सरवरी हो भी कैसे सकती है। वह तो सरवरी को मुर्दा, बेजान, लावारिस छोड़ आया था। नगरपालिका की पशुओं की लाश ढोने वाली गाड़ी के भरोसे। कितनी तेजी से वह तांगा लेकर भागा था घटनास्थल से . . . . . .

- दुर्घटना में सरवरी के प्राण पखेरू उड़ जाते हैं

वह तेज़ी से बदहवास कोठरी में लौटकर रोने लगता है। जुबैदा और बच्चे जाग जाते हैं तब जुबैदा पूछती है कहीं दर्द हो रहा है या सरवरी का गम सता रहा है तो सब करो। एक न एक दिन उसे हमसे जुदा होना ही था। कहानी के इस भाग में सभी पाठकों को बड़ा दुख होता है लेकिन असलम जो कहता है उस जवाब को सुनकर हम सभी का दिल बैठ जाता है कि हे प्रभु आज इंसान इतना गिर चुका है कि जानवरों से भी गया गुज़रा है। मानवीय संवेदनाएं उसकी सब मर चुकी हैं। इंसान भला इतना स्वार्थी भी कैसे हो सकता है असलम जुबेदा से कहता है-नहीं वह जुदा नहीं हुई उसके जुदा होने से पहले ही मैंने उसे मार दिया मैंने उसकी मौत से सौदा कर लिया बीवी ! . . . . . जानबूझ कर उसे गाड़ी से भेड़ दिया . . . यही सोचकर अपनी मौत तो वह मरेगी ही आगे-पीछे . . . किसी गाड़ी से भेड़ दूंगा तो वह मरते मरते अपनी कीमत अदा कर जायेगी . . . . ये नोट, नोट नहीं मेरी सरवरी की बोटियाँ हैं, बोटियाँ बीवी!

- मानवीय संवेदनाएं सब मर चुकी हैं

कहानी यहाँ समाप्त हो जाती है और हमारे मन मस्तिष्क में सवाल खड़ा कर देती है कि आखरि यहाँ जानवर कौन है-असलम जिसने अपनी मानवीय संवेदनाओं का गला घोंट दिया या सरवरी जो मरते-मरते अपने मालिक के लिए अपनी कीमत भी दे गई।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

आज अपने भोग एव सुख की प्राप्ति के लिए हम प्रकृति के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं, इसका खामियाजा हमें तो भुगतना पड़ेगा ही, हमारी भावी पीढ़ी इससे और ज्यादा नुकसान झेलेगी। प्रकृति अपना बदली जरूर लेगी। आज असमय बारिस, बाढ़, भूकम्प, सुनामी केवल प्राकृतिक घटना न होकर मनुष्य सभ्यता के लिए भारी चेतावनी है। अगर आज भी हम नहीं सुधरे तो हमें भविष्य में अपना सब कुछ खोने के लिए तैयार रहना होगा। आज के कुछ रचनाकार अपने इस दायित्व को समझ रहे हैं और अपनी कहानियों के माध्यम से पर्यावरण चिंता को अभिव्यक्ति दे रहे हैं, किन्तु सच तो यह है कि अभी भी पर्यावरणीय समस्या केवल समस्या बनी हुई है, विमर्श का रूप नहीं ले पाया है। अतः जरूरत है कि पर्यावरणीय विमर्श पर अधिक से अधिक रचनाएँ आए ताकि सामाजिक क्रांति लाई जा सके।

काशीनाथ सिंह की कहानी 'जंगल जातकम' समय के परिवेश और प्रकृति से विलगाव की कहानी की यथार्थ प्रस्तुति है। एक जंगल के माध्यम से कहानीकार जंगल और मनुष्य के बीच के रिश्ते के ताने-बाने को बुनते हैं। पर्यावरण पर किस प्रकार मनुष्य अपनी कुदृष्टि लगाए हुए हैं इसका पर्दाफाश लेखक इस कहानी के माध्यम से करते हैं। काशीनाथ सिंह अपने समय के चितेरे कहानीकार हैं। 'जंगलजातकम' के माध्यम से एक ओर तो वह पर्यावरण बचाने की बात करते हैं तो दूसरी ओर वह यह भी बता देना चाहते हैं कि व्यक्ति अपने सुख के लिए किस प्रकार सामान्य व्यक्ति को बहला फुसलाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। वहीं चित्रा मुद्गल की जानवर कहानी पाठकों के मन में अनगिनत सवाल छोड़ जाती है कि कैसे एक बेज़ुबान जानवर अपने मालिक के साथ छल नहीं करता, अपने मालिक को धोखा नहीं देता लेकिन वह मालिक इंसान होकर भी उसके साथ छल करता है धोखा करता है और उसको मार डालता है। यह क्या स्थिति है कि जानवर जानवर होकर गिरा नहीं लेकिन इंसान इंसानियत से गिर गया है। शायद असलम का अपराध बोध भी यहाँ हमें दिखलाई पड़ता है जब वह कहता है कि यह नोट, नोट नहीं मेरी सरवरी की बेटियां हैं, बोटियाँ बीवी . . .। यहाँ असलम का दर्द दर्द बनकर ही रह जाता है क्योंकि उसकी गरीबी और लाचारी ने उसे इस तरह अपराध करने को विवश कर दिया। जिस सरवरी को वह दिलो जान से चाहता था उसी सरवरी को अपनी ज़रूरत के लिए गाड़ी से भिड़ा दिया क्योंकि वह जानता था कि आज नहीं तो कल यह मार ही जाएगी, इस दुर्घटना से मारेगी तो अपनी कीमत भी अदा करती जाएगी। भले ही असलम की। निःसहाय अवस्था हम देखते हैं लेकिन उसकी इतनी भी क्या मजबूरी रही कि अपनी सरवरी को लावारिस सड़क पर छोड़ आया। कम से कम वह उसे दफ़नाने का बंदोबस्त तो करवा ही सकता था। मानव जीवन एवं पर्यावरण एक दूसरे के पर्याय हैं। मानव का अस्तित्व पयावरण से है वहीं मानव द्वारा निरन्तर पर्यावरण का विनाश हो रहा है। इसीलिए हम सभी को भविष्य की चिंता सताने लगी है। अपने सहजीवियों के प्रति प्रतिबद्ध कहानीकार अपनी कहानियों के माध्यम से प्रकृति संरक्षण की अलख जगाना चाहते हैं। हिन्दी के इन कहानीकारों ने पर्यावरण के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी का निर्वहन करते हुए लगातर समाज को इस ज्वलंत समस्या के बारे में जागरूक करने का प्रयास दिया। और यती प्रयास अनवरत जाती है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. काशीनाथ सिंह के व्यक्तित्व-कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
2. चित्रा मुद्गल के व्यक्तित्व-कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
3. समकालीन हिंदी कहानियों में पारिस्थितिकी के स्वरूप पर एक लेख लिखिए।
4. पारिस्थितिकी के संकट को चित्रित करने वाले कहानीकारों के नाम लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम - सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य - डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. कुटज. राजकमल प्रकाशन, अंक-9
2. शर्मा, मुरारी. 'प्रेतछाया', पहाड़ पर धूप. अंतिका प्रकाशन, 2015.
3. हारनोट. एस. आर. 'भागादेवी का चाय घर'. किलें. वाणी प्रकाशन, 2019.
4. मीणा, हरिराम. 'जंगल में आतंक'. माँदर पर थाप. सं. अजय मेहताब. अनुज्ञा. 2019.
5. एंजेल्स, फ्रेडरिक. 'डायलेक्टिक्स ऑफ नेचर', समयांतर. फरवरी, 2012.
6. अग्रवाल, हरिश. 'ओजोन हॉल की हकीकत', जनसत्ता. 26 अगस्त, 2007.
7. भार्गव, डॉ. रश्मि. 'कजरी और एक जंगल', मधुमती. मार्च-अप्रैल-2012.
8. हारनोट, एस. 'एक नदी तड़फती है'. पहल. अंक-122, जून-जुलाई, 2020.

9. जिलवाने, प्रदीप. 'भ्रम के बाहर'. पहल. अंक-122, जून-जुलाई, 2020.

10. राय, जयश्री. 'खारा पानी'

11. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी-डॉ सुजाता बिष्ट।

12. पर्यावरण अध्ययन-भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।

13. जल और पर्यावरण-राजीव रंजन प्रसाद।

14. पर्यावरण और प्रकृति का संकट-गोविन्द चातक।

15. कवि जो विकास है मनुष्य का-ए. अरविन्दाक्षन।

16. अरुण कमल : एक मूल्यांकन- डॉ. संध्या मेनन।

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

BLOCK 04

समकालीन हिन्दी कविता में पारिस्थितिक बोध

Block Content

Unit 1: समकालीन हिंदी कविता और पर्यावरण चिंतन

Unit 2 : गंगा को प्यार - अरुण कमल

Unit 3: पानी की प्रार्थना - केदारनाथ सिंह

Unit 4: प्यासा कुआँ - ज्ञानेन्द्रपति

Unit 5: उतनी दूर मत ब्याहना बाबा! - निर्मला पुतुल

Unit 6: विस्थापन - स्वप्निल श्रीवास्तव

Unit 7: धरती - नागार्जुन

इकाई 1

समकालीन हिंदी कविता और पर्यावरण चिंतन

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 'धरती' कविता से परिचय मिलता है
- नागार्जुन के व्यक्तित्व कृतित्व से परिचय होता है
- धरती कविता में अभिव्यक्त संवेदना जानता है
- धरती और प्रकृति के संरक्षण की प्रेरणा मिलता है

Background / पृष्ठभूमि

पर्यावरण विभिन्न भौतिक, रासायनिक और जैविक घटकों से निर्मित है जो एक दूसरे के साथ और मानवीय गतिविधियों के साथ परस्पर क्रिया करते हैं। पर्यावरण का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। पर्यावरण के बिना पृथ्वी पर मानव जीवन की कल्पना कर पाना भी सम्भव नहीं है।

समकालीन कविता मनुष्यों और पर्यावरण का अध्ययन करती है। यह अन्वेषण करती है कि पर्यावरण मानवीय व्यवहारों तथा अनुभवों को कैसे प्रभावित करता है और मनुष्य पर्यावरण को कैसे प्रभावित करता है। यह क्षेत्र व्यक्तियों और उनके परिवेश के बीच संबंध पर केन्द्रित है। यह ध्वनि प्रदूषण, शहरी गिरावट, जनसंख्या घनत्व और भीड़भाड़ आदि जैसी चिंताओं से संबंधित है।

समकालीन कवियों ने पर्यावरण से जुड़ी समस्याओं का कई प्रकार से चिंतन प्रस्तुत किया है। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, बढ़ती जनसंख्या, बढ़ता तापमान, कृषि में रासायनिक दुर्बल पदार्थों का अनियंत्रित प्रयोग आदि अनेक कारणों से पर्यावरण दुर्बल होता जा रहा है। समकालीन कवियों ने जमीन, जल, जंगल और पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाले कारणों और समस्याओं को अपनी कविता में उभारा है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

पर्यावरण चिंतन, ग्लोबल वार्मिंग, प्रकृति संरक्षण, पारिस्थितिक सौन्दर्य, प्राकृतिक संसाधन।

Discussion / चर्चा

4.1.1 समकालीन हिंदी कविता और पर्यावरण चिंतन

हमारी पौराणिक मान्यताओं ने पीपल, आम, तुलसी, बेलपत्र, गोवर्धन पर्वत, गंगा, जमुना, पंपा जैसी पवित्र नदियाँ यानी कि प्रकृति के जितने भी घटक हैं उन्हें धार्मिक कृत्य से जोड़ा और उन्हें इसी बहाने संरक्षित रखने का प्रयास किया।

इस तरह प्रकृति के विभिन्न रूपों में ईश्वर की व्याप्ति उनका संरक्षण करती आई है। प्रकृति के कण - कण के साथ एकात्मकता का अनुभव करना तथा उसे यथासंभव कम से कम हानि पहुँचाना भारतीय जीवन का आदर्श रहा है। पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण संतुलन के प्रति इतनी उदात्त कल्पना और विचारों को प्रतिस्थापित करना वाकई काबिल-ए-तारीफ़ है। धन्य है उन ऋषियों - मुनियों की पारदर्शिता जिन्होंने धर्म का सहारा लेकर, भगवान का डर पैदा कर पाप-पुण्य, स्वर्ग - नरक जैसे शब्दों का सहारा लेकर इंसान को प्रकृति के साथ खिलवाड़ करने से रोका। लेकिन आज के संदर्भ में यदि देखा जाए तो यह सारी बातें भी निष्फल जान पड़ती हैं क्योंकि जो व्यक्ति भय - भक्ति के साथ प्रकृति की आराधना किया करता था, आज वही इंसान अपनी ज़रूरत को पूरा करने के लिए उसे एक भोग वस्तु के रूप में देख रहा है।

- आज इंसान प्रकृति को अपनी ज़रूरत को पूरा करने के लिए एक भोग वस्तु के रूप में देखता है।

विज्ञान के माध्यम से प्रकृति के रहस्यों को जानने में उसे कुछ हद तक कामयाबी मिली तो वह एक ग़लतफ़हमी का शिकार बन गया कि प्रकृति के सभी के संसाधन सिर्फ़ और सिर्फ़ मनुष्य के उपभोग के लिए हैं। बड़े अफ़सोस की बात है कि आज मानव ने अपने और प्रकृति के बीच के रागात्मक संबंध को भुला दिया है उसे इस बात का अंदाज़ा भी नहीं है कि वह अपनी ही नींव को खोखला कर औद्योगिक और तकनीकी विकास की ऊँचाइयों पर चढ़ रहा है और इसका अंजाम हम सभी के सामने है। पर्यावरण ज़हरीला हो गया है। कोरोना और ओमिक्रोन के कारण हर इंसान मुँह छुपाए घूमता रहा जैसे कि उसने कोई गुनाह कर दिया हो। उसे कमरों में बंद रहना पड़ा और वहीं सारे पशु-पक्षी खुली हवा में सांस ले रहे थे। आज इंसानों ने प्रकृति के सभी तत्वों क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर सभी को दूषित कर डाला है।

- पर्यावरण ज़हरीला हो गया है

समकालीन कविता में यही पारिस्थितिकी चिंता कई रूपों में प्रतिबिंबित हुई है - कहीं बड़ी-बड़ी फैक्ट्रियों से निकलने वाला काला धुआँ और मलिन जल है, तो कहीं पेड़ों की कटाई से लोग चिंतित हैं, कहीं वंशनाश की कगार तक पहुँचे जानवरों और पक्षियों का आर्तनाद सुनाई दे रहा है, कहीं कीटनाशकों में नहाई सब्ज़ियाँ और फल हैं, तो कहीं कारखाने के धुएं में सांस लेती आम जनता, जो कि पूँजीपतियों और उद्योगपतियों की मेहरबानी का नतीजा है। आज सहज, संतुलित वातावरण सर्वत्र नष्ट हो गया है। यही दूषित पर्यावरण ही समकालीन कवियों की चिंता का विषय बन गया है। इस गंभीर समस्या के प्रति जन - जागृति लाना ही इन कवियों का उद्देश्य रहा है।

- दूषित पर्यावरण समकालीन कवियों की चिंता का विषय बन गया

4.1.1.1 समकालीन कविता में पारिस्थितिक शोषण के विभिन्न आयाम

समकालीन कविता में पारिस्थितिक शोषण के कई आयाम हैं, जिनमें प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन, प्रदूषण, और जलवायु परिवर्तन शामिल हैं। कविताएँ प्रकृति के प्रति मानव के अमानवीय व्यवहार, पर्यावरण पर इसके प्रभाव, और पारिस्थितिक संकटों के बारे में चिंता व्यक्त करती हैं। पारिस्थितिक शोषण के विभिन्न आयाम निम्न लिखित हैं :

1. प्रकृति का शोषण

समकालीन कविताएँ वनों की कटाई, नदियों और जलस्रोतों का दूषित होना, और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का दोहन जैसी गतिविधियों को दर्शाती हैं। आज हमारी भूमि भी प्रदूषित हो चुकी है। स्वप्निल श्रीवास्तव भूमि को बचाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हैं-

ईश्वर मैं तुम्हारा सबसे छोटा बेटा
हृदय की अनंत गहराइयों के साथ
इस पृथ्वी के मंगल के लिए कर रहा
है प्रार्थना

- पृथ्वी पर दुर्लभ होते जा रहे जानवरों और अन्य जीव जंतुओं को लेकर कवि चिंतित हैं

पृथ्वी पर दुर्लभ होते जा रहे जानवरों और अन्य जीव जंतुओं को लेकर भी कवि चिंतित दिखलाई पड़ते हैं। हाथी एक ऐसा जानवर है जिसकी हत्या बड़े पैमाने पर हो रही है। भले ही आम जनता के लिए हाथी एक कौतुक वस्तु हो लेकिन व्यापारियों के लिए इसका सबसे बड़ा आकर्षण उसके दाँत हैं। दाँत से मुनाफ़ा कमाने वालों द्वारा हाथियों की हत्या हो रही है। इसके वंशनाश की सम्भावना से कवि स्वप्निल श्रीवास्तव काफ़ी चिन्तित दिखलाई पड़ते हैं -

'इक्कीसवीं शताब्दी में क्या वे
जीवित रहेंगे
या उनके सूंड झड़ जाएँगे
या इस नाम का कोई जानवर
नहीं बचा रहेगा पृथ्वी पर
या उसका नाम बदल जायेगा
या वे चिड़िया घर की वस्तु बन जाएँगे' (मुझे दूसरी पृथ्वी चाहिए)

2. प्रदूषण

- गंगा नदी के प्रदूषण का मतलब हमारे संस्कार का प्रदूषण है

कविताएँ वायु, जल, और मृदा प्रदूषण जैसे मुद्दों पर प्रकाश डालती हैं और उनके मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों को उजागर करती हैं। गंगा भारत का संस्कार है। वह भारतीय जीवन के रग - रग में व्याप्त है। उस गंगा नदी के प्रदूषण का मतलब हमारे संस्कार का प्रदूषण है। नदियों के संदर्भ में पारिस्थितिक समस्या पर सबसे ज़्यादा हिंदी के समकालीन कवि ज्ञानेंद्रपति ने लिखा है। उनका काव्य संग्रह 'गंगा तट' इस

दृष्टि से विचारणीय है। 'गंगा स्नान' कविता में एक बूढी माँ का विषाक्त होती गंगा में पुण्य की खोज में उतरने का दृश्य है। यहाँ जीवन के अन्तिम छोर पर पहुँची बूढ़ी माँ एवं गंगा में द्वैत की भावना नहीं है। नदी का जल तल तक पहुँच गया है, बूढ़ी माता भी मृत्यु की देहली पर खड़ी है। दोनों के जीवन में समानता है। दोनों दूर से आई हुई हैं। बूढ़ी माँ के लिए गंगा जीवन दायिनी है। लेकिन नए आधुनिक मानव के लिए यही नदी कूड़े-करकट का ढेर बन चुकी है-

तुम क्या जानो
क्योंकि तुम्हारे लिए नहीं बची है कोई पवित्र नदी
तुम्हारी सारी नदियाँ अपवित्र हो गई हैं -विषाक्त
हाँ तुम क्या जानो
तमगों - सजी याकि बचत खातों के पासबुकों से भरी
उपरली जेब वाली होकर भी छूँछी छाती वाले तुम।

3. जलवायु परिवर्तन

समकालीन कविताएँ जलवायु परिवर्तन के प्रभावों, जैसे कि बाढ़, सूखा, और तापमान में वृद्धि को चित्रित करती हैं।नदी हमेशा जीवन दायक होती है वह कभी भी जीवन का नाश नहीं करती लेकिन आज के हालात तो बड़े ही नाज़ुक हैं। अमृत तुल्य जल आज विषाक्त हो चुका है-

और कल की उसकी अमृत बूंद आज
चंगे को बीमार करने वाली
और बीमार के लिए तो
सचमुच मोक्षदा साबित होने वाली अकाल ही

- भारतीय नदियों की शोचनीय अवस्था का चित्रण

'गंगातट' काव्य संग्रह के ज़रिए ज्ञानेंद्रपति ने भारतीय नदियों की शोचनीय अवस्था हमारे सामने प्रस्तुत की है। 'पॉलिथिन' शीर्षक कविता में वे इस बात को सूचित करते हैं कि 'पॉलिथिन' की मुट्ठी में आज बाज़ार बंद हो चुका है। इस धरती पर सर्वत्र पॉलिथिन भरी पड़ी है। इससे गंगा भी मुक्त नहीं है-

शहरों की नालियों और कारखानों की प्रणालियों की उगल से

करिखाई है गंगा
विषपाई है गंगा
दुखियारी माई है गंगा
उस निर्भार पॉलिथिन के पड़ते ही
भारी हो जाता है उसका जी

आज पर्यावरण, मानव- मूल्य, जीवन का संतुलन, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, नैसर्गिक सौंदर्य को बचाने के लिए कई आंदोलन और अभियान चलाये जाते हैं, राष्ट्रीय एवं

अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों, सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है।

4. प्रकृति के प्रति मानव का अमानवीय व्यवहार:

कविताएँ मानव के अमानवीय व्यवहार और प्रकृति के प्रति उदासीनता पर प्रकाश डालती हैं, जिससे पर्यावरण को नुकसान होता है। 'नदी और साबुन' कविता में कवि दूषित हो चुकी नदी के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करते हैं-

बाघों के जुठराने से तो
कभी दूषित नहीं हुआ तुम्हारा जल
ना कछुआ की दृढ़ पीठों से उलीचा जाकर भी कम हुआ
हाथियों की जल क्रीड़ाओं को भी तुम सहती रही सानंद

- मनुष्य की क्रीड़ा प्रकृति की ताल को बिगाड़ती है

हाथियों और कछुओं की क्रीड़ा प्रकृति की ताल से ताल मिलाती है, उनकी क्रीड़ा को नदी सहर्ष स्वीकार करती है। मनुष्य की क्रीड़ा प्रकृति की ताल को बिगाड़ कर रख देती है। यहाँ 'क्रीड़ा' शब्द का एक विशेष अर्थ में प्रयोग हुआ है। आधुनिक मानव को नदी विनाशकारी के रूप में देखती है। उसकी क्रीड़ाएं प्रकृति को घायल कर देती हैं। मानव जिस प्रकार प्रकृति से खिलवाड़ कर रहा है इसका दुष्परिणाम ही प्रस्तुत कविता में प्रतिबिंबित हुआ है।

5. पारिस्थितिक संकट:

समकालीन कविताएँ पारिस्थितिक संकटों के बारे में चिंता व्यक्त करती हैं और मानव को प्रकृति के साथ सद्भाव में रहने के महत्व को रेखांकित करती हैं।हज़ारों कंपनियाँ सौंदर्य वर्धक चीज़ो के लेबल लगाकर जिस साबुन का निर्माण करती हैं वह प्रकृति के लिए कितना हानिकारक है, वह हम इस कविता के माध्यम से समझ सकते हैं -

- स्वार्थी कारखाने का तेजाबी पेशाब झेलते
- बैंगनी हो गई तुम्हारी शुभ्र त्वचा
- हिमालय के होते भी तुम्हारे सिरहाने
- हथेली भर की एक साबुन की टिकिया से हार गई
- तुम युद्ध ('नदी और साबुन')

- मानव को प्रकृति के साथ सद्भाव में रहने का महत्व

इसके अलावा सदानंद शाही की कविता 'कुँए सूखते चले गए' जल संकट और मुनाफाखोरों की कारगुजारियों पर प्रकाश डालती है। प्रेम शंकर शुक्ल की कविता 'पानी का मतलब'यह कविता मानव जीवन में गहरी पैठ कर रही व्यवस्था को व्यक्त करती है। लीलाधर मंडलोई की कविता 'गाने' अकाल की स्थिति का वर्णन करती है। इन कविताओं के माध्यम से, समकालीन कविताएँ पारिस्थितिक शोषण के विभिन्न आयामों को उजागर करती हैं और लोगों को पर्यावरण के प्रति सचेत होने और प्रकृति के साथ सद्भाव में रहने के लिए प्रेरित करती हैं।

4.1.1.2 समकालीन कविता का पारिस्थितिक सौन्दर्यशास्त्र और काव्य भाषा

- आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के मत में कवि कर्तव्य

'कवि का काम है कि वह प्रकृति विकास को ख़ूब ध्यान से देखे। ... . प्रकृति अद्भुत - अद्भुत खेल खेला करती है। एक छोटे से फूल में वह अजीब -अजीब कौशल दिखती है। वे साधारण आदमियों के ध्यान में नहीं आते . . . . पर कवि अपनी सूक्ष्म दृष्टि से प्रकृति के कौशल अच्छी तरह देख लेता है उनका वर्णन भी करता है उनसे नाना प्रकार की शिक्षा भी ग्रहण करता है और अपनी कविता के द्वारा संसार को लाभ भी पहुँचाता है। जिस कवि में प्राकृतिक दृश्य और प्रकृति के कौशल देखने और समझने का जितना ही अधिक ज्ञान होता है वह उतना बड़ा कवि भी होता है। '- आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

- प्रकृति को साहित्य और कविता के अनिवार्य तत्व के रूप में चित्रण

कवि कर्तव्य को इंगित करती महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की पंक्तियों के सन्दर्भ में यदि हम हिन्दी साहित्य की ओर दृष्टिपात करें तो पायेंगे कि हिन्दी कविता में प्रकृति और प्राकृतिक सौंदर्य प्राचीन काल से ही विद्यमान है। आदिकाल, भक्ति काल, रीतिकाल, आधुनिक काल में प्रकृति की बड़ी ही मनोहारी छटा हमने कविताओं में देखी है। छायावाद तक आते-आते प्रकृति ने रहस्यवाद के स्वरूप को भी अपना लिया। इस तरह कविता के विभिन्न पड़ावों से गुज़रती हुई प्रकृति नाना प्रकार के रूपों यथा सौंदर्यमयी, संघर्षमय, रौद्र भाव आदि को धारण करती हुई आज भी साहित्य और कविता के अनिवार्य तत्व के रूप में विद्यमान है। हाँ, इतना अवश्य है कि आज इसने पर्यावरण संकट पर आधारित पारिस्थितिक विमर्श का चोला पहन लिया है और अपने अस्तित्व और नैसर्गिक रूप को बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रही है। समकालीन कविता में पारिस्थितिक सौंदर्यमय भावों पर हम यहाँ चर्चा करेंगे।-

- कवि एकांत श्रीवास्तव प्रकृति की मनोहारी स्मृतियों को अपने मन में संजोए हुए हैं

समकालीन कविता में प्रकृति बड़ी ही पारिस्थितिक सजगता के साथ मौजूद है। हिंदी के समकालीन कवियों जैसे केदारनाथ सिंह, रामदास मिश्र, चंद्रकांत देवताले, विनोद कुमार शुक्ल, लीलाधर जगूड़ी, ज्ञानेंद्रपति, अरुण कमल, मंगलेश डबराल, राजेश जोशी, उदय प्रकाश, एकांत श्रीवास्तव, निर्मला पुतुल आदि ने पारिस्थितिक संकट को ज़हन में रखते हुए भी प्रकृति के सौंदर्यमयी, मनोहर दृश्य को अपनी स्मृति में संजोकर रखा है और बड़ी ही संजीदगी से अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया है। कवियों के बचपन की सुखद स्मृतियों में जो प्रकृति बसी हुई है वह बड़ी ही सलोनी है। कवि एकांत श्रीवास्तव प्रकृति की मनोहारी स्मृतियों को अपने मन में संजोए हुए हैं और कुछ इस तरह से व्यक्त करते हैं -

मुझे याद है आज भी
उसके जल का स्वाद
उसका रूप रंग गंध
यह भी की धूप में
वह नीलम की तरह
झिलमिलाती थी

उसके सीने में पड़े होंगे
आज भी मेरे पत्थर
उसकी लहरों में कहीं होंगे हमारे बचपन के दर्पण
थरथरा रहा होगा हमारा घर

अब कहीं ऐसा ना हो कि वे कल - कल बहती नदियाँ, वे झरने, वे मंद - मंद हवा के झोंके, हरियाली 'खेत- खलिहान, पक्षियों का चहचहाना, कहीं सिर्फ़ बचपन की यादें बनकर न रह जायें। आज तो पर्यावरण में प्रदूषण का ज़हर घुल गया है। समकालीन कवि पर्यावरण प्रदूषण के प्रति काफ़ी परेशान हैं। उनकी कविताएँ इस बात का सबूत हैं कि वे प्रकृति और प्रकृति संरक्षण के प्रति कितने सजग हैं। फिलहाल इंसान तो अपनी सात पीढ़ियों के लिए दौलत इकट्ठा करने में लगा हुआ है, प्रकृति के सभी संसाधनों का दोहन कर बस अपनी लालसाओं को पूरी करने में लगा हुआ है। अब भला ऐसे में कहाँ वक़्त है उसके पास प्राकृतिक नज़ारों को देखने और पर्यावरण संरक्षण के बारे में सोचने का? ऐसे समय में मानुष गंधी कवि अरुण कमल जी ने अपने चारों ओर फैले प्राकृतिक सौंदर्य और नैसर्गिक छटा को अपनी कविता में कुछ इस तरह से संजोया है-

- समकालीन कवि पर्यावरण प्रदूषण के प्रति काफ़ी परेशान हैं

खेत पीले
हरा पेड़
नीला आकाश
बगुले सफ़ेद (अगहन, नये इलाके में)

कहते हैं न कि सुंदरता तो देखने वालों की आँखों में होती है। कवि हम सब का ध्यान प्रकृति के उन नज़ारों की तरफ़ आकर्षित करना चाहते हैं जिससे कि हम भी इस नैसर्गिक छटा को अपनी आंखों में उतार लें। बारिश की फ़ुहार का कवि अरुण कमल स्वयं भी आनंद लेते हैं और हमें भी आनंद लेने को प्रेरित करते हैं-

- बारिश की फ़ुहार का कवि अरुण कमल स्वयं भी आनंद लेते हैं

ख़ूब बरसा है पानी
जीवन रस में डूब गई है धरती
अभी भी बादल छोप रहे हैं
अमावस्या का हाथ बँटाते . . . . .
हजार तार वाले वाद्य सी बज रही धरती
चारों ओर पता नहीं कितने जीव-जन्तु
बोल रहे हैं हजारों आवाज़ों में . . . . ./
धरती बहुत सन्तुष्ट बहुत निश्चिन्त है आज
दूध भरे थन की तरह भारी और गर्म ' (जीवधारा)

समकालीन कवि भी प्रकृति के चितेरे हैं। प्रकृति के कौशल और अद्भुत खेलों को अपनी पुतली में समाहित कर लेते हैं। माना जाता है कि जो व्यक्ति फूलों की, पेड़ -पौधों की बगिया सजाता है अवसाद और निराशा की काली छाया उसके आसपास भी नहीं

- समकालीन कवि प्रकृति के चितेरे हैं

भटकती। इसी प्रकृति की गोद में तो कवि हम सभी को ले जाना चाहते हैं। जैसे चंद्रमा की स्वच्छ और शीतल चांदनी धरती पर उतरती है, वैसी ही नैसर्गिक, सहज प्रकृति की छटा अरुण कमल जी की कविताओं में प्रतिबिंबित होती है। एक उदाहरण दृष्टव्य है-

अश्विन का साफ़ आकाश है
आधा चंद्रमा से भरा
हवा ताँत सी धुनी हुई हल्की (अभिसार)

वसंत और पतझड़ का कवि बड़ा ही मनोहारी और यथार्थ वर्णन प्रस्तुत करते हैं-

एक झड़ता है
एक उगता
एक ही डाल पर एक पुराना रूक्ष पत्ता
और सटे हुए एक नयी पत्ती जल भरी।

कवि प्रकृति के संघर्षतम रूप का सौन्दर्य कुछ इस तरह से व्यक्त करते हैं-

- प्रकृति के संघर्षतम रूप का सुन्दर वर्णन

पछाड़ खा रहे हैं अन्धड़ में पेड़
ललाट से ललाट टकराते
मथ रहे हैं बादलों से भरा आकाश
गरजता है गगन

बारिश का सजीव चित्र प्रस्तुत करती हैं 'बारिश ' कविता की ये पंक्तियाँ-

इतनी घनी बारिश हो रही है
ख़ूब घने केशों जैसी बारिश '

कवि एकांत श्रीवास्तव जी प्रकृति के सौंदर्य का बड़ा ही मनमोहक चित्र प्रस्तुत करते हैं -

सबसे पहले
सूर्य देखता है
इसमें अपना चेहरा
फिर पेड़ झाँकते हैं
और एक चिड़िया चोंच मारकर
इसे उड़ेलती है
अपने कंठ में
मैं इसमें देख सकता हूं
अपना चेहरा
और पिछले कई दिनों की
उदासी के बाद
मुसकुरा सकता हूँ झ्यानीट

नागार्जुन की कविता में प्रकृति की सप्राण उपस्थिति है। नागार्जुन ने साधारण के सौंदर्य को ही मुख्य प्रकृति में देखा है। बादल से संबंधित नागार्जुन की कई कविताएँ हैं। बादल कवि को अत्यंत प्रिय है-

प्रणय कलह छिड़ते देखा है,
बादल को घिरते देखा है

'शरद् पूर्णिमा', 'अबके इस मौसम में' आदि कविताओं में प्रकृति का बड़ा ही नैसर्गिक रूप देखा जा सकता है-

काली सप्तमी का चाँद
पावस को नमी का चाँद

- कविता समय की नब्ज़ पकड़ने वाली कविता है।

समकालीन कविता में प्रकृति, पारिस्थितिक सौंदर्य और पारिस्थितिक विमर्श के लिए अलग से स्थान बनाने की आवश्यकता ही नहीं है क्योंकि यह इस कविता का अनिवार्य तत्व है। उसकी आत्मा में विलीन तत्व है। प्रकृति और पर्यावरण के ज़िक्र के बिना समकालीन कविता अधूरी ही मानी जाएगी क्योंकि यह कविता समय की नब्ज़ पकड़ने वाली कविता है। समकालीन जीवन दशा और जीवन के सच्चे यथार्थ को पाठकों तक पहुँचाना यह अपना उत्तरदायित्व समझती है।

4.1.1.3 समकालीन कविता का काव्य पक्ष

- समकालीन कवियों ने पारिस्थितिक सौंदर्य और पारिस्थितिक विमर्श का चित्रण किया है

जीवनानुभवों की रागात्मक अनुभूति हुआ करती है कविता। जीवन के हर अनुभवों को कवि अपने दृष्टिकोण से देखा करते हैं। अपने इन्हीं अनुभवों को व्यक्त करने की हर कवि की अपनी ही एक शैली हुआ करती है, अपना ही एक अंदाज हुआ करता है। यही अंदाज- ए- बयां ही हर कवि का अपना कला-पक्ष हुआ करता है। समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं में पारिस्थितिक सौंदर्य और पारिस्थितिक विमर्श को बड़ी ही सहज भाषा में अभिव्यक्त किया है। प्रकृति संरक्षण और प्राकृतिक सौंदर्य का आस्वादन करने की पुकार जन-जन तक पहुँचानी थी तो स्वाभाविक ही है कि आम - जनता की भाषा में अपनी बात पहुँचाई जाए। अस्तु भाषा का रूप भाव और विषय के अनुरूप ही कहीं चित्रात्मक, कहीं गद्यात्मक, कहीं संवादात्मक, तो कहीं प्रतीकात्मक और बिंबात्मक बन गया है। यहाँ कवियों का उद्देश्य भाषा-पांडित्य प्रदर्शन नहीं बल्कि मानव- जीवन के लिए चुनौती देती समस्याओं के प्रति जन-मानस में जागरूकता पैदा करना है।

- पर्यावरण और प्रकृति संरक्षण वर्तमान समय की आधारभूत आवश्यकता है

पर्यावरण और प्रकृति संरक्षण वर्तमान समय की आधारभूत आवश्यकता है जिसके प्रति सचेत होना हर मानव के लिए ज़रूरी है। कवि अपनी अनुभूति को शब्दों के माध्यम से रचनात्मक रूप प्रदान करता है। इस तरह अनुभूति ही कवि का 'भाव-पक्ष' है तथा रचनात्मक रूप 'कला-पक्ष ' बन जाता है। समकालीन कवियों ने साधारण जन की सहज, सरल, बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है।जैसा कि कवि अरुण कमल जी कहते हैं कि -

'सबसे अच्छी कविता वह है जो बिलकुल बोलने की तरह, मुँह से निकलने वाले स्वाभाविक वाक्य या वाक्य खंड की तरह लगे'

अरुण कमल जी की ही पंक्तियों को लेकर कहें तो सारा लोहा उन लोगों का अपनी केवल धार तो यहाँ पर्यावरण संरक्षण स्प्री विषय वस्तु और भाषा आम जनता की ही तो है। समकालीन कवियों की तो बस धार ही है। उन्होंने इसे मांझकर लोगों के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया है। निःसंदेह समकालीन कवि अनुभवी और मंजे हुए कलाकार हैं। आम बोलचाल के रूप को अपनाने के कारण कवियों की भाषा जनता से संपर्क बनाए रखती है। बारीक और संजीदे भाव और सरल प्रवाह पूर्ण भाषा के साथ वर्तमान जीवन - यथार्थ को उसके वास्तविक परिप्रेक्ष्य में कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करना समकालीन कविता की अपनी विशिष्टता रही है।

- निःसंदेह समकालीन कवि अनुभवी और मंजे हुए कलाकार हैं

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

समकालीन कविता में गहन जीवनानुभूतियों की सुगन्धित मिट्टी से पगे हुए कवियों ने अपनी रचना धर्मिता के द्वारा मानवीय सरोकारों की अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने 'स्वान्तः सुखाय' की भावना से काव्य सर्जना नहीं की है बल्कि उनकी कवितायें जनचेतना और जीवन के यथार्थ को प्रतिबिंबित करने में सक्षम हुई हैं। प्रकृति और पर्यावरण के प्रति प्रतिबद्ध इस कविता ने हमें यह स्मरण करने का प्रयास किया है कि इस पृथ्वी पर वास करने वाले हर व्यक्ति का यह उत्तरदायित्व बनता है कि अपने और प्रकृति के रागात्मक सम्बन्ध को बनाए रखें और उसके हर घटकों को प्रदूषण मुक्त रखें नहीं तो इसका ख़ामियाज़ा ख़ुद उसे ही भुगतना पड़ेगा। अस्तु समकालीन कविता समाज निर्मिति, राष्ट्र निर्मिति, एवं वैश्विक संरचना निर्मिति में अहम भूमिका का निर्वहन करती रहेगी और नैतिक तथा जीवन आदर्श का सन्देश देती रहेगी।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. समकालीन कविता में अभिव्यक्त पर्यावरण चिंतन पर एक लेख लिखिए।
2. प्रकृति संरक्षण के प्रति प्रतिबद्ध कवियों के नाम लिखिए।
3. समकालीन कविता में अभिव्यक्त पारिस्थितिक सौन्दर्य पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिये।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

अन्तर्जाल सन्दर्भ

1. www. Shodhbraham.com
2. www.youtube.com/ shodhGuru

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य-डॉ सुमा एस. - डॉ. एस आर जयश्री।
2. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
3. पर्यावरण अध्ययन-भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
4. जल और पर्यावरण-राजीव रंजन प्रसाद।
5. पर्यावरण और प्रकृति का संकट-गोविन्द चातक।
6. कवि जो विकास है मनुष्य का-ए. अरविन्दाक्षन।

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 2

गंगा को प्यार - अरुण कमल

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 'गंगा को प्यार' कविता से परिचय प्राप्त करता है
- अरुण कमल के व्यक्तित्व, कृतित्व समझता है
- गंगा को प्यार कविता की पारिस्थितिक संवेदना से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

हमारे यहाँ गंगा देवताओं की नदी मानी गई है। प्रकृति के महान प्रतीक हिमालय के विस्तृत हिम शिखर से उदित होकर भारत के विशाल वक्ष पर माला के समान लहराती हुई गंगा मैया भारत की प्रवाहमयी संस्कृति की पवित्र प्रतीक है। सुरसरि, विष्णुपदी, हरिनदी, भगीरथी आदि नाम से जाने वाली गंगा का हमारे यहाँ आध्यात्मिक महत्व है।

ऋषिकेश, हरिद्वार, प्रयाग, काशी आदि पावन धाम गंगा नदी के ही तट पर स्थित हैं। गंगा नदी चिन्मय धारा है। लगातार बहती हुई प्राणियों की आत्मा का पोषण करती है। गंगा नदी मातृरूपा है, पूज्या है। विडंबना तो देखिए अमृत तुल्य इसी गंगा नदी की इंसान बेक़दरी कर रहा है। पौराणिक ग्रंथों में ऋषि -मुनियों ने गंगा को माँ का स्थान देकर वंदना की है। दुर्भाग्यवश आज वही गंगा नदी औद्योगिकरण तथा शहरीकरण के कारण मैली हो चुकी है, बुरी तरह प्रदूषित हो चुकी है। कपड़ा, कागज़, रसायन सीमेंट, तेल-शोधन, उर्वरक, चमड़ा आदि उद्योगों का गंदा पानी लगातार नदियों में छोड़ा जा रहा है। दूसरी ओर शहरों का मल-मूत्र, कचरा आदि बेरोकटोक नदियों में जा मिलता है इससे नदियों का जल भयानक रूप से प्रदूषित हो चुका है। आज हमारे देश की लगभग सारी नदियाँ प्रदूषण से ग्रस्त हैं। गंगा तो सर्वाधिक प्रदूषित है। गंगा तट पर कानपुर, प्रयाग, वाराणसी आदि शहरों के उद्योगों के धोवन के कारण, शहरों की नालियों, अधजले मुर्दों के कारण गंगा नदी बुरी तरह से दूषित हो चुकी है। यही चिंता अरुण कमल की कविता 'गंगा को प्यार' में व्यक्त हुई है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

भारतीय संस्कृति, गंगा नदी मातृरूपा, प्रदूषण, पारिस्थितिक संवेदना, औद्योगिक कचरा, नदियों को विषाक्त।

Discussion / चर्चा

अरुण कमल

प्रतिष्ठित कवि और आलोचक अरुण कलम का जन्म 15 फरवरी, 1954 को बिहार के रोहतास जिले में नासरीगंज नामक गांव में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा और माता-पिता के बारे में अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। वे इन दिनों पटना विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के प्राध्यापक हैं। वहीं माना जाता है कि साहित्य के क्षेत्र में उनका पर्दापण काव्य लेखन से हुआ था। इसके बाद उन्होंने कई देशी और विदेशी भाषाओं की पुस्तकों और रचनाओं का अनुवाद किया है।

- अरुण कमल आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रतिष्ठित कवि

अरुण कमल आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रतिष्ठित कवि, लेखक, संपादक और अनुवादक हैं। उन्होंने मुख्यतः कविता और आलोचना विधा में लेखनी चलाकर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। इसके अलावा उन्होंने कई देशी-विदेशी पुरस्तकों और रचनाओं का अनुवाद भी किया है। वहीं साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में अपना विशेष योगदान देने के लिए उन्हें 'साहित्य अकादमी पुरस्कार', 'भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार', 'सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार', 'श्रीकान्त वर्मा स्मृति पुरस्कार' और 'रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार' आदि से सम्मानित किया जा चुका हैं।

'गंगा को प्यार'-अरुण कमल

देर तक बैठा रहा
गंगा किनारे
ग्रीष्म का नीला आकाश
कुछ ज़्यादा ऊपर उठा हुआ
और हवा बस इतनी कि
भरा लगे सब कुछ
दूर एक फूल हुआ पाल
जैसे शेष हवा ने लिया हो आसरा वहीं।
कभी-कभी कोई पक्षी
जल की सतह को लगभग
छाती से छूता निः शब्द
मुड़ता है वापस
कोई गए संभाल कर
पाँव टिकाती
उतरी जल पीने
और नथनों के नीचे
हिल गई गंगा !
असंभव
असंभव है सोचना
जिनकी मिट्टी गंगा पानी से गुँथी है
उनके लिए संभव है सोचने कि एक दिन
गंगा के ऊपर से उड़ता हुआ पक्षी
विष की धाह से झुलस जाएगा
कि एक दिन गंगा
नहीं रहेगी और फिर गंगा
वे रख आए हैं गंगा के द्वार पर विषपात्र
षणयंत्र
गंगा के साथ भी षणयंत्र
हिमालय के साथ
पृथ्वी नक्षत्र समस्त मंडल के साथ
ओ विराट गंगा
ओ माँ के दूध में बसी हुई गंगा
तुम्हारे ही किनारे शुरू हुआ जीवन
पहला स्नान यहीं हुआ
अंतिम स्नान भी यहीं
तुम ही रही प्रवाहित आदि मानव से

आज तक
अनंत धमनियों में
विशाल आंख सी तुम ही रही देखतीं
हमारे सारे सुख-दुख
ओ विराट गंगा
जीवन का अनंत सूत अजस्त्र
गुँथता रहे तुम में हर वृक्ष का
हर पुष्प निर्बाध
आज मैंने जाना
जो आदमी को प्यार नहीं करते
उनकी कोई गंगा नहीं
कोई मातृभूमि नहीं
कोई अपना तारा नहीं।

शब्दार्थ :

नथुनों-Nostrils

धमनियों-Artery

गुँथता-intertwine

अजस्त्र-लगातार

निर्बाध-बिना बाधा के, निरंतर

कविता का सार

- गंगा जीवन का आधार और प्राण है

अरुण कमल की कविता 'गंगा को प्यार' भारतीयों और गंगा के आत्मीय, अन्तरंग एवं शाश्वत संबंधों की पवित्र गाथा है। गंगा के बिना भारतीय जीवन तथा संस्कार की कल्पना भी असंभव है। प्रथम स्नान से लेकर अंतिम स्नान तक के अनुष्ठान गंगा से जुड़े हुए हैं। गंगा के बिना हमारा अस्तित्व भी असंभव है। गंगा जीवन का आधार और प्राण है। हम भारतवासियों के लिए गंगा 'गंगा मैया' है। हिमालय पर्वत से निकलने वाली यह नदी कई प्रकार की स्वास्थ्यदायक जड़ी-बूटियों से होकर बहती आ रही है। गंगा भारत का संस्कार है, वह भारतीय जीवन के रग-रग में व्याप्त है। वही निर्मल, पावन गंगा आज दूषित हो चुकी है। उस गंगा नदी के प्रदूषण का मतलब हमारे संस्कार का प्रदूषण है। यहाँ गंगा नदी ही नहीं, समस्त नदियाँ दूषित हो चुकीं हैं।

- औद्योगिक कचरा नदियों को विषाक्त बना रहा है

प्रस्तुत कविता हमारी दोहरी मानसिकता पर भी चोट करती है। एक तरफ़ हम नदियों को माँ, तथा मुक्तिदात्री मानकर पूजते हैं, दूसरी तरफ़ नाली और नालों से लेकर पूजापाठ के कचरे का भी उसी में विसर्जन कर देते हैं। विकास इस प्रकार हो रहा है कि औद्योगिक कचरा नदियों को विषाक्त बना रहा है। गंगा मैया को ये कैसा प्यार हम दे रहे हैं? प्यार करते - करते हम तो उसका मुँह नोंच रहे हैं। विकास के मॉडल की यही वास्तविकता है।

'गंगा को प्यार' कविता की पारिस्थितिकी संवेदना

अपने देश को, अपनी धरती को माँ के रूप में देखना एक विराट पर परिकल्पना है। इस विराट परिकल्पना में ही समाया हुआ है मानव और प्रकृति का आत्मीय बंधन। प्रकृति है तो मानव जीवन है। निःसन्देह पारिस्थितिकी संवेदना जीवन की संवेदना ही तो है और जीवन की संवेदना ही कविता है तो इस तरह पारिस्थितिकी से कविता ऊर्जा ग्रहण करती है। सच कहें तो पारिस्थितिकी एक जीवनबोध है। जल के साथ, ज़मीन के साथ, जंगल के साथ, आसमान के साथ, प्रकृति के साथ हमारा जीवन जुड़ा है और

- गंगा को मनुष्यता के साथ, संस्कृति के साथ जोड़ा है

जो जीवन से जुड़ा है वह स्वतः ही कविता से भी जुड़ा है। अरुण कमल की 'गंगा को प्यार' शीर्षक कविता पारिस्थितिकी बोध की ही अभिव्यक्ति है। गंगा को उन्होंने मनुष्यता के साथ, संस्कृति के साथ जोड़ा है। गंगा को मात्र धार्मिक आस्था से न जोड़कर पारिस्थितिकी के साथ भी आत्मसात किया है।

'गंगा को प्यार' कविता के आरंभिक विपुल दृश्य में कवि की तेजोदीप्त पारिस्थितिकी दृष्टि नज़र आती है। गंगा की स्वच्छता का निर्मल वर्णन और गंगा की अविरल धारा का सौंदर्य हमें पारदर्शी पारिस्थितिकी का एहसास कराता है। 'गंगा को प्यार' कविता में गंगा के प्रदूषित होने की भीषण समस्या को प्रस्तुत किया गया है। गंगा का प्रवाह हम चाहते हैं कि हमारी आस्था की तरह पवित्र और निर्मल हो, लेकिन वही विषलिप्त हो जाए तो सारी आस्था टूट जाती है। पारिस्थितिकी आस्था का टूटना भी जीवन - मूल्यों का विघटन है-

'गंगा के ऊपर उड़ता हुआ पक्षी
विष की धाह से झुलस जाएगा
नहीं रहेगी फिर गंगा
वे रख आए हैं गंगा के द्वार पर विषपात्र !'

अरुण कमल के लिए गंगा केवल एक जल प्रवाह नहीं है, वह जीवन दायिनी है। समस्त प्रकृति को, पारिस्थितिकी को प्राण प्रदान करने वाला जल सानिध्य है। कवि का गंगा के साथ भावुक संबंध इन पंक्तियों से महसूस किया जा सकता है-

'ओ विराट गंगा
ओ माँ के दूध में बसी हुई गंगा
तुम्हारे ही किनारे शुरू हुआ
पहला स्नान भी यहीं हुआ
अंतिम स्नान भी यहीं
तुम्हीं रही प्रवाहित आदि मानव से
आज तक'

गंगा के प्रदूषण

नदियों को प्रदूषित करने की प्रवृत्ति आज नई बात नहीं है। उनके लिए गंगा हो, यमुना हो, या कावेरी कोई फ़र्क नहीं पड़ता है। इस प्रदूषण से मात्र गंगा का जल ही प्रदूषित नहीं होता है, उसके आसपास के जंतु - जगत भी झुलसकर मर जाते हैं। एक आस्था भी प्रभावित होती है। कवि ने आस्था को यथार्थ के स्तर पर स्वीकार किया है। इसीलिए पारिस्थितिकी यथार्थ उसमें सघन होता है। प्रदूषण को वह गंगा तक सीमित करके नहीं देखते बल्कि पूरी पृथ्वी के संदर्भ में देखते हैं। प्रेम का विस्तार और प्रेम का उदात्त रूप भी हमें प्रस्तुत कविता में दिखलाई पड़ता है। क्योंकि कवि यह मानते हैं कि जो आदमी अपने सहजीवी से अनुराग नहीं रखता उसके लिए क्या गंगा, क्या यमुना, क्या प्रकृति, क्या पारिस्थितिकी और क्या मातृभूमि !-

'जो आदमी को प्यार नहीं करते
उनकी कोई गंगा नहीं
कोई मातृभूमि नहीं
कोई अपना तारा नहीं'

- पारिस्थितिकी संकट पर विचार

पारिस्थितिकी संकट पर विचार करने और सहजीवी प्रेम के उदात्तता का समुच्चय है प्रस्तुत कविता। ए अरविंदाक्षन का में मानना है कि- 'गंगा को प्यार करने का मतलब प्रकृति प्रेम या धार्मिक आस्था को प्रतिफलित करना भर नहीं है। गंगा जीवन दायिनी है तो उसके प्रति हमारे अटूट प्रेम का संबंध जीवन सम्बद्धता को दर्शाता है। यह जीवन की अर्थवत्ता की खोज और जीवन की चारूता की खोज भी है'

- हर नदी का मानव जीवन से एक गहरा नाता है

केवल गंगा ही नहीं, हर नदी का मानव जीवन से एक गहरा नाता है। जीवन के हर सुख- दुख के साथ नदियाँ जुड़ी हुई हैं। हाँ इतना ज़रूर है कि गंगा इन नदियों में अपना एक विशेष महत्व रखती है। प्रस्तुत कविता में कवि गंगा को इंसानियत से, मानवीय मूल्यों से, धरती से, मातृभूमि से जोड़ते हैं इसीलिए तो यह कविता पारिस्थितिकी की कविताओं की प्रतिनिधि कविता के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत होती है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

अरुण कमल की कविता एक विचारवान मनुष्य बनने की प्रेरणा देती है। उनका काव्य- शिल्प अत्यंत ही परिष्कृत है। बिंबों का दक्षता पूर्वक प्रयोग, काव्यात्मक गरिमा का संधान, काव्य की गंभीरता, भाषा का विस्तृत वैभव, मित कथन आदि अनेक ऐसी पहलू हैं जिनसे अरुण कमल का काव्य संसार आकार लेता है। अरुण कमल की कविता 'गंगा को प्यार' भारतीय मनुष्य और गंगा के अंतरंग एवं शाश्वत संबंधों की पवित्र गाथा है। गंगा के बिना भारतीय जीवन तथा संस्कार की कल्पना भी असंभव है। प्रथम स्नान से लेकर अंतिम स्नान तक के अनुष्ठान यहीं संपन्न होते हैं। गंगा के बिना हमारा अस्तित्व भी असंभव है। गंगा जीवन का आधार और प्राण है। यह कविता केवल पर्यावरण की बाह्य चिताओं का प्रतिफल नहीं बल्कि कृतज्ञताबोध की विनम्र अभिव्यक्ति भी है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. गंगा को प्यार में व्यक्त पारिस्थितिकी संवेदना पर एक लेख लिखिए।
2. अरुण कमल के व्यक्तित्व, कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
3. 'गंगा को प्यार' कविता का सार अपने शब्दों में लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

अन्तर्जाल सन्दर्भ-

1. www. Shodhbraham.com
2. www.youtube.com/ shodhGuru

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य-डॉ सुमा एस. - डॉ. एस आर जयश्री।
2. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता विष्ट।
3. पर्यावरण अध्ययन-भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
4. जल और पर्यावरण-राजीव रंजन प्रसाद।
5. पर्यावरण और प्रकृति का संकट-गोविन्द चातक।
6. कवि जो विकास है मनुष्य का-ए. अरविन्दाक्षन।

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 3

पानी की प्रार्थना - केदारनाथ सिंह

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- पानी की प्रार्थना 'कविता की संवेदना से परिचत होता है
- विश्वभर में बढ़ते जा रहे जल संकट की ओर अवगत होता है
- पानी के व्यावसायीकरण से परिचित होता है
- प्रकृति के जल स्त्रोतों को बचाने की आवश्यकता समझता है
- कवि केदारनाथ के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचय प्राप्त होता है

Background / पृष्ठभूमि

केदारनाथ सिंह के कविता-कर्म में प्रकृति और पर्यावरण की उपस्थिति बरगद की जड़ों की तरह इतनी गहरी और विस्तीर्ण है कि उनकी कुछेक कविताओं को पर्यावरण-केन्द्रित कहना अन्याय होगा। उनकी कई ऐसी कविताएं जो अंत में प्रकृति और पर्यावरण की परिधि से बाहर दिखती हैं। आज पूरा विश्व जिस तरह से पर्यावरण संकट से गुज़र रहा है, यह चिन्ता का विषय है। यह चिन्ता जब कवि की चिन्ता बन जाती है तो जीवन के संकट का प्रश्न बन जाती है क्योंकि कवि पूरी पृथ्वी का नागरिक होता है। पृथ्वी की सभी आहटें उसकी खेद की बात है कि अमृत तुल्य जल को इंसान बेकदरी कर रहा है। भय, भक्ति और आस्था से प्रकृति को देखने वाला इंसान आज बड़ा ही क्रूर और स्वार्थी हो गया है। जिस प्रकृति की गोद में वह खेल कर बड़ा हुआ है, उसी का मुँह नोंचने पर उतारू है। उसी का आँचल मैला कर रहा है। नदियाँ, पेड़-पौधे, भू -गर्भ में समाया हुआ जल सब कुछ तो हम बिगाड़ रहे हैं। प्राकृतिक जल-स्त्रोतों के इसी बिगाड़ को लेकर चिंतित हैं कविवर केदारनाथ सिंह। उनकी 'पानी की प्रार्थना' कविता में इसी चिंता को अभिव्यक्त किया गया है। वर्तमान समय में पर्यावरण पर काफ़ी चिंतन होने लगा है अपने स्वरूप और मानव जीवन पर प्रभाव के कारण यह विषय अपने आप में काफी गंभीर और महत्वपूर्ण है। आज के समय में प्राकृतिक जल स्त्रोत सूख रहे हैं। नदियाँ प्रदूषित हो रही हैं, पेड़ों की कटाई और मिट्टी के व्यापार ने भूमिगत जल को भी सुख दिया है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

व्यवस्था और सत्ता, दुख का इज़हार, प्राचीनतम नागरिक, कठपुतली

Discussion / चर्चा

केदारनाथ सिंह

जन्म: केदारनाथ सिंह का जन्म 1934 में उत्तरप्रदेश के बलिया जिले में हुआ था। वे बनारस विश्वविद्यालय से एम.ए. और पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी।

इन्होंने कई कोलेजों में पढ़ाया, अंत में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली के हिंदी विभाग के अध्यक्ष पद से सेवानिवृत हुए। ये समकालीन कविता के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। 'बाघ' इनकी प्रमुख लम्बी कविता है, जिसे नई कविता के क्षेत्र में मील का पत्थर माना जाता है।

प्रमुख कृतियाँ : 'अभी बिलकुल अभी', 'ज़मीन पक रही है', 'यहाँ से देखो', 'अकाल में सारस', 'उत्तर कबीर और अन्य कवितायें', 'बाघ', 'तालस्ताय और साइकिल'।

पुरस्कार : अकाल में सारस' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, कुमारन आशान पुरस्कार (केरल), दिनकर पुरस्कार, जीवन भारती सम्मान, व्यास सम्मान'। उन्हें 2014 में प्रतिष्ठित ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

- ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित

कविता

पानी की प्रार्थना

प्रभु,
मैं-पानी-पृथ्वी का
प्राचीनतम नागरिक
आपसे कुछ कहने की अनुमति चाहता हूँ
यदि समय हो तो पिछले एक दिन का
हिसाब दूँ आपको
अब देखिए न
इतने दिनों बाद कल मेरे तट पर
एक चील आई
प्रभु, कितनी कम चीलें
दिखती हैं आजकल
आपको तो पता होगा
कहाँ गईं वे !
पर जैसे भी हों
कल एक वो आई
और बैठ गई मेरे बाजू में
पहले चौंककर उसने इधर-उधर देखा
फिर अपनी लम्बी चोंच गड़ा दी मेरे सीने में
और यह मुझे अच्छा लगता रहा प्रभु
लगता रहा जैसे घूँट-घूँट

मेरा जन्मांतर हो रहा है एक चील के
कंठ में
कंठ से रक्त में
रक्त से फिर एक नई चील में !
फिर काफ़ी समय बाद
दिन के कोई तीसरे पहर
एक जानवर आया हकासा-पियासा
और मुझे पीने लगा चभर-चभर
इस अशिष्ट आवाज़ के लिए
क्षमा करें प्रभु
यह एक पशु के आनन्द की आवाज़ थी
जिससे बेहतर कुछ नहीं था उसके जबड़ों
के पास
इस बीच बहुत से चिरई-चुरंग
मानुष-अमानुष
सब गुज़रते रहे मेरे पास से होकर
बल्कि एक बार तो ऐसा लगा
कि सूरज के सातों घोड़े उतर आए हैं-
मेरे करीब-प्यास से बेहाल
पर असल में जो आया
वह एक चरवाहा था
अब कैसे बताऊँ प्रभु-क्योंकि आपको तो
प्यास कभी लगती नहीं-
कि वह कितना प्यासा था
फिर ऐसा हुआ कि उसने हड़बड़ी में
मुझे चुल्लूभर उठाया
और क्या जाने क्या
उसे दिख गया मेरे भीतर
कि हिल उठा वह
और पूरा का पूरा मैं गिर पड़ा नीचे
शर्मिन्दा हूँ प्रभु
और इस घटना पर हिल रहा हूँ अब तक
पर कोई करे भी तो क्या
समय ही कुछ ऐसा है
कि पानी नदी में हो या किसी चेहरे पर
झाँक कर देखो तो तल में कचरा
कहीं दिख ही जाता है !
अन्त में प्रभु
अन्तिम लेकिन सबसे जरूरी बात
वही होंगे मेरे भाई-बन्धु
मंगलग्रह या चाँद पर
पर यहाँ पृथ्वी पर मैं
यानी आपका मुँहलगा यह पानी
अब दुर्लभ होने के कगार तक
पहुँच चुका है
पर चिंता की कोई बात नहीं
यह बाज़ारों का समय है
और वहाँ किसी रहस्यमय स्रोत से
मैं हमेशा मौजूद हूँ
पर अपराध क्षमा हो प्रभु
और यदि मैं झूठ बोलूँ
तो जलकर हो जाऊँ राख
कहते हैं इसमें-
आपकी भी सहमति है !

कविता का सारांश

- पानी एक नागरिक की तरह सत्ता से अपनी अवस्था के बारे में ज़िक्र कर रहा है

प्रस्तुत कविता में पानी पूरी शिद्दत के साथ ईश्वर से अपने दुख का इज़हार कर रहा है। यहाँ ईश्वर व्यवस्था और सत्ता का ही प्रतिक है। यहाँ कवि ने कटाक्ष रूप में ही पानी के द्वारा ईश्वर से अपनी समस्या व्यक्त करने का दृश्य प्रस्तुत किया है। यह तो सर्व विदित ही है कि व्यवस्था और सत्ता ही आज आम नागरिक की भाग्य विधाता है। आज हर आम-आदमी के जीवन में सारे क्रिया-कलाप व्यवस्था और सत्ता के द्वारा ही संचालित होते हैं। सत्ता के हाथों की कठपुतली बन जाना ही आम - आदमियों की

नियति है। इन्हीं आदमियों की तरह पानी भी एक नागरिक की तरह सत्ता से अपनी अवस्था के बारे में ज़िक्र कर रहा है कि क्यों वह नदी या किसी प्राकृतिक स्रोत का पानी आज इतना उपेक्षित हो गया है? क्यों उसकी इतनी उपेक्षा हो रही है?

प्रस्तुत कविता में पानी बड़ी विनम्रता पूर्वक प्रभु से प्रार्थना कर रहा है कि हे प्रभु मैं इस पृथ्वी का प्राचीनतम नागरिक आपसे कुछ कहने की अनुमति माँगता हूँ। आपके पास कुछ समय हो तो मेरी इस दरख्वास्त पर ध्यान दें। मैं अपने पिछले एक दिन का हिसाब आपको देना चाहता हूँ। हे प्रभु, आजकल तो चीलों का आना बहुत कम हो गया है। उनके रहने की जगह आज प्रदूषित होती जा रही है। वे जाएँ तो जाएँ कहाँ? अब जैसे भी हो एक चील आई और मेरे तट पर बैठ गई। फिर उसने इधर-उधर देखा क्योंकि यहाँ भी वह सुकून से नहीं बैठ पाती। जंगली जानवरों से ज़्यादा तो उसे इंसानों से ख़तरा रहता है। उसने बैठकर अपनी लंबी चोंच मेरे सीने में गढ़ा दी। इससे मुझे ख़ुशी ही हुई क्योंकि उसकी प्यास बुझ रही थी, उसको जीवन मिल रहा था।

- चील को जंगली जानवरों से ज़्यादा इंसानों से ख़तरा रहता है

फिर काफ़ी समय बाद एक जानवर आया, वह बहुत प्यासा था और बड़ी शीघ्रता से चभर- चभर की आवाज़ करता हुआ पानी पीने लगा। यह आवाज़ पशु के आनंद की आवाज़ थी। भले ही सभ्य मनुष्यों को यह आवाज़ बेढ़ंग लगे। इसी बीच कई पशु-पक्षी मेरे पास से होकर गुज़रे। एक बार तो ऐसा लगा कि सूर्य अपने साथ घोड़े पर सवार होकर आ गया हो। नदी के पानी को ऐसा लगता है कि सूर्य के घोड़े भी प्यास से बेहाल होकर उसके पास पानी पीने चले आए हों। लेकिन वास्तव में वहाँ एक प्यासा चरवाहा आया था। पानी कहता है कि प्रभु अब आपसे प्यास के बारे में क्या कहें आपको तो प्यास लगती नहीं। सत्ता और व्यवस्था के लिए तो प्यास से पहले ही पेयजल उपलब्ध हो जाता हैट उसे प्यासे चरवाहे ने चुल्लू भर मुझे उठाया और वैसे ही वापस डाल दिया। पता नहीं उसने उसमें क्या देख लिया। यहाँ इस बात की ओर भी संकेत मिलता है कि पानी कम था और जो था वह भी गंदा था। कल-कल बहती नदियों का पानी पहले पीने लायक था पर आज यह पीने लायक भी नहीं रहा। इसी वेदना को प्रस्तुत कविता में हम देख सकते हैं।

- कल-कल बहती नदियों का पानी पहले पीने लायक था पर आज यह पीने लायक नहीं

मुख्य प्रसंग

औद्योगिकरण और अत्यंत लाभ कमाने की प्रवृत्ति के कारण मनुष्य ने प्रकृति के संसाधनों को अपनी मन-मर्ज़ी के मुताबिक अपने उपभोग की वस्तु बनाकर रख दिया है। हमारे पूर्वजों ने जिस प्रकृति और जिन प्राकृतिक संसाधनों को हमें सौंपा था, क्या हमने अपने आने वाली पीढ़ी के लिए वैसा ही छोड़ा है? 'पानी की प्रार्थना' कविता में केदार जी की काव्य शैली बड़ी ही दमदार है जिसमें पानी का मानवीकरण कर उसे पृथ्वी के प्राचीनतम नागरिक के रूप में प्रस्तुत किया है। आज का लोभी मनुष्य सिर्फ अपने स्वार्थ के बारे में सोचता है। प्रकृति और प्राकृतिक संसाधन तो जैसे उसके लिए पराए बन गए हैं। ऐसे में पानी को स्वयं अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना करनी पड़ रही है। पानी को ख़ुद आज ईश्वर से अपनी तकलीफ़ व्यक्त करनी पड़ रही है।

- प्राचीनतम नागरिक के रूप में प्रस्तुत

पानी बड़े अफसोस के साथ अपना दर्द बयां करता हुआ कह रहा है कि :

पर कोई करे भी तो क्या
समय ही कुछ ऐसा है
कि पानी नदी में हो
या किसी चेहरे पर
झाँक कर देखो तो तल में कचरा
कहीं दिख ही जाता है !

यहाँ व्यंग्य रूप में कवि पानी से कहलवाते हैं कि चांद और मंगल पर पानी होगा लेकिन यहाँ पृथ्वी पर पानी दुर्लभ होने की कगार पर पहुँच चुका है। कवि फिर से बाज़ारवाद पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि-

'वहाँ होंगे मेरे भाई-बन्धु
मंगलग्रह या चाँद पर
पर यहाँ पृथ्वी पर मैं
यानी आपका मुँहलगा यह पानी
अब दुर्लभ होने के कगार तक
पहुँच चुका है'

आज बड़ी मात्रा में बाज़ार में पानी उपलब्ध है यानी कि कहीं ऐसा तो नहीं कि इस व्यवसाय को फलने- फूलने के लिए जान बूझकर हमारे प्राकृतिक जल स्रोतों को प्रदूषित किया जा रहा हो। अगर मैं झूठ बोल रहा हूँ तो जल कर राख हो जाऊं। पानी आगे कहता है कि

'कहते हैं इसमें
आपकी भी सहमति है'

यहाँ कवि कटाक्ष करते हैं। सत्ता और व्यवसाय की साठ - गांठ यहाँ उजागर होती है। यहाँ प्रदूषित होते पर्यावरण के प्रति कवि का संवेदनशील मन अपनी पीड़ा को व्यक्त कर रहा है। प्रस्तुत कविता हमें अपने पर्यावरण संरक्षण, जल संरक्षण के प्रति सोचने को बाध्य करती है। आज पानी की समस्या वैश्विक स्तर पर विकराल रूप धारण करती जा रही है। ऐसे में कवि अपने कवि धर्म से कैसे पीछे हट सकते हैं? उनकी कलम की स्याही भी इस गंभीर समस्या को उजागर कर हर नागरिक को प्राकृतिक जल स्रोतों के संरक्षण की प्रेरणा देती है।

- आज पानी की समस्या वैश्विक स्तर पर विकराल रूप धारण करती जा रही है

रासायनिक उर्वरकों के आने से पहले हर साल गर्मियों में किसान सूखे तालाब में से जमा हुई गाद या उपजाऊ मिटटी निकालकर ले जाता था और अपने खेत में बिछा देता था। इससे एक ओर तो खेत की उर्वरा शक्ति तो बढ़ती ही थी दूसरी ओर तालाब की गहराई भी बढ़ती थी। तालाब की जल संचयन क्षमता बनी रहती थी। लेकिन

- रासायनिक उर्वरकों ने किसान को प्राकृतिक खाद से दूर कर दिया

आज अन्य देशों से आयातित या हमारे देश में निर्मित रासायनिक उर्वरकों ने किसान को इस प्राकृतिक खाद से दूर कर दिया। फिर तालाब गाद से भरते गए। तालाब की जल संचयन की क्षमता भी कम होती गई। ऐसे में, सरोवर का पुनरूद्धार किया जाय तो भू जल स्तर बढ़ाया जा सकता है। सरोवर निर्माण व सरोवर संरक्षण आज समय की माँग हैं।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

कविता में पानी को जीवन का आधार बताया गया है, जो पर्यावरण के प्रति जागरूक होने का संदेश देता है। प्रस्तुत कविता पानी के अभाव में लोगों की त्रासदी का चित्रण करती है, जो सामाजिक न्याय के अभाव में लोगों की बदहाली का प्रतीक है। कविता सत्ता-पूँजीवादी तंत्र की पोल खोलती है, जो आज भी प्रासंगिक है। यह मनुष्य के अस्तित्व और प्रकृति के साथ उसके संबंध पर सवाल उठाती है, जो आज भी महत्वपूर्ण है। केदारनाथ सिंह की कविताओं में प्रकृति और पर्यावरण की गहरी उपस्थिति है, जो उनकी रचनाओं को प्रासंगिक बनाती है। उनकी कविताओं में, लोक और प्रकृति के ताने-बाने को दिखाया गया है, जो आज भी प्रासंगिक है। 'पानी की प्रार्थना' कविता पर्यावरण के प्रति जागरूकता, सामाजिक न्याय और सत्ता के खिलाफ आवाज के रूप में प्रासंगिक है। यह कविता हमें पर्यावरण के प्रति संवेदनशील होने और सामाजिक न्याय की लड़ाई में शामिल होने के लिए प्रेरित करती है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. पानी की प्रार्थना ' कविता की संवेदना को व्यक्त कीजिये।
2. विश्वभर में बढ़ते जा रहे जल संकट पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिये।
3. प्रकृति के जल स्त्रोतों को बचाने के उपाय पर टिपण्णी लिखिए।
4. कवि केदार नाथ के व्यक्तित्व, कृतित्व पर एक टिपण्णी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य-डॉ सुमा एस. ' डॉ. एस आर जयश्री।
2. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता विष्ट।
3. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
4. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
5. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
6. पर्यावरण अध्ययन - डॉ. एम. एल. शर्मा, प्रकाश नारायण नाटानी
7. www. Shodhbraham.com
8. www.youtube.com/ shodhGuru

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 4

प्यासा कुआँ - ज्ञानेन्द्रपति

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- ज्ञानेन्द्रपति के व्यक्तित्व, कृतित्व से परिचय प्राप्त करता है
- 'प्यासा कुआँ' कविता में व्यक्त पारिस्थितिक संवेदना से परिचय प्राप्त करता है
- नष्ट होते प्राकृतिक जल संसाधन के संरक्षण के प्रति जाग्रता

Background / पृष्ठभूमि

जल जीवन का आधार है। मानव के प्रत्येक कार्यों के लिए जल अनिवार्य तत्व है। चाहे वह आर्थिक हो, चाहे सामाजिक, धार्मिक हो, कृषि हो या बागबानी हो - सभ्यता के विकास के साथ मनुष्य भूमिगत जल स्रोतों पर अधिकाधिक निर्भर होता जा रहा है। इसी कारण बड़े शहरों में हर वर्ष भूजल स्तर नीचे जा रहा है। भूजल की अपनी सीमा है। इसका अधिक दोहन नहीं किया जा सकता। यदि सरोवरों को संरक्षित किया जाए तो इस जल की आपूर्ति हो सकती है। पर शहरीकरण व औद्योगीकरण के कारण पूर्वजों द्वारा निर्मित सरोवर पाट दिए गए। आज सरोवरों के स्थान पर बड़ी-बड़ी इमारतें, कार्यालय आदि बना दिए गए। धरती पर बढ़ती आबादी और उपलब्ध जल स्रोतों में जल की कमी एक गंभीर समस्या बनती जा रही है, इसी गंभीर समस्या की संवेदनात्मक अभिव्यक्ति है 'प्यासा कुआँ ' कविता।

Keywords / मुख्य बिन्दु

पारिस्थितिक प्रदूषण, बाज़ारीकरण, आधुनिक जीवन शैली के दुष्प्रभाव, प्रकृति प्रेम

Discussion / चर्चा

ज्ञानेन्द्रपति

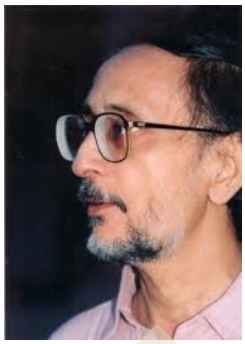

- 'निराला परंपरा' का कवि कहा गया

हिंदी के प्रमुख कवि ज्ञानेंद्रपति का जन्म 1 जनवरी 1950 को पथरगामा, झारखंड में हुआ था। वह करीब दस वर्ष बिहार सरकार के अधिकारी के रूप में कार्यरत रहे, फिर कूलवक्ती कवि के रूप में सक्रिय हुए। उन्हें 'निराला परंपरा' का कवि कहा गया है जो कविता के नहीं निराला द्वारा प्रस्तावित मुक्तछंद के कवि हैं।

ज्ञानेन्द्रपति

कविता पाठ

प्यास बुझाता रहा था जाने कब से
बरसों बरस से
वह कुआँ
लेकिन प्यास उसने तब जानी थी
जब
यकायक बंद हो गया जल-सतह तक
बाल्टियों का उतरना
बाल्टियाँ- जो अपना लाया आकाश डुबो कर
बदले में उतना जल लेती थीं
प्यास बुझाने को प्यासा
प्रतीक्षा करता रहा था कुआँ, महीनों
तब कभी एक
प्लास्टिक की खाली बोतल
आ कर गिरी थी
पानी पी कर अन्यमनस्क फेंकी गई एक प्लास्टिक-बोतल
अब तक हैण्डपम्प की उसे चिढ़ाती आवाज़ भी नहीं सुन पड़ती
एक गहरा-सा कूड़ादान है वह अब
उसकी प्यास सिसकी की तरह सुनी जा सकती है अब भी
अगर तुम दो पल उस औचक बुढ़ाए कुएँ के पास खड़े होओ चुप।

शब्दार्थ :

बरस-वर्ष

यकायक-अचानक

बाल्टियाँ-Buckets

अन्यमनस्क-जिसका चित्त कही और हो

औचक-एकदम

बोतल - Bottle

'प्यासा कुआँ' कविता की पारिस्थितिक संवेदना

- पर्यावरण जीवन का आधार है

'प्यासा कुआँ' कविता पर्यावरण के प्रति प्रेम और चिंता दर्शाती है। जल के स्रोत कुएँ के प्यासा होने का चित्रण करके कवि प्रकृति और पर्यावरण के संकट की ओर संकेत करते हैं। प्रकृति और मानव का आत्मीय बंधन है। पर्यावरण जीवन का आधार है। लेकिन आज मानव के प्रकृति पर अनियंत्रित हस्तक्षेप से प्राकृतिक सम्पदा नष्ट होती जा रही है।

- आज कुआँ कूड़ादान बन चुका है

आज लोगों की मानसिकता 'यूज़ एंड थ्रो' बन गयी है। प्यासे मानव को पानी देने वाला कुआँ आज सूख गया है। पानी पीकर फैंकी गयीं प्लास्टिक बोतलों से सूखा कुआँ भरता जा रहा है। पहले खाली बाल्टियाँ कुएँ में उतरतीं थीं और पानी भरकर ले जातीं थीं, लेकिन आज पानी नहीं है। आज कुआँ प्यासा है। आज कुआँ कूड़ादान बन चुका है। प्लास्टिक बोतलों से उसे भर दिया गया है। हैण्ड पम्प की आवाज़ भी सुनाई नहीं देती।

- प्राकृतिक सम्पदा हमारे लिए वरदान है

अगर हम कुएँ के पास चुपचाप खड़े हो जाएँ तो उसकी सिसकियाँ सुनी जा सकतीं हैं। ये सिसकियाँ उसकी प्यास की प्रतिध्वनि हैं। प्रस्तुत कविता में कवि प्रकृति को लेकर चिंतित नज़र आते हैं। प्राकृतिक सम्पदा हमारे लिए वरदान है। उसका सदुपयोग करना चाहिए। कुआँ तो मानव राशि के लिए वरदान है। आने वाली पीढ़ी के लिए इस कुएँ को बचाए रखना हमारा कर्तव्य है।

- आज जल स्रोतों के रखरखाव और संरक्षण की महती आवश्यकता है

कुएँ के 'प्यासे' होने और प्लास्टिक की खाली बोतल के गिरने जैसे बिम्बों से कवि प्रकृति के प्रदूषण की भयंकर स्थिति की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करना चाहतें हैं। जल संकट को देखते हुए आज यह आवश्यक हो गया है कि इस समस्या के सभी पहलुओं पर विचार किया जाए और तत्काल इसके निदान के लिए कदम उठाए जाएं। पर्यावरण असंतुलन, पानी के इस्तेमाल में बरती जाने वाली लापरवाही और जल प्रदूषण ने दुनिया के सामने एक भीषण संकट खड़ा कर दिया है। भूमिगत जल स्रोत भी इससे प्रदूषित हो रहे हैं। उनकी क्षमता भी दिनों दिन घटती जा रही है। जबकि दुनिया के कई हिस्सों में भूमिगत जल का स्तर मनुष्य की पहुँच से परे जा चुका है तथा बहुत

सा भूमिगत जल अनुपयोगी हो चुका है। जल संकट से उबरने के लिए जल स्रोतों के रखरखाव और संरक्षण की आज महती आवश्यकता है जल प्रबंधन के पुख्ता इंतजाम और जन जागरूकता से ही यह संभव है। प्रस्तुत कविता इसी कर्तव्यबोध की अभिव्यक्ति है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

भारत जैसे देश में समृद्धि का आधार जल संसाधन है। पर हम इसका समुचित उपयोग नहीं कर रहे हैं। हमारे यहाँ होने वाली वर्षा का 85% जल व्यर्थ ही समुद्रों में बह जाता है यदि हमारे जल संसाधनों का समुचित संयोजन, संचयन व प्रबंधन किया जाए तो देश की समृद्धि बढ़ जाएगी हमारे देश में हर प्रांत में परंपरागत तालाब सरोवरतड़ग हुए आदि विद्यमान है दुर्भाग्यवश हमारे यह उपेक्षित सरोवर नष्ट होते जा रहे हैं। विशालकाय बाँधों के मोह में हमारी सरकारें इन छोटे सरोवरों का महत्व भूल चुकी हैं। आज इन सरोवरों को फिर से जीवित करने की आवश्यकता है। युवा शक्ति को तालाबों से गाद निकालने के काम में लगाया जा सकता है इससे सरोवरों की जल संचयन क्षमता बढ़ेगी, भूजल स्तर भी बढ़ेगा। सरोवरों का पर्यावरण संचालन पर भी बड़ा सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में सरोवर निर्माण एक पवित्र कार्य माना जाता था। हमारे पूर्वजों ने वर्षापात के अनुसार सरोवर निर्माण की कला का विकास किया। राजस्थान के लोग इस कला में अग्रणी हैं। उन्होंने बारिश के जल संचायित करने के बड़े ही कारगर तरीके ढूँढ निकाले। आज भी वे इन पद्धतियों का इस्तेमाल करते हैं। राजस्थान के अतिरिक्त गुजरात, कच्छ मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्रा आदि प्रदेशों में सरोवर निर्माण तथा संरक्षण की सुदीर्घ के परंपरा रही है लेकिन आज धीरे-धीरे जल संसाधन परिमाण और गुणवत्ता (Quality and Quntity) दोनों दृष्टियों से क्षीण होते जा रहे हैं।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. 'प्यासा कुआँ' कविता की संवेदना को व्यक्त कीजिये।
2. विश्वभर में बढ़ते जा रहे जल प्रदूषण पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिये
3. प्रकृति के जल स्त्रोत संरक्षण पर आलेख लिखिए।
4. कवि ज्ञानेन्द्र पति के व्यक्तित्व, कृतित्व पर एक टिपण्णी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस. ' डॉ. एस आर जयश्री।
2. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
3. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
4. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
5. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
6. www. Shodhbraham.com
7. www.youtube.com/ shodhGuru

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 5

उतनी दूर मत ब्याहना बाबा! - निर्मला पुतुल

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 'उतनी दूर मत ब्याहना बाबा ' कविता की संवेदना से परिचत होता है
- विश्वभर में बढ़ते जा रहे पर्यावरण संकट की ओर ध्यान आकर्षित करता है
- निर्मला पुतुल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से परिचत होता है
- प्रकृति संरक्षण की आवश्यकता के बारे में जानकारी प्राप्त होती है

Background / पृष्ठभूमि

निर्मला पुतुल आदिवासी महिलाओं के उत्थान के लिए नियमित संघर्ष कर रही हैं। निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी महिलाओं का संघर्ष देखा जा सकता है, उजड़ते जंगल की चीख सुनी जा सकती है और विकास का दंश झेल रहे पहाड़ों का दर्द महसूस किया जा सकता है।

निर्मला पुतुल की एक बहुत ही चर्चित कविता है- 'बाबा! मुझे उतनी दूर मत ब्याहना'. इस कविता के माध्यम से एक आदिवासी लड़की के पूरे जीवन का दर्द समझा जा सकता है। आदिवासी समाज किस तरह जल, जंगल, ज़मीन के लिए अपना जीवन समर्पित कर देता है, ये हम इस कविता से जान सकते हैं। आदिवासी ही नहीं बल्कि समूचे नारी जगत की वेदना को यह कविता उजागर करती है। एक लड़की का अपने पिता से लगाव, शादी के बाद घर से दूर होने की पीड़ा, दहेज जैसी कुप्रथा, पति का शराबी होना आदि तमाम बातों से गुज़रते हुए निर्मला पुतुल जो संदेश देती हैं, वह इस पूरी कविता का मर्म है- 'उसके हाथ में मत देना मेरा हाथ, जिसके हाथों ने कभी कोई पेड़ नहीं लगाया।'

Keywords / मुख्य बिन्दु

समझदारी, श्रम के महत्व, प्रकृति से स्नेह, प्रकृति पूजन और प्रकृति संरक्षण

Discussion / चर्चा

निर्मला पुतुल

परिचय : निर्मला पुतुल का जन्म 6 मार्च, 1972 को दुधनी, कुरुवा, छुमका (झारखंड) में हुआ था। आप बहुभाषी व्यक्तित्व की धनी है। निर्मला जी को पंजाबी, अंग्रेजी, मराठी, उर्दू के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं का भी ज्ञान है उनकी लिखी कविताएं समाज की सच्चाई के बेहद करीब महसूस होती है। आप कई पुरस्कारों से सम्मानित हुई हैं।

आपको साहित्य अकादमी नई दिल्ली द्वारा साहित्य सम्मान (2001 ई.) से सम्मानित किया गया, झारखंड सरकार द्वारा सन् 2006 ई. में राजकीय सम्मान से सम्मानित किया गया। सन् 2008 ई. में महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा सम्मानित किया गया। हिमाचल प्रदेश हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा भी आप को सम्मानित किया गया है। उनके जीवन पर आधारित 'बुरू - गारा' नामक फिल्म बनी।

कविता संग्रह :

नगाड़े की तरह बजते शब्द, अपने घर की तलाश में, फूटेगा एक नया विद्रोह आदि।

कविता - उतनी दूर मत ब्याहना बाबा!

बाबा!
मुझे उतनी दूर मत ब्याहना
जहाँ मुझसे मिलने जाने ख़ातिर
घर की बकरियाँ बेचनी पड़े तुम्हें
मत ब्याहना उस देश में
जहाँ आदमी से ज़्यादा
ईश्वर बसते हों
जंगल नदी पहाड़ नहीं हों जहाँ
वहाँ मत कर आना मेरा लगन
वहाँ तो कतई नहीं
जहाँ की सड़कों पर
मान से भी ज़्यादा तेज़ दौड़ती हों मोटर-गाडियाँ
ऊँचे-ऊँचे मकान
और दुकानें हों बड़ी-बड़ी
उस घर से मत जोड़ना मेरा रिश्ता
जिस में बड़ा-सा खुला आँगन न हो

मुर्ग़े की बाँग पर होती नहीं हो जहाँ सुबह
और शाम पिछवाड़े से जहाँ
पहाड़ी पर डूबता सूरज न दिखे
मत चुनना ऐसा वर
जो पोचई और हड़िया में डूबा रहता हो
अक्सर
काहिल-निकम्मा हो
माहिर हो मेले से लड़कियाँ उड़ा ले जाने
में
ऐसा वर मत चुनना मेरी ख़ातिर
कोई थारी-लोटा तो नहीं
कि बाद में जब चाहूँगी बदल लूँगी
अच्छा-ख़राब होने पर
जो बात-बात में
बात करे लाठी-डंडा की
निकाले तीर-धनुष, कुल्हाड़ी
जब चाहे चला जाए बंगाल, असम या
कश्मीर
ऐसा वर नहीं चाहिए हमें
और उसके हाथ में मत देना मेरा हाथ
जिसके हाथों ने कभी कोई पेड़ नहीं लगाए
फ़सलें नहीं उगाईं जिन हाथों ने
जिन हाथों ने दिया नहीं कभी किसी का
साथ
किसी का बोझ नहीं उठाया
और तो और!
जो हाथ लिखना नहीं जानता हो 'ह' से
हाथ
उसके हाथ मत देना कभी मेरा हाथ!
ब्याहना हो तो वहाँ ब्याहना
जहाँ सुबह जाकर
शाम तक लौट सको पैदल
मैं जो कभी दुख में रोऊँ इस घाट
तो उस घाट नदी में स्नान करते तुम
सुनकर आ सको मेरा करुण विलाप
महुआ की लट और
खजूर का गुड़ बनाकर भेज सकूँ संदेश
तुम्हारी ख़ातिर
उधर से आते-जाते किसी के हाथ
भेज सकूँ कद्दू-कोहड़ा, खेखसा, बरबट्टी
समय-समय पर गोगो के लिए भी
मेला-हाट-बाज़ार आते-जाते
मिल सके कोई अपना जो
बता सके घर-गाँव का हाल-चाल
चितकबरी गैया के बियाने की ख़बर
दे सके जो कोई उधर से गुज़रते
ऐसी जगह मुझे ब्याहना!
उस देश में ब्याहना
जहाँ ईश्वर कम आदमी ज़्यादा रहते हों
बकरी और शेर
एक घाट पानी पीते हों जहाँ
वहीं ब्याहना मुझे!
उसी के संग ब्याहना जो
कबूतर के जोड़े और पंडुक पक्षी की तरह
रहे हरदम हाथ
घर-बाहर खेतों में काम करने से लेकर
रात सुख-दुख बाँटने तक
चुनना वर ऐसा
जो बजाता हो बाँसुरी सुरीली
और ढोल-माँदल बजाने में हो पारंगत
वसंत के दिनों में ला सके जो रोज़
मेरे जूड़े के ख़ातिर पलाश के फूल
जिससे खाया नहीं जाए
मेरे भूखे रहने पर
उसी से ब्याहना मुझे!

शब्दार्थ-

पोचाई - आदिवासियों की देशी शराब जिसे चावल से बनाते हैं।

खेखसा - एक गोल सब्ज़ी

बरबट्टी - बीन्स जैसी एक सब्ज़ी

पंडुक - जोड़े में रहने के लिए प्रसिद्ध एक चिड़िया

कविता का भावार्थ-

- एक युवती की भावनाओं का बड़ा ही सुंदर चित्रण है

प्रस्तुत कविता 'उतनी दूर मत ब्याहना बाबा' में निर्मला पुतुल ने एक युवती की भावनाओं का बड़ा ही सुंदर चित्र प्रस्तुत किया है। वह युवती अपने बाबा के सामने अपने भावी पति के बारे में अपनी पसंद ना पसंद व्यक्त करती है। इस कविता में उसकी समझदारी, वैचारिक, परिपक्वता भावनिक प्रगल्भता प्रकट होती है। युवती की भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए कवयित्री ने कविता को दो भागों में रचा है- पहले भाग में नया गाँव, नए वातावरण, भावी पति के बारे में युवती अपनी नापसंद व्यक्त करती है।

- युवती का प्रकृति के साथ गहरा लगाव यहाँ देख सकते हैं

प्रस्तुत कविता में युवती के विचार बड़े ही परिपक्व जान पड़ते हैं, बड़ी ही समझदारी से युवती अपने बाबा की आर्थिक स्थिति को मन में रखते हुए कहती है कि उसकी शादी इतनी दूर मत करना कि उसे मिलने आने के लिए बाबा को अपनी बकरियाँ बेचनी पड़े। इस कविता में हम युवती का प्रकृति के साथ गहरा लगाव भी देख सकते हैं। अपने गांव, जंगल और ज़मीन के प्रति उसकी गहरी आस्था है।

अपने प्रिय सब को छोड़कर वह कहीं दूर जाकर बस जाना नहीं चाहती इसीलिए ही तो वह कहती है-

जंगल नदी पहाड़ नहीं हों जहाँ
वहाँ मत कर आना मेरा लगन
वहाँ तो कतई नहीं
जहाँ की सड़कों पर
मान से भी ज़्यादा तेज़ दौड़ती हों मोटर-गाडियाँ
ऊँचे-ऊँचे मकान
और दुकानें हों बड़ी-बड़ी

आज के समय में देखा जाए तो अधिकांश लड़कियाँ अपनी शादी किसी शहरी युवक के साथ करने के सपने देखते हैं। उन सभी से अलग प्रस्तुत कविता की युवती गाँव के वातावरण में पले -बढ़े युवक से ही शादी करना चाहती है-

उस घर से मत जोड़ना मेरा रिश्ता
जिस में बड़ा-सा खुला आँगन न हो

मुर्ग़े की बाँग पर होती नहीं हो जहाँ सुबह
और शाम पिछवाड़े से जहाँ
पहाड़ी पर डूबता सूरज न दिखे

वह युवती प्रकृति के कितने नज़दीक है, यह बात यहाँ महसूस की जा सकती है। वह अपने पिता से कहती है कि ऊंचे मकान, दौड़ती मोटरगाड़ियों वाले शहर में मेरा रिश्ता न जोड़ना, बल्कि ऐसी जगह मेरा ब्याह करना जहाँ बड़ा सा आंगन हो। हर लड़की का यही सपना होता है कि उसका पति शराबी, निकम्मा और झूठ ना हो वैसे ही यहाँ भी युवती बाबा से कहती है कि ऐसा वर ना चुनना बाबा जो निकम्मा हो और डाकुओं की तरह मेले से लड़कियाँ उठा कर ले आता हो। जो बात-बात पर लाठी चलाता हो, हथियार लेकर मारने को दौड़ता हो।

- ऊंचे मकान, दौड़ती मोटरगाड़ियों वाले शहर में मेरा रिश्ता न जोड़ना

युवती का मानना है कि जैसे बर्तन ख़राब होने पर बदले जा सकते हैं या नए खरीदे जा सकते हैं, वैसे ही बार-बार शादी के बाद पति को तो नहीं बदला जा सकता-

कोई थारी लोटा तो नहीं
कि बाद में जब चाहूँगी बदल लूँगी
अच्छा-खराब होने पर

- युवती श्रम के महत्व को बहुत ही अच्छे से समझती है

कुछ युवकों की आदत होती है बेकार में इधर-उधर घूमती फिरने की। मन भी उनका इधर-उधर भटकता रहता है। ऐसे युवक परिवार की ज़रूरत पर ध्यान नहीं देते ऐसे व्यक्ति से भी वह शादी नहीं करना चाहती। प्रस्तुत कविता की युवती श्रम के महत्व को भी बहुत ही अच्छे से समझती है।

प्रकृति से स्नेह भी करती है, खेती और फ़सल को भी पसंद करती है तभी तो वह अपने बाबा से कहती है कि-

ऐसा वर नहीं चाहिए हमें
और उसके हाथ में मत देना मेरा हाथ
जिसके हाथों ने कभी कोई पेड़ नहीं लगाए
फ़सलें नहीं उगाईं जिन हाथों ने
जिन हाथों ने दिया नहीं कभी किसी का साथ
किसी का बोझ नहीं उठाया

- युवती के मन की विशालता यहाँ दिखाई पड़ती है

इन पंक्तियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि युवती एक ऐसे वर को चाहती है जो अपने सहजीवियों से प्रेम करता हो, उनका सहयोग करता हो, दूसरों की सहायता करता हो, जो स्वार्थी ना हो। युवती के मन की विशालता भी यहाँ दिखलाई पड़ती है। साथ ही साथ वह अनपढ़ लड़के को भी नकार देती है यानी कि युवती एक ऐसे युवक से शादी करना चाहती है जो शिक्षित हो-

और तो और!
जो हाथ लिखना नहीं जानता हो 'ह' से हाथ
उसके हाथ मत देना कभी मेरा हाथ!

कविता के दूसरे भाग में युवती अपनी इच्छा प्रकट करती है। वह अपने पिताजी के गाँव से दूर नहीं जाना चाहती इसीलिए अपने बाबा से कहती है कि मेरी शादी वहाँ कर देना जहाँ आप सुबह जाकर शाम को पैदल लौट सकूँ। मेरी आवाज़ उस घाट पर नहाते हुए तुम सुन सको और मुझसे मिलने आ सको। युवती आगे कहती है कि महुआ की लत और खजूर का गुड बनाकर तुम्हें भेज सकूं। कद्दू कोर खेक्सा बरबटी समय-समय पर तुम्हें भिजवाती रहूँ। गाँव में प्रायः यह देखने को मिलता है कि जब हम अपनों से मिलने जाते हैं तो अपने खेत में उगी हुई ताज़ा सब्ज़ियाँ, गाय का दूध, दही, घी, और जो कुछ बन पड़ता है उनके लिए ले जाते हैं वही भावना यहाँ हमें नज़र आती है। गाँव का आपसी मेल - मिलाप भी हम इस कविता में देख सकते हैं।

- गाँव का आपसी मेल - मिलाप का सुन्दर चित्रण

युवती आगे कहती है कि मेला या बाज़ार आते-जाते जब कोई अपना मिल जाए तो आपकी ख़बर ले सके। गैया के बियाने की ख़बर सुन सके। ऐसी जगह ही यानी कि इतनी पास ही उसकी शादी करना। युवती अपने बाबा से और भी एक बड़ी बात कहती है कि उसकी शादी एक ऐसे समाज में करना जो शोषण मुक्त हो यानी कि जहाँ बकरी और शेर एक ही घाट पर पानी पीते हों। यह पंक्तियाँ अपने आप में बहुत गहरा अर्थ लिए हुए हैं। युवती एक ऐसा समरस समाज चाहती है जहाँ पर सभी बराबर हों। सभी ख़ुश हों। सभी एक दूसरे का साथ देते हों और एक दूसरे की परेशानियों को समझते हों दुख और सुख आपस में बाँटते हों, ऐसे समाज में युवती रहना चाहती है।

- युवती एक ऐसा समरस समाज चाहती है जहाँ पर सभी बराबर एवं ख़ुश हों

कविता के अंत में युवती अपने मन की सबसे ज़रूरी बात अपने बाबा से कहती है जो कि हर लड़की की इच्छा होती है। वह चाहती है कि उसका वर ऐसा हो जो हर सुख - दुख में उसके साथ हो उसके मन में अपनापन हो और जो आपसी प्रेम और समझ रखता हो युवती कहती है कि-

उसी के संग ब्याहना जो
कबूतर के जोड़े और पण्डूक पक्षी को तरह
रहे हरदम साथ
घर- बाहर खेतों में काम करने से लेकर
रात सुख -दुख बाँटने तक

युवती अपने बाबा से कहती है कि उसके लिए ऐसा वर चुना जो बहुत ही सुरीली बांसुरी बजाता हो, ढोल बजाने में पारंगत हो। आगे वह कहती है कि वसंत के दिनों में जो उसके बालों में लगाने के लिए पलाश के फूल लेकर आए। ऐसे वर से ही उसकी शादी करना। फिर युवती कहती है कि वह मुझे इतना प्यार करे कि अगर मैं भूखी हूं तो उससे भी खाना खाया ना जाए ऐसे ही वर से शादी करना बाबा।

- युवती चाहती है कि उसका वर ऐसा हो जो हर सुख - दुख में उसके साथ हो

- आदिवासियों का जल, जंगल, ज़मीन के साथ एक आत्मीय बंधन दीख पड़ता है

निर्मला पुतुल की प्रस्तुत कविता काफ़ी विचार करने योग्य है आज के समय में गाँव की लड़कियाँ भी शहरी जीवन से प्रभावित होकर गाँव में रहना नहीं चाहतीं और शहरों में या किसी शहरी युवक के साथ रहना पसंद करती हैं तो यह कविता हमें सोचने पर मजबूर करती है कि भले ही गाँव में अच्छे युवक हो जो अच्छा कमाते हों, प्रकृति स्नेही हों, मेहनती हों, अच्छी आदतों वाले हों, बुरी आदतों से दूर हों ऐसे युवक से भी शादी की जा सकती है जैसा की निर्मला पुतुल की प्रस्तुत कविता में युवती अपने पिताजी से कह रही है। कोई ना कोई तो ऐसा होना ही चाहिए जो गाँव की हरियाली, सौंधेपन, गाँव का वातावरण और गाँव की महक, नदियों की कल - कल करती आवाज़ चिड़ियों का चहचहाना, खेती, फ़सल इन सभी को पसंद करें।आदिवासियों का जल, जंगल, ज़मीन के साथ एक आत्मीय बंधन प्रस्तुत कविता में हमें दिखलाई पड़ता है।

- आदिवासी स्त्री को माध्यम बनाकर आदिवासियों की संवेदना को व्यक्त किया है

निर्मला पुतुल प्रस्तुत कविता में एक आदिवासी स्त्री को माध्यम बनाकर आदिवासियों की संवेदना को व्यक्त करना चाहती हैं। प्रकृति ही आदिवासी जनजातियों की भक्ति है, शक्ति है, पूजा है, धर्म है, ईश्वर का साक्षात रूप है, प्रकृति उनके लिए सुख हो या दुख, जीवन के हर मोड़ पर दिशा- दिग्दर्शन करने वाली है। प्रकृति का संरक्षण और संवर्धन करना ही उनकी दिनचर्या में शामिल है चंद्रमा की सोलह कलाएँ हों या आम्र मंजरी, पलाश के फूल हो या काले घने बादल प्रकृति के हर रूप को देखकर हर तिथि का अनुमान कर लेते हैं और अपना उत्सव मनाते हैं। खेतों में बीज बोने से लेकर फ़सल की कटाई तक खेतों को, बादलों को, पहाड़ों को, हरी घास को, नए अनाजों को पूजा जाता है।

- मनुष्य अपनी सुविधा और समृद्धि के लिए प्रकृति का शोषण करते हैं

आदिवासी संस्कृति प्रकृति के हर घटकों के प्रति देवत्व का भाव रखती है। नदी हो, पहाड़ हो, वृक्ष हो, सभी को ईश्वर का प्रतिरूप मानती है। प्रकृति से ही उनके कई विश्वास और मिथक जुड़े हुए हैं। यही विश्वास उन्हें प्रकृति पूजन और प्रकृति संरक्षण के लिए प्रेरित करता है। प्रकृति की अनुकंपा उन पर हमेशा बनी रहे इसीलिए तो धरती, सूरज, चांद, वृक्ष, लता, पहाड़, नदी, प्रकृति के सारे तत्वों की स्तुति कर अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं। आदिवासियों का प्रकृति के प्रति अनुराग, प्रकृति संरक्षण, प्राकृतिक औषधि से उपचार प्रकृति के परिवर्तित रूप से पूर्वानुमान आदि अनेक- अनेक बातें वाकई काबिल-ए-तारीफ़ है। आज के इस आधुनिक समय में भी उन्होंने अपनी नैसर्गिकता, अपनी संस्कृति और परंपरागत जीवन- शैली को बरकरार रखा है। मनुष्य की भौतिकवादी आधुनिक जीवन- शैली ने प्रकृति को असंतुलित बना दिया है। अपनी सुविधा और समृद्धि के लिए प्रकृति का शोषण कर उसे प्रदूषित कर दिया है। लेकिन आदिवासी समाज ने आज भी प्रकृति से अपना रागात्मक संबंध बनाए रखा है। प्रस्तुत कविता हमें प्रकृति से अपना रागात्मक संबंध बनाए रखने के लिए प्रेरित करती है।

ऐसा वर नहीं चाहिए हमें
और उसके हाथ में मत देना मेरा हाथ
जिसके हाथों ने कभी कोई पेड़ नहीं लगाए
फ़सलें नहीं उगाईं जिन हाथों ने

प्रस्तुत कविता की युवती के माध्यम से निर्मला पुतुल ने तो जीवन का सार ही कह दिया। वृक्ष और उपवन तो मानव जीवन के लिए कल्याणकारी हैं। पर्यावरण संरक्षण की दिशा में वृक्षारोपण को वैदिक काल से ही मान्यता प्राप्त रही है-

दश कूप समोवापी दशव्यापी समोहदः
दशहद समः पुत्रः दशपुत्र समोद्रुमः।।

- वृक्ष और उपवन मानव जीवन के लिए कल्याणकारी हैं

अर्थात दस कुएँ के बनाने के बराबर एक बावड़ी, दस बावड़ी खुदाने के बराबर एक तालाब, दस तालाब खुदने के बराबर एक पुत्र या शिष्य को धर्म परायण बनाना व दस समाजसेवी पुत्रों के बराबर एक वृक्ष लगाने का पुण्य होता है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

मनुष्य के जीवन में शादी एक बहुत बड़ी घटना होती है। शादी के बारे में हर व्यक्ति के मन में कुछ न प्रथीक्षाएं होती है।निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्रस्तुत कविता के माध्यम से कवयित्री ने शादी के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। शहरी आकर्षण उसके मन में नहीं। किसान की अवस्था भी आजकल बुरी है। फिर वह कितना भी संपन्न क्यों न हो, वह कितना भी कमाता हो लेकिन आज की लड़कियां गाँव के साथ नाता नहीं जोड़ना चाहती। इसीलिए कविता में युवती ने गाँव की संस्कृति, गाँव का वातावरण और गाँव के लड़के के साथ शादी करने की इच्छा प्रकट कर समाज की समस्त लड़कियों के लिए विचार करने का बाध्य किया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. उतनी दूर मत ब्याहना बाबा ' कविता की संवेदना को व्यक्त कीजिये।
2. संथाली संस्कृति के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिये।
3. प्रकृति का संरक्षण आदिवासी संस्कृति कैसे करती है?
4. निर्मला पुतुल जी के व्यक्तित्व, कृतित्व पर एक टिपण्णी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।

4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस. डॉ. एस आर जयश्री।
2. पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी - डॉ सुजाता बिष्ट।
3. पर्यावरण अध्ययन - भोपालसिंह, शिरीषपाल सिंह।
4. जल और पर्यावरण - राजीव रंजन प्रसाद।
5. पर्यावरण और प्रकृति का संकट - गोविन्द चातक।
6. www. Shodhbraham.com
7. www.youtube.com/ shodhGuru

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 6

विस्थापन - स्वप्निल श्रीवास्तव

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- विस्थापन कविता से परिचत होता है
- स्वप्निल श्रीवास्तव के व्यक्तित्व कृतित्व से परिचत होता है
- विस्थापन कविता में अभिव्यक्त संवेदना से परिचय प्राप्त करता है
- विस्थापन में चित्रित वर्तमान यथार्थ के बारे में समझता है

Background / पृष्ठभूमि

स्वप्निल श्रीवास्तव वर्तमान समाज के यथार्थ को बड़ी ही बेबाक से अपनी रचनाओं में चित्रित करते हैं।औद्योगिकरण, नगरीकरण, भूमंडलीकरण का प्रभाव ऐसा बड़ा है कि हर इंसान आज गांव छोड़कर शहरों की तरफ भाग रहा है। थोड़ा पढ़ लिखने के बाद गाँव में जब रोज़गार के अवसर कम हो जाते हैं तो नई पीढ़ी शहरों की ओर रुख़ करती है। जीविका की खोज में गाँव से शहर की ओर आना भी एक तरह से विस्थापन ही है यही सच्चाई है। रोजी-रोटी कमाने शहर क्या आते हैं शहर के होकर रह जाते हैं। अपनी जड़ों से उखड़ जाते हैं। अस्तु विस्थापन इस सदी की मुख्य समस्या है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

विस्थापन, औद्योगिकरण, नगरीकरण, भूमंडलीकरण

Discussion / चर्चा

कवि परिचय

स्वप्निल श्रीवास्तव

नवें दशक के प्रमुख कवियों में से एक स्वप्निल श्रीवास्तव का जन्म 5 अक्टूबर 1954 को उत्तर प्रदेश के सिद्धार्थनगर के मेहनौना ग्राम में हुआ। बचपन से ही तुकबंदियाँ करने लगे थे, लेकिन गंभीर रूप से लेखन का आरंभ 1975 के बाद किया। वह राजनीतिक परिवर्तन का युग था जहाँ आलोकधन्वा, वीरेन डंगवाल, मंगलेश डबराल, ज्ञानेंद्रपति सरीखे कवि विशेष सक्रिय थे तो राजेश जोशी और उदय प्रकाश का नवोदित कवि के रूप में उदय हो रहा था। इसी दौर में नागार्जुन, त्रिलोचन और शमशेर नए सिरे से रेखांकित किए जा रहे थे।

प्रमुख रचनाएँ :

- पाँच काव्य-संग्रह प्रकाशित

'ईश्वर एक लाठी है' (1982), 'ताख पर दियासलाई' (1992), 'मुझे दूसरी पृथ्वी चाहिए' (2004), 'ज़िंदगी का मुक़दमा' (2010) और 'जब तक है जीवन' (2014) उनके पाँच काव्य-संग्रह प्रकाशित हैं। अपने जो अनुभव कविताओं में व्यक्त नहीं कर सके, उनके लिए कहानी और संस्मरण विधा का चयन किया। इस क्रम में उनके दो कहानी-संग्रह 'एक पवित्र नगर की दास्तान' और 'स्तूप और महावत' शीर्षक से प्रकाशित हुए। उनका संस्मरण 'जैसा मैंने जीवन देखा' शीर्षक से प्रकाशित है। इसके अलावे यदा-कदा किताबों की समीक्षा भी की है।

पुरस्कार :

उन्हें भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार, फ़िराक़ सम्मान और केदार सम्मान के साथ ही रूस के अंतर्राष्ट्रीय पुश्किन सम्मान से भी पुरस्कृत किया गया है।

कविता - विस्थापन

जो गाँव में रहते है वे शहर में
जाने के लिए बेचैन है
शहर के नागरिक महानगर में
बसने के लिए हैं लालायित
छोटी जगह कोई नहीं रहना चाहता
सबको चाहिए बड़ी जगह
ज़मीन पर रहने के लिए कोई
राजी नहीं है
सबको चाहिए आसमान और उड़ने
के लिए पँख
उनके जाने से जो जगह रह जाती है
उस जगह को डबडबाई आँखो से
देखते है माता-पिता
अवरूद्ध हो जाते है उनके कण्ठ
राजधानियाँ कुछ खास राजनेताओं,
कवियों, लेखकों
दलालों, उठाईगीरों के लिए आरक्षित है
उनकी प्रतीक्षा सूची लम्बी है
बड़े कवि छोटे शहरों में नहीं रहते
उनका वहाँ दम घुटता है
छोटे शहरों में प्रसिद्धि के अवसर
नहीं हैं
जो महत्वाकाँक्षाओं के लिए चुनते हैं
विस्थापन
वे महानता के पथ पर आगे बढ़ते हैं
वे सहज जीवन नहीं वर्जित इच्छाओं का
चुनाव करते हैं।

शब्दार्थ-

बेचैन-Restless

लालायित-solicitous

राज़ी-willing

डबडबाई-आँसू भर आना

अवरूद्ध-Dammed, रूका हुआ।

महत्वाकांक्षा-बड़ा बनने की आकांक्षा

वर्जित-त्यागा हुआ forbidden

उठाईगीरों-जो छोटी मोटी चीज़ उठाकर चलता बने।

दलाल-Broker बिचौलिया।

कविता का भावार्थ :

- जो गांव में रहते हैं वह नगर में जाने के लिए आतुर हैं

स्वप्निल श्रीवास्तव विरल अनुभव के कवि हैं। हिंदी कविता में उनकी स्थिति अलग है। विस्थापन स्वप्निल जी की वर्तमान यथार्थ को चित्रित करती बड़ी ही संवेदनशील कविता है। प्रस्तुत कविता में कवि कहते हैं कि जो गांव में रहते हैं वह नगर में जाने के लिए आतुर हैं और जो छोटे-छोटे नगरों में रहते हैं वह बड़े महानगरों में जाकर बस जाना चाहते हैं। जहाँ रहते हैं वहाँ तृप्ति नहीं ऐसी जगह जाना चाहते हैं जहां थोड़ी और सुख सुविधा हों। कोई भी अब छोटी जगह पर रहना नहीं चाहता हर कोई बड़ी जगह चाहता है।

- हर इंसान महत्वाकांक्षी है

हर इंसान महत्वाकांक्षी है। वह बड़े-बड़े ख़्वाब देखता है और सपनों की ऊँची उड़ान भरना चाहता है। उड़ान भरने के लिए ऊंचा आसमान चाहता है लेकिन अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करते-करते वह अपनी जड़ों से उखड़ जाता है क्योंकि जिस जगह, जिस आंगन को वह छोड़कर आता है वहां सिर्फ दीवारों से बना एक घर ही नहीं होता, बूढ़े मां-बाप भी होते हैं जिनकी आंखें अपने बच्चों की प्रतीक्षा में भरी रहती हैं वह अपने बच्चों को पुकारना चाहते हैं लेकिन उनके कंठ अवरूद्ध हैं वे भी इस सच्चाई को जानते हैं कि उनके बच्चों का वापस आना मुमकिन नहीं है। बच्चे रोजी-रोटी और अपने सपनों को पूरा करने ही तो इतनी दूर गए हैं।

- छोटे शहरों में प्रसिद्धि कम होने के कारण बड़े-बड़े कवि छोट -छोटे शहरों में रहना नहीं चाहते

कवि कहते हैं कि जो बड़ी-बड़ी राजधानियों की जगहें हैं वे ख़ास राजनेताओं, बड़े-बड़े कवियों, मशहूर लेखकों, बड़े-बड़े दलालों और उठाईगीरों के लिए आरक्षित हैं। वहां साधारण लोगों के लिए तो प्रतीक्षा सूची लंबी है। बड़े-बड़े कवि भी छोटे-छोटे शहरों में रहना नहीं चाहते क्योंकि छोटे शहरों में प्रसिद्धि के अवसर बड़े ही कम होते हैं इसीलिए किसी भी तरह महानगरों में जाकर बस जाना चाहते हैं। कवि अंत में कहते हैं कि जो अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए अपनी जड़ों से उखड़ कर विस्थापन को चुनते हैं वह ही महान पथ पर आगे बढ़ पाते हैं क्योंकि वह सहज, सरल जीवन को नहीं बल्कि वर्जित इच्छाओं का चुनाव करते हैं, अपनी इच्छाओं को त्याग कर अपनी महत्वाकांक्षा की उड़ान भरते हैं।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

कभी-कभी महत्वाकांक्षा की उड़ान हमें हमारी ज़मीन से कोसों दूर ले जाती है। शारीरिक या मानसिक रूप से हम अपनी जड़ों से उखड़ जाते हैं गाँव में सुविधाओं की कमी होने से लोग शहरों और महानगरों की ओर पलायन करते हैं। ज्यादा वेतन का मोह भी उन्हें विदेश जाने के लिए आकर्षित करता है। इस तरह तरक्की और सफलता की ऊंची उड़ान गाँव की गंवई गंध से हमें कोसों दूर ले जाती है। कुछ पाने के लिए कुछ खोना ही पड़ता है। महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए स्वयं विस्थापन चुनना पड़ता है। छोटे शहरों और गाँव में तरक्की के अवसर कम होने के कारण प्रतिभा महानगरों या विदेशों में पलायन कर जाती है। विस्थापन की इसी संवेदना को स्वप्निल श्रीवास्तव ने बड़ी ही संजीदगी से अभिव्यक्त किया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. विस्थापन कविता का भावार्थ लिखिए।
2. स्वप्निल श्रीवास्तव के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दीजिए।
3. विस्थापन कविता में अभिव्यक्त संवेदना को व्यक्त कीजिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य-डॉ सुमा एस. ' डॉ. एस आर जयश्री।
2. समकालीन हिंदी कविता : दशा और दिशा-डॉ. पशुपति नाथ उपाध्याय
3. www. Shodhbraham.com
4. www.youtube.com/ shodhGuru

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 7

धरती - नागार्जुन

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 'धरती' कविता से परिचय मिलता है
- नागार्जुन के व्यक्तित्व कृतित्व से परिचत होता है
- धरती कविता में अभिव्यक्त संवेदना से अवगत होता है
- धरती और प्रकृति के संरक्षण की प्रेरणा मिलता है

Background / पृष्ठभूमि

पृथ्वी गंधवती रसवती है। पृथ्वी ही अवनी है जो सबका आधार बनकर रक्षा करती है। परिपोषक है, पालक है, वसुन्धरा है पृथ्वी अर्थात जो बहुमूल्य वस्तुएं सुवर्ण रजत, रत्न आदि धारण करती है वह वसुंधरा है। पृथ्वी जल को धारण करती है। जल के सारे संसाधन नदी, तालाब, सरोवर, बावड़ी, झरने आदि पृथ्वी में ही अवस्थित है। अतः मनुष्य जाति का यह कर्तव्य है कि वह पृथ्वी को माता समझे उसे गंदा ना करे। जल संसाधनों को शुद्ध रखें। वृक्ष संपदा को नष्ट न करें। प्राणियों को अकारण ना मारें। प्रकृति के कार्य कलापों में अपनी ओर से हस्तक्षेप कर उसका संतुलन न बिगाड़ें। भारतीय संस्कृति में माता का मान सर्वोपरि है। माता ही साक्षात ईश्वर है, अतः पूज्या है, आराध्य है। पृथ्वी भी माता है - माता की माता आद्यमाता है। इसी कारण प्रातः उठते ही हम धरती पर पैर रखने के पहले उससे क्षमा याचना करते हैं -

समुद्र वसने देवी पर्वत स्तन मण्डले।
विष्णु पत्नी नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्व मे।

जो माता हमारा पोषण करती है उसे शुद्ध पवित्र व स्वस्थ रखना हम सभी का पावन कर्तव्य है। पृथ्वी पर जो जैव - वैविध्य (Bio - diversity) है उसकी उसी रूप में रक्षा करनी होगी। हमारे प्राचीन वन प्रदेश अनेक औषधियों के भंडार हैं, वे जल के आगार हैं, नदियों के उद्गम स्थल हैं, पृथ्वी माता के हरित आवरण हैं। हमें इनकी रक्षा करनी होगी। मानव के क्रिया कलापों के दुष्परिणामों के रूप में प्रतिवर्ष पेड़ -पौधों व पशु - पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ सदा के लिए समाप्त होती जा रही हैं। ग्लोबल वार्मिंग के कारण धरती का तापमान प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है। वर्षा कम और अनियमित होती जा रही है। सूखे की चपेट में विशाल भू-भाग आते जा रहे हैं, जल स्रोत सूख रहे हैं। घास - चारा तक मिलना भी दूभर होता जा रहा है। पशु - पक्षी भूख प्यास से मर रहे हैं। रेगिस्तान का विस्तार हो

रहा है। प्राणियों के प्राकृतिक आवास लुप्त होते जा रहे हैं। नमी के अभाव में मृत धरती का विस्तार चिंता का विषय बनता जा रहा है मेंढक, केंचुए, गौरैया आदि अदृश्य होते जा रहे हैं। मानवीय गतिविधियों से प्राकृतिक संसाधनों पर बहुत ज़्यादा दबाव पड़ रहा है। अगर यही रफ़्तार रही तो आने वाली पीढ़ियों को देने के लिए इस धरती पर कुछ नहीं बचेगा। अपनी धरती को बचाए रखने की एक पुकार हमें प्रस्तुत कविता में सुनाई देती है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

धरती की महिमा, विवेक शून्य इंसान, पानी का संरक्षण, सामूहिक यज्ञ, हरित धरती

Discussion / चर्चा

नागार्जुन

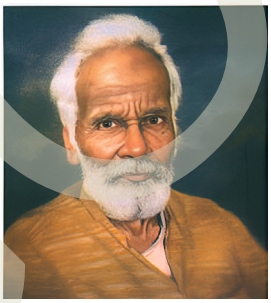

नागार्जुन का असली नाम वैद्यनाथ मिश्र है। वे एक प्रतिभा संपन्न कवि, सफल पत्रकार, उपन्यासकार और समीक्षक हैं। इनका जन्म दरभंगा बिहार में हुआ था। काशी विश्वविद्यालय में व्याकरण का अध्ययन करने के बाद इन्होंने कोलकत्ता में साहित्य शास्त्र आचार्य तक संस्कृत का अध्ययन किया। सन् 1936 में श्रीलंका पहुंचे वहां बौद्ध धर्म की दीक्षा ली और अपना नाम नागार्जुन रखा। हिंदी साहित्य जगत में यह 'बाबा' नाम से विख्यात है तो मैथिली में 'यात्री' नाम से। इनका हिंदी और मैथिली भाषण पर समान अधिकार है। सहजता नागार्जुन के काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है। इनका काव्य लोक चेतना और यथा अनुभव से अनुप्राणित है प्रायः इन्होंने स्वाधीन भारत के शोषण किसान और निर्धन वर्ग की पीड़ाओं को अपनी कविताओं का विषय बनाया है। उनकी भाषा में सच्चाई और यथार्थ अनुभूति के साथ-साथ गहरे व्यंग हैं। वे यायावरी में राहुल सांकृत्यायन के समक्ष ठहरते हैं। अपने घुमक्कड़, फक्कड़पन और साहसिक क्रांतिकारी प्रवृत्तियों के कारण कबीर के निकट प्रतीत होने लगते हैं। नागार्जुन के साहित्य में आंचलिकता के साथ लोक - जीवन की विविध अनुभूतियाँ दिखलाई पड़ती हैं। उनकी कविताएँ इस बात का प्रमाण है कि जनता के साथ जीवित रहने

वाला कलाकार ही साहित्य में जीवित रहने का हकदार बनता है। नागार्जुन एक साथ कोमलता और कठोरता के कवि थे। उनके मन में एक ओर अत्याचार के प्रति हिंसा का भाव है तो दूसरी ओर पीड़ितों के प्रति असीम करुणा और सहानुभूति का भाव है। उन पर मार्क्सवाद, आर्य समाज, बौद्ध दर्शन, गाँधीवाद आदि देश-विदेश की विभिन्न विचारधाराओं का प्रभाव पड़ा लेकिन वे किसी वाद या विचारधारा में जकड़े हुए कवि नहीं थे।

नागार्जुन का व्यक्तित्व विविध मुखी तथा उनका साहित्य बहुआयामी है। नागार्जुन के माध्यम से समाज के उपेक्षित वर्ग किसान मजदूर रिक्शा चालक आदि को सशक्त प्रखर वाणी मिली है उनके साहित्य का केंद्र बहुदा साधारण लघु मानव रहा है उनके साहित्य में सामान्य जनजीवन वह लोक जीवन सदा संपर्क रहे नागार्जुन अपनी निर्भीक स्पष्ट वादित और तीव्र गहन व्यंग्यात्मकता के कारण हिंदी साहित्य में चित्र स्मरणीय रहेंगे।

नागार्जुन का रचना संसार

कविता-'चना जोर गरम', 'युगधारा', 'प्रेत का बयान', 'सतरंगी पंखों वाली', 'प्यासी पथराई आंखें', 'यह चुनाव का प्रसन्न', 'भस्म अंकुर', 'खिचड़ी विप्लव देखा हमने', 'तुमने कहा था', 'हजार बाहों वाली', 'पुरानी जूतियों का कोरस' आदि।

उपन्यास-'इमारतीय अग्रहरा जमानिया के बाबा', 'रतिनाथ की चाची', 'वरुण के बेट', 'हीरक जयंती'।

कहानी-'आसमान में चंदा तेरे'।

कविता - धरती

धरती धरती है
सचल अचल वस्तुओं की जननी
सर्व सहनशीला अन्नपूर्णा, वसुंधरा
स्तुति नहीं, श्रम-कठोर श्रम मांगती
चाहती आयी है सदा से धरती
कर्षण-विकर्षण-सिंचन-परिसिंचन
वपन-तपन-सेवा-सुश्रुषा
कर-चरण-तन का सचेतन संस्पर्श
मात्र सुलभ ममता
पित्र सुलभ परिपोषण
चाहती आयी है सदा से धरती
अविरल अविराम अनाविल स्नेह
सरस स्वादु बहुविधि रस भारित फल-फूल-अन्न
उपजाति आयी है जाने कब से
मृत्यु नहीं, जीवन का देती आये हैं सन्देश
झूमते लहराते धान के पौधे
नाश नहीं, निर्माण के प्रतीक हैं साक्षात
दिग्दिंगत फैले हरित-शाद्वल क्षेत्र
जिन्हें देख-देख अघाते नहीं नेत्र।
पौधों या पेड़ों में कभी नहीं फलीं हैं छुरियाँ
कंद की जड़ से कभी नहीं निकलता है विस्फोटक बम
चरकर घास गाय ने दूध के बदले दिया नहीं हलाहल
सोखकर धरती का रस ज़हर नहीं बरसता कभी भी बादल
निछावर हम इस पर

तुम्हारी नहीं, हमारी है धरती
सुनो हे वज्रपाणी युद्ध व्यसनी दानव
सुनो हे अशोभन अमंगल अघायु
तुम्हारा अपावन स्पर्श नहीं चाहती
अहल्या कल्याणी चिरकुमारी धरती
नज़र उठाओ, देखो उस ओर
कर्म मुखर श्रमशील उद्गम सुख-सुविधा के
वोल्गा और यांशी तटवर्ती इलाके
जहाँ कि निश्चिन्त निरान्तक निर्बाध
शत-सहस्त्र लक्ष-लक्ष वैज्ञानिक विश्वकर्मा
भट्टी गला-गला तोप -तीर-तलवार
बना रहे तन्मय हो नित नए औज़ार
उपज और निर्माण के साधन .....
ज्ञान, विज्ञान, मनोरंजन की सामग्री
प्रकृति-पराजय के उपादान .....
मनुज कुल-केतु

शब्दार्थ

कर्षण- traction

विकर्षण- Distraction

सिंचन- irrigation

परिसिंचन irrigation

अविरल- continuous

अशोभन- improper

अमंगल- Inauspicious

अघायु - तृप्त

तन्मय-तल्लीन, मग्न

केतु - ग्रह

निरान्तक -infinite

निर्बाध - free, बिना बाधा के

दिग्दिगंत-अनेक दिशाएँ और अनेक अंत, सब ओर

भावार्थ

- बहुत ही संवेदनात्मक रूप में धरती की महिमा का वर्णन

प्रस्तुत कविता में कवि ने धरती की महिमा का वर्णन बहुत ही संवेदनात्मक रूप में किया है। कवि कहते हैं कि धरती तो धरती है, पन्हाई गाय नहीं जो दूध देने के लिए तैयार हो जिससे बाल्टी भर दूध भर लिया जाय।

- पौधों या पेड़ों में छुरियाँ नहीं फलीं और कंद की जड़ से विस्फोटक बम नहीं निकला

कवि कहते हैं कि धरती घरती है कोई चावल या गेहूँ का ढेर नहीं कि मंडी में जाकर बेच दें क्योंकि धरती हमारी माँ है। उसी पर हम जन्म लेते हैं और बड़े होते हैं। कवि आगे कहते हैं कि यह धरती तो सिर्फ कठोर श्रम मांगती है। इस श्रम के फलस्वरूप हमें स्वादिष्ट फल, फूल, और अन्न प्राप्त होता है। कवि व्यंग्य करते हैं कि यहाँ धरती पर पौधों या पेड़ों में छुरियाँ नहीं फलीं। कंद की जड़ से कभी भी विस्फोटक बम नहीं निकला। यह तो इंसानों की फ़ितरत है कि उसने हिंसा के सभी साधन बनाये और वह उनका उपयोग भी बख़ूबी कर रहा है।

- इंसान सृष्टि का सबसे बड़ा बुद्धिजीवी है

कवि कहते हैं कि इसी प्रकार घास खा कर किसी गाय ने दूध के बदले विष नहीं दिया। धरती का रस सोख कर बादल ने ज़हर नहीं बरसाया। इतनी बड़ी बात कह दी कवि ने फिर भी इंसान इसे ना समझे तो कितना विवेक शून्य है वह। गाय तो जानवर है फिर भी वह विषैला दूध नहीं देती। आकाश जो पृथ्वी से पानी ग्रहण करता है तो बारिश के रूप में धरती को हरा - भरा भी करता है लेकिन इंसान तो सृष्टि का सबसे

बड़ा बुद्धिजीवी है फिर भी वह इतनी सी बात नहीं समझता कि प्रकृति से, अपनी धरती माँ से वह सिर्फ़ उतना ही ले जितनी उसे ज़रूरत है।

जितना जल वह भूमि के अंदर से अपनी ज़रूरत के लिए ले उसे बारिश के पानी के संरक्षण के रूप में ही सही पृथ्वी को लौटाये तो सही। वनों की कटाई रोके, वृक्षारोपण करें। जब हम किसी से कुछ लेते हैं और बिना कुछ दिए लगातार लेते ही रहे तो क्या हमारे स्वाभिमान को ठेस नहीं पहुँचती? प्रकृति और प्रकृति के सभी घटक हम पर कितना उपकार करते हैं। प्रकृति हमें जीवन देती है प्राण वायु देती है, पीने को पानी देती है। धरती से उगा हुआ अन्न, फल, सब्जियाँ, क्या कुछ नहीं देती प्रकृति? प्रकृति और प्रकृति के सभी घटक हम पर कितना उपकार करते हैं। बदले में हम उसे क्या देते हैं? फैक्ट्री से निकलने वाला काला धुआँ, मलवा, दूषित रसायन? और तो और गंदा नाला नदियों में बहा कर कल - कल कर बहती जीवन दायिनी नदियों के प्राण सोख लिए। आज मानव इतना क्रूर क्यों हो गया है आख़िर क्या बिगाड़ा है उसकी प्रकृति ने? ऐसे विकास से तो हम पहले ही भले थे जब जंगलों में रहा करते थे। प्रकृति की गोद में सोते और जागते थे।

- प्रकृति हमें जीवन देती है प्राण वायु देती है, पीने को पानी देती है।

इस कविता के पाठ से हमें ये प्रेरणा मिलती है कि हमें ये बिल्कुल भी नहीं सोचना है कि इतनी ज़मीन बेच देंगे तो इतना पैसा मिलेगा। इतनी मिट्टी बेचेंगे तो इतना लाभ होगा। पैसे का लोभी इंसान अपने हिस्से की भूमि पर सिर्फ़ और सिर्फ़ अपना ही अधिकार समझता है। वह यह सोचने की ज़रूरत भी नहीं समझता कि उसे मिट्टी से जुड़े हुए अन्य जीव - जंतु, पक्षी, पेड़, पौधे, तितलियाँ केंचुए, चींटी और न जाने कितने ही सूक्ष्म जीवों के वास स्थान को वह सिर्फ़ अपने स्वार्थ के लिए उजाड़ रहा है। ज़मीन और मिट्टी बेचकर वह ख़ुद 'बड़ा सेठ' बन रहा है।

- लोभी इंसान मिट्टी से जुड़े हुए अन्य जीव - जंतुओं के बारे में नहीं सोचता

आज धरती को बचाना सबसे बड़ी चुनौती है। यह तो एक सामूहिक यज्ञ है इस महान अनुष्ठान में हम सभी को अपनी भागीदारी सुनिश्चित करनी है। इस भगीरथ प्रयत्न में बच्चे, बूढ़े, स्त्री, पुरुष सभी मिलकर अपना हाथ बटाएँ तो पृथ्वी फिर से 'सुजलां सुफलां सस्य श्यामलां' हो जाएगी। हमारी धरती हरित चुनरिया ओढ़े खड़ी होगी, जहाँ रंग-बिरंगे फूल, सतरंगे रंगों वाली तितलियाँ, भँवरों का गान, नदियों का संगीत, पक्षियों का कलरव, नाना प्रकार के जीव - जंतु और हम सभी मनुष्य आनंद से रहेंगे।

- हम सब मिलकर धरती को बचाना चाहिए और प्यार करना चाहिए।

अस्तु प्रस्तुत कविता हमें हमारी धरती के क़रीब ले जाती है, उसे प्यार करना सिखाती है। हम अपनी धरती की बलैया लेते हैं उसे तो युगों- युगों तक बने रहना है सृष्टि के समस्त जीव - जंतुओं का सुंदर वास स्थान बनकर . . . . .।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस कविता में नागार्जुन ने धरती को एक माँ के रूप में प्रस्तुत किया है, जो निस्वार्थ भाव से हमें अन्न, जल, फल और जीवन देती है। कवि बताते हैं कि धरती कोई वस्तु नही है जिसे बेचा या खरीदा जाए, बल्कि यह हमारे जीवन का आधार है। वह इससे केवल मेहनत और सच्चे श्रम की उपेक्षा करती है, लेकिन हम मनुष्य अपने स्वार्थ केलिए इसका शोषण करते हैं। कविता में यह स्पष्ट किया गया है कि प्रकृति कभी किसी को नुकयान नहीं पहुँचाति, जवकि मनुष्य ने ही हिंसा, प्रदूषण और विनाश के साधन बनाए हैं। कवि ने व्यंग्य के माध्यम से बताया है कि जानवर और पेड-पौधे भी संतुलन बनाए रखते हैं, लेकिन सबसे बुद्धिमान प्राणी कहे जानेवाला इंसान री सबसे अधिक प्रकृति के नुकसान पहूँचाता है। यह कवितामें प्रकृति की महत्वा को समझने और संरक्षण का सेंकल्प लेने केलिए प्रेरित करती है। यह संदेश देती है कि हमें धरती से सिर्फ लेना नहीं, बल्कि उसे सहेजना और लौट ाना भी सीखना चाहिए. कुल मिलाकर यह कविता हमें हमारी धरती से जुडने, उसे समझने और उसकी रक्षा करने केलिए प्रेरणा देती है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. विस्थापन कविता का भावार्थ लिखिए।
2. स्वप्निल श्रीवास्तव के व्यक्तित्व कृतित्व का परिचय दीजिए।
3. विस्थापन कविता में अभिव्यक्त संवेदना को व्यक्त कीजिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. पर्यावरण और हम- सुखदेव प्रसाद।
2. पर्यावरणीय अध्ययन - के के सक्सेना।
3. प्राकृतिक पर्यावरण और मानव - सुदर्शन भाटिया।
4. जीवन संपदा और पर्यावरण - अनुपम मिश्रा
5. पर्यावरण और समकालीन हिंदी साहित्य - डॉ. प्रभाकर हेब्बार इल्लत।
6. पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति - गोविंद चातक
7. पर्यावरण प्रदूषण - मनोज कुमार
8. पर्यावरणीय समस्याएं एवं निदान - शील कुमार

अन्तर्जाल सन्दर्भ-

1. www. Shodhbraham.com
2. www.youtube.com/ shodhGuru

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. पारिस्थितिक पाठ और हिन्दी साहित्य - डॉ सुमा एस. ' डॉ. एस आर जयश्री।
2. समकालीन हिंदी कविता : दशा और दिशा-डॉ. पशुपति नाथ उपाध्याय
3. www. Shodhbraham.com
4. www.youtube.com/ shodhGuru

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

MODEL QUESTION PAPER SETS

SGOU

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

QP CODE: ………

Reg. No : ………...............
Name: …......……………...

FIFTH SEMESTER MA HINDI LANGUAGE AND LITERATURE EXAMINATION

DISCIPLINE SPECIFIC ELECTIVE

M23HD01DE - पारिस्थितिक विमर्श

(CBCS - PG)

MODEL QUESTION PAPER SET -A

2021-23 - Admission Onwards

Time: 3 Hours | Max Marks: 70

SECTION A

I. **किन्हीं पाँच प्रश्नों का उत्तर दो या दो से अधिक वाक्यों में लिखिए।** **(5×2=10)**

1. प्रकृति संरक्षण के प्रति प्रतिबद्ध कवियों के नाम लिखिए।
2. प्रकृति के जल स्त्रोतों को बचाने के क्या-क्या उपाय हैं?
3. कवि नागार्जुन।
4. गहन पारिस्थितिकीवाद के समर्थकों के नाम लिखिए।
5. पारिस्थितिक स्त्रीवादी रचनाकारों के नाम लिखिए।
6. समकालीन कविता का काव्य पक्ष।
7. काशीनाथ सिंह और जंगल जातकम।
8. समकालीन कहानिकारों की कहानियों में व्यक्त पर्यावरणीय चिंतन।

SECTION B

II. **किन्हीं छः प्रश्नों का उत्तर एक पृष्ठ के अन्दर लिखिए।** **(6×5=30)**

9. अरुण कमल के व्यक्तित्व, कृतित्व पर लेख लिखिए।
10. विश्व भर में बढ़ते जा रहे जल संकट पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
11. धरती कविता में अभिव्यक्त संवेदना पर विचार कीजिए।
12. रोहिणी अग्रवाल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर लेख लिखिए।

13. काशीनाथ सिंह के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर टिप्पणी लिखिए।

14. प्यासा कुआँ कविता की पारिस्थितिक संवेदना।

15. उतनी दूर मन व्याह न बाबा' कविता का सारांश लिखिए।

16. विस्थापन कविता में चित्रित विषयवस्तु पर चर्चा कीजिए।

17. पारिस्थितिकी स्त्रीवादी रचनाकारों के नाम लिखिए।

18. सामाजिक परिस्थितिवाद पर निबंध लिखिए।

SECTION C

III. किन्हीं दो प्रश्नों का उत्तर लिखिए। **(2×15=30)**

19. संथाली संस्कृति के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

20. डूब उपन्यास में पारिस्थितिक विमर्श विषय पर चर्चा कीजिए।

21. समकालीन कविता में अभिव्यक्त पर्यावरण चिंतन पर एक लेख लिखिए।

22. रोहिणी अग्रवाल के 'समकालीन हिन्दी उपन्यास और पारिस्थितिक संकट' लेख में चित्रित विषयों पर चर्चा कीजिए।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

QP CODE: ………

Reg. No : ………...............
Name: …......……………...

FIFTH SEMESTER MA HINDI LANGUAGE AND LITERATURE EXAMINATION
DISCIPLINE SPECIFIC ELECTIVE

M23HD01DE - पारिस्थितिक विमर्श

(CBCS - PG)

MODEL QUESTION PAPER SET -B

2021-23 - Admission Onwards

Time: 3 Hours Max Marks: 70

SECTION A

I. किन्हीं पाँच प्रश्नों का उत्तर दो या दो से अधिक वाक्यों में लिखिए। **(5×2=10)**

1. 'गंगा को प्यार' कविता में व्यक्त पारिस्थितिक संवेदना
2. निर्मला पुतुल की रचना संसार।
3. पारिस्थितिक दर्शन की चार शाखाओं के नाम लिखिए।
4. इको-फेमिनिज़म से आप क्या जानते हैं?
5. हिन्दी साहित्य में पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं के बारे में टिप्पणी लिखिए।
6. पर्यावरण नैतिकता बोध से क्या तात्पर्य है?
7. कवि अरुण कमल।
8. समकालीन कविता का काव्य पक्ष।

SECTION B

II. किन्हीं छः प्रश्नों का उत्तर एक पृष्ठ के अन्दर लिखिए। **(6×5=30)**

9. समकालीन कविता में अभिव्यक्त पर्यावरण चिंतन के बारे में टिप्पणी लिखिए।
10. 'विस्थापन' कविता का भावार्थ लिखिए।
11. भौम सदाचार पर टिप्पणी लिखिए।
12. हिन्दी उपन्यासों में चित्रित पारिस्थितिक विमर्श।

13. 'पानी की प्रार्थना' कविता का सारांश।

14. कवि ज्ञानेंद्रपति के व्यक्तित्व एवं कृतित्व।

15. 'उतनी दूर मत ब्याह न बाबा' कविता की संवेदना को व्यक्त कीजिए।

16. 'धरती' कविता का सारांश लिखिए।

17. शोषण का प्रतिरोध करने की चेतना पर लघु लेख लिखिए।

18. इको मार्क्सवाद के समर्थकों के नाम लिखिए।

SECTION C

III. किन्हीं दो प्रश्नों का उत्तर लिखिए। **(2×15=30)**

19. साहित्य में पारिस्थितिक चिंतन के उद्भव एवं विकास पर प्रकाश डालिए।

20. समकालीन हिन्दी कहानियों में पारिस्थितिकी के स्वरूप को समझाइए।

21. समकालीन कविता में अभिव्यक्त पारिस्थितिक सौंदर्य पर अपना विचार प्रकट कीजिए।

22. समकालीन हिन्दी उपन्यास और पारिस्थितिकीय संकट के बारे में रोहिणी अग्रवाल के मत पर विचार कीजिए।

NO TO DRUGS തിരിച്ചിറങ്ങാൻ പ്രയാസമാണ്

ആരോഗ്യ കുടുംബക്ഷേമ വകുപ്പ്, കേരള സർക്കാർ

സർവ്വകലാശാലാഗീതം

വിദ്യയാൽ സ്വതന്ത്രരാകണം
വിശ്വപൗരരായി മാറണം
ഗ്രഹപ്രസാദമായ് വിളങ്ങണം
ഗുരുപ്രകാശമേ നയിക്കണേ

കൂരിരുട്ടിൽ നിന്നു ഞങ്ങളെ
സൂര്യവീഥിയിൽ തെളിക്കണം
സ്നേഹദീപ്തിയായ് വിളങ്ങണം
നീതിവൈജയന്തി പാറണം

ശാസ്ത്രവ്യാപ്തിയെന്നുമേകണം
ജാതിഭേദമാകെ മാറണം
ബോധരശ്മിയിൽ തിളങ്ങുവാൻ
ജ്ഞാനകേന്ദ്രമേ ജ്വലിക്കണേ

കുരീപ്പുഴ ശ്രീകുമാർ

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Regional Centres

Kozhikode
Govt. Arts and Science College
Meenchantha, Kozhikode,
Kerala, Pin: 673002
Ph: 04952920228
email: rckdirector@sgou.ac.in

Thalassery
Govt. Brennen College
Dharmadam, Thalassery,
Kannur, Pin: 670106
Ph: 04902990494
email: rctdirector@sgou.ac.in

Tripunithura
Govt. College
Tripunithura, Ernakulam,
Kerala, Pin: 682301
Ph: 04842927436
email: rcedirector@sgou.ac.in

Pattambi
Sree Neelakanta Govt. Sanskrit College
Pattambi, Palakkad,
Kerala, Pin: 679303
Ph: 04662912009
email: rcpdirector@sgou.ac.in

पारिस्थितिक विमर्श

Course Code: M23HD01DE

SGOU

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

ISBN 978-81-985080-2-7

Sreenarayanaguru Open University
Kollam, Kerala Pin- 691601, email: info@sgou.ac.in, www.sgou.ac.in Ph: +91 474 2966841